कर्मविपाकसंहिता

(भाषा टीका सहित)



अनुवादक

पण्डित शिवगोविन्द दीक्षित सामवेदी

मुकाम बड़ौरा, जिला उन्नाव



प्रकाशक

तेजकुमार बुकडिपो (प्रा०) लि० लखनऊ

उत्तराधिकारी—नवलकिशोर बुकडिपो, लखनऊ

सन् १९८३ ई०

षष्ठमबार ३०००]

भूमिका

हे महाशय ! मेरी यह प्रार्थना है कि आप लोग इस संसार में सब मनुष्यों को देखते हैं कि एक पैदा होकर सुख भोगता है, दूसरा दुःख भोगता है, तीसरा कुछ काल तक सुख भोगकर पीछे दुःख भोगता है और चौथा दुःख भोगकर पीछे सुख भोगता है। इसी तरह से नाना प्रकार के मनुष्यों को जो क्लेश होता है, वह पूर्वजन्म के पाप से होता है। इसका प्रायश्चित्त कराने से—जप, तप, व्रत, दान और होम कराने से, सब पूर्वजन्म के पाप छूट जाते हैं। अपने पूर्वजन्म में जो जिस तरह पुण्य-पाप करता है वह उसके फल को भोगता है। कर्म ही प्रधान होता है।

इसी से आनन्दकन्द परमानन्द व्रजचन्द श्रीकृष्णचन्द्रजी ने गोवर्धन पूजा के विषय में पिता नन्दजी से कहा है कि :—

कर्मणा जायते जन्तुः कर्मणैव विलीयते ।
सुखं दुःखं भयं क्षेमं कर्मणैवानिपद्यते ।।

भा० द०

कर्म से प्राणी पैदा होता है और कर्म से ही नष्ट हो जाता है। सुख, दुःख, भय और क्षेम ये कर्म ही से प्राप्त होते हैं। इसलिए कर्मविपाक की संहिता कही गई है। इसमें १०८ अध्याय हैं। ये १०८ कानून हैं। इनके खिलाफ जो कर्म करेगा अथवा जिसने किया है वही अपराधी होगा। यह कर्मविपाक संहिता धर्मराज के अधीन है, जिसका प्रकाश चित्रगुप्त करते हैं। यह मृत्युलोक है, इसमें भारतवर्ष कर्मक्षेत्र है। इसमें जैसा मनुष्य कर्मरूप खेती करेगा वैसा ही यहाँ पर भोग करेगा। इस वैदिक और पौराणिक कर्मविपाक को सज्जनों के उपकारार्थ प्रकाशित किया है।

इसके मूल श्लोक अच्छी तरह से हिन्दी-भाषा में सरल किये गये हैं, इसके देखने से पूरा-पूरा भावार्थ समझ में आ सकता है। और विद्वज्जनों के देखने योग्य मूल भी शुद्ध किया गया है। यदि कहीं दृष्टिचूक से रह गया हो उसे विद्वज्जन क्षमा करें।

इति शिवम्।

भवदीय—

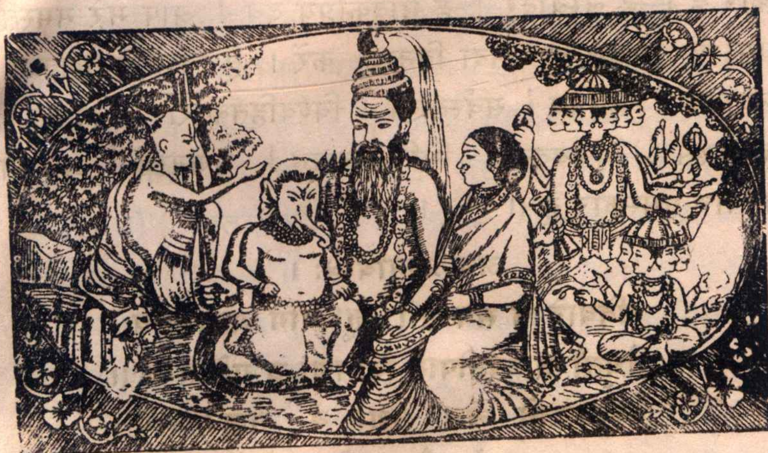
शिवगोविन्द दीक्षित सामवेदी।

कर्मविपाकसंहितायाः

विषयानुक्रमणिका

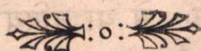
इति ।

—:०:—



अथ

कर्मविपाकसंहिता



प्रथमोऽध्यायः

मङ्गलाचरणम्

नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः ।
नमस्ते रुद्ररूपाय नमस्ते विश्वरूपिणे ॥
लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय ।
अविघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥
विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते ॥ १-३ ॥

हे भगवन् ! ब्रह्मरूप (सृष्टिकारी), विष्णुरूप (पालनकारी), रुद्ररूप (प्रलयकारी), विश्वरूप (चराचरात्मक) आपको नम-

स्कार है। हे लम्बोदर ! हे मोदकप्रिय देव ! आप मेरे समस्त कार्यों में विघ्नों का सदा विनाश करें। हे विघ्नविनाशक ! वरदायक ! देवप्रिय ! सर्वस्वरूप ! विश्वहितकारी ! वेदरूप ! यज्ञस्वरूप ! गजवदन ! गिरिजानन्दन ! गणनाथ ! आपको वारंवार नमस्कार है ॥ १-३ ॥

अथ प्रश्नविधिः ।

रविवारे च संक्रान्तौ शुभयोगे यथाविधि ।
वैधृतौ च व्यतीपाते विप्राणां च गृहे तथा ॥
देवतायतने चैव नद्यां वै सङ्गमोत्तमे ।
अथवा स्वगृहे चैव शुभे स्थाने विशेषतः ॥ ४-५ ॥

अब प्रश्नविधि कहते हैं—रविवार को या संक्रान्ति के दिन, किसी शुभयोग अथवा व्यतीपात या वैधृतियोग में, ब्राह्मण के घर पर अथवा देवस्थान में या नदियों के सङ्गम पर, अपने घर में अथवा किसी पवित्र स्थान में पूर्वजन्मविषयक प्रश्न करना चाहिए ॥ ४-५ ॥

स्नानं समाचरेद्रोगी मृतपुत्रः सपुत्रकः ।
कर्मणा पीडितो योऽसौ नारी वा पुरुषोऽथवा ॥
धात्रीफलानि लोध्रञ्च गोमयं तिलसर्षपान् ।
मृत्तिकाः[1] सप्त कर्पूरमुशीरं मुस्तसंयुतम् ॥
औषधैः समभागैस्तु स्नानं कुर्यात्प्रयत्नतः ।
देवान्पितॄंश्च संतर्प्य दत्त्वा सूर्यार्घ्यमेव[2] च ॥
एवं सर्वविधिं कृत्वा संकल्पं कारयेत्ततः ॥ ६-८ ॥

---

१. सात स्थानों के नाम ये हैं—
अश्वस्थानाद्गजस्थानाद्वल्मीकात्संगमाद्ध्रदात् ।
राजद्वाराच्च गोष्ठाच्च मृदमानीय निक्षिपेत् ॥

२. एहि सूर्य सहस्रांशो तेजोराशे जगत्पते । अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर ॥
इस मंत्र को पढ़कर, एक लोटा जल भूमि पर छोड़ दे ।

अपने पूर्वजन्म के पापों से पीड़ित पुरुष, स्त्री, रोगीजन, पुत्रवाला, मृतपुत्रवाला पहले नीचे लिखी औषधों के समभाग मिले जल से स्नान करे। आँवला, लोध, गोबर, तिल, सरसों, सात स्थानों की मिट्टी, कपूर, खस और नागरमोथा। फिर देवता और पितरों का तर्पण करके सूर्य को अर्घ्य देवे और संकल्प करे ॥ ६-८ ॥

अद्येत्यादिप्राचीनसंचितकर्मविलोकनार्थं मनःकामनासिद्ध्यर्थं शिवपूजनपूर्वकं कर्मविपाकपुस्तकपूजनमहं करिष्ये ॥

अङ्गन्यासपूर्वकं षोडशोपचारपूजासंकल्पः वैश्वदेवं श्राद्धं च। अत्रान्तरे देहशुद्ध्यर्थं पुरश्चरणाङ्गत्वेन गोमिथुनदानं कुम्भदानं च प्रजापतिसंतुष्टये षोडश ब्राह्मणान्भोजयेत्। भोजनानन्तरं प्रार्थनाऽऽचार्यस्य ॥

अब अङ्गन्यास, करन्यास, ध्यान, षोडशोपचार वा पंचोपचार का संकल्प करे, फिर बलिवैश्वदेव और श्राद्ध करे, इसके पीछे देह की शुद्धि के अर्थ पुरश्चरण के अङ्ग गोमिथुन का दान, कुंभों का दान, प्रजापति की प्रसन्नता के लिये सोलह ब्राह्मणों को भोजन करावे, फिर भोजन के पीछे दक्षिणा को देकर आचार्य की प्रार्थना करे।

ब्राह्मण त्वं महाभाग भूमिदेव द्विजोत्तम।
यथाविधं प्रतिज्ञाय प्राचीनं च शुभाशुभम् ॥
कथं मे कथयस्वाशु कृपां कृत्वा ममोपरि।
एवं तु ब्राह्मणाचार्यं नमस्कृत्य प्रसादयेत् ॥ ९-१० ॥

हे पूज्य ब्राह्मणाचार्य! आप मेरे शुभ या अशुभ पूर्वजन्म के कर्मों को ठीक विचारकर कृपा करके कहिए ॥ ९-१० ॥

दश पञ्च तथा विप्रानुपवेश्य प्रयत्नतः।
तेषामनुज्ञया सर्वं प्रायश्चित्तमुपक्रमेत् ॥ ११ ॥

इस प्रकार दश या पाँच ब्राह्मणों को विधिपूर्वक बैठाकर उन की आज्ञा से अपने प्रायश्चित्त करावे ॥ ११ ॥

वस्त्रालङ्करणैराचार्यं पूजयित्वा प्रजापतिस्वरूपं गुरुं प्रार्थयेत् ।

प्रजापते महाबाहो वेदवेदाङ्गपारग ।
पुत्रकामसमृद्ध्यर्थं पूजां गृह्णीष्व ते नमः ॥ १२ ॥

आचार्य को वस्त्र, आभूषण देकर और पञ्चोपचार से पूजन करके प्रजापतिरूप गुरु की प्रार्थना करे—

हे प्रजापते ! हे महाभुजावाले ! हे वेदवेदाङ्ग के जाननेवाले ! पुत्र की कामना सिद्ध होने के लिये मेरे किये हुए पूजन को आप स्वीकार करें, आपको मेरा प्रणाम है ॥ १२ ॥

विष्णो त्वं पुण्डरीकाक्ष भुवनानां च पालकः ।
लक्ष्म्या सह हृषीकेश पूजां गृह्णीष्व ते नमः ॥ १३ ॥

हे विष्णो ! हे पुंडरीकाक्ष ! हे हृषीकेश ! आप तीनों भुवनों के पालनकर्त्ता हैं, आप लक्ष्मीसहित मेरी पूजा स्वीकार करें, आपको मेरा प्रणाम है ॥ १३ ॥

रुद्र त्वं दैन्यनाशाय सदा भस्माङ्गधारकः ।
नागहारोपवीती च पूजां गृह्णीष्व ते नमः ॥ १४ ॥

हे रुद्र ! आप संसार के दुःखों को दूर करने में समर्थ हैं, आप सदा अङ्ग में भस्म और सर्प के यज्ञोपवीत को धारण करते हैं, मेरी पूजा ग्रहण करें, आपको मेरा प्रणाम है ॥ १४ ॥

स्वर्गे सुराश्च गन्धर्वाः पाताले पन्नगादयः ।
मृत्युलोके मनुष्याश्च सर्वे ध्यायन्ति भास्करम् ॥ १५ ॥

स्वर्ग में देवता और गंधर्व, पाताल में सर्पादिक, और मृत्युलोक में मनुष्य ये सब सूर्य का ध्यान करते हैं ॥ १५ ॥

महायज्ञादिकं चैव अग्निहोत्रादिकर्म च।
तीर्थस्नानं तथा ध्यानं वर्तते भास्करोदयात् ॥ १६ ॥

महायज्ञादिक, अग्निहोत्रादिक कर्म, तीर्थस्नान और देवताओं का ध्यान यह सब सूर्य भगवान् के उदय होने पर होता है ॥ १६ ॥

ब्रह्मा विष्णुः शिवः शक्तिर्देवदेवो मुनीश्वराः।
ध्यायन्ति भास्करं देवं साक्षीभूतं जगत्त्रये ॥ १७ ॥

उत्तम, मध्यम, अधम, तीन प्रकार के जगत् के साक्षीरूप, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, देवी, देवताओं के देव इन्द्र और मुनीश्वर यह सब सूर्य का ध्यान करते हैं ॥ १७ ॥

त्वं ब्रह्मा त्वं च वै विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वं प्रजापतिः।
त्वमग्निस्त्वं वषट्कारस्त्वामाहुः सर्वसाक्षिणम् ॥ १८ ॥

आप ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, प्रजापति, अग्नि और वषट्कार-स्वरूप हैं, आप सम्पूर्ण जगत् के कर्मों के साक्षी कहलाते हैं ॥ १८ ॥

योगिनां प्रथमो ध्येयो यतीनां ब्रह्मचारिणाम्।
आधिव्याध्योश्च कर्त्ता त्वं सर्वपापक्षयं कुरु ॥ १९ ॥

योगी, यति, ब्रह्मचारी आदि सब आपका ध्यान करते हैं और आप आधि (मन की पीड़ा) और व्याधि (रोग) के करनेवाले हैं, आप मेरे पाप को भस्म करें ॥ १९ ॥

दीनानां कृपणानाञ्च सर्वेषां व्याधिनाशनम्।
एवं च भास्करं ध्यात्वा नमस्कृत्य प्रसादयेत् ॥ २० ॥

इस प्रकार दीन, कृपण और सबकी व्याधियों को नाश करने वाले सूर्य का ध्यान करके प्रणाम द्वारा प्रसन्न करना चाहिए ॥ २० ॥

अथ पृच्छकप्रार्थना—

पापी चैव दुराचारी परनिन्दापरो जनः।
ब्रह्महा हेमहारी च सुरापो गुरुतल्पगः॥
स्त्रीहन्ता बालघाती च अगम्यागमनं तथा।
एवमादिकपापानि मया वै पूर्वजन्मनि॥
कृतानि विविधान्येव सर्वाणि मार्ष्टुमर्हसि।
शरणं तव संप्राप्तस्त्वं मामुद्धर्तुमर्हसि॥ २१-२३॥

अब प्रश्नकर्ता प्रार्थना करे—पापी, कुकर्मी, निन्दक, ब्रह्मघाती, स्वर्णचोर, मद्यप, गुरुस्त्रीगामी, स्त्रीघातक, बालघातक और परस्त्रीगामी आदि बहुत प्रकार के पूर्वजन्म के जो पापी हैं मैं भी वैसा ही हूँ। मैं आपकी शरण में आया हूँ, आप मेरा उद्धार करने के योग्य हैं॥ २१-२३॥

ममोपरि कृपां कृत्वा कर्म मे कथय प्रभो।
लग्नं तात्कालिकं कृत्वा जन्मपत्रं निरीक्ष्य च॥
लग्नं ग्रहविचारेण ज्ञातव्यं कर्म मामकम्।
ग्रहलग्नविचारेण कर्म जानन्ति पण्डिताः॥ २४-२५॥

हे प्रभो! आप मेरे ऊपर प्रसन्न होकर मेरे पूर्वजन्म के कर्मों को कहें। लग्न और ग्रहों के विचार से पूर्वजन्म के कर्मों को विद्वान् जान लेते हैं। इसलिए जन्मकुंडली की छान-बीन करके मेरा शुभाशुभ फल कहें॥ २४-२५॥

सूत उवाच।

कैलासशिखरे रम्ये सुखासीनं महेश्वरम्।
प्रणम्य पार्वती भक्त्या पप्रच्छ च सदाशिवम्॥ २६॥

सूत पौराणिक कहते हैं—कैलास के सुन्दर शिखर पर सुख से बैठे हुए शिव को पार्वती ने भक्ति से प्रणाम करके सदा कल्याण के लिए शिव से यह प्रश्न पूछा॥ २६॥

पार्वत्युवाच ।

देवदेव जगन्नाथ भक्तानुग्रहकारक ।
लोकोपकारकं प्रश्नं वद मे परमेश्वर ॥ २७ ॥

पार्वती पूछती हैं—हे देवदेव ! हे जगन्नाथ ! हे सब भक्तों पर कृपा करनेवाले ! लोक के उपकार करनेवाले मेरे प्रश्न का उत्तर कहो ॥ २७ ॥

कलौ च मानवास्तुच्छा पापमोहसमन्विताः ।
महामोहग्रहग्रस्ताः पुत्रकन्याविवर्जिताः ॥
कुत्सिता रूपविभ्रष्टा मृतवत्सा नपुंसकाः ।
नारीणां पुरुषाणां च पूर्वकर्म च यत्प्रभो ॥
तत्सर्वं वद मे स्वामिन् सर्वज्ञोऽसि मतो मम ।
तच्च श्रुत्वा वचो देव्याः प्रीतिमान् स महेश्वरः ॥
प्रहस्य जगतामीशो वल्लभां प्रीतिसंयुताम् ।
उवाच प्रश्नं तद्गूढं त्रैलोक्ये चापि दुर्लभम् ॥ २८-३१ ॥

कलियुग के मनुष्य बुद्धिहीन हैं, पाप और मोह से युक्त हैं, महा रोग और ग्रहों से पीड़ित एवं पुत्र कन्या से वर्जित, अधम, कुरूप, मृतसन्तान और नपुंसक हैं। हे प्रभो ! स्त्री-पुरुषों के जो पूर्वजन्म के कर्म हैं उन सबको आप कहें। आप सर्वज्ञ हैं। यह पार्वती का वचन सुनकर शिव बहुत प्रसन्न हुए और हँसकर ऐसे गूढ़ प्रश्न का उत्तर देने लगे ॥ २८-३१ ॥

शिव उवाच ।

शृणु त्वं गिरिजे देवि नृणां कर्म विशेषतः ।
कथयामि न सन्देहो यत्ते मनसि वर्तते ॥ ३२ ॥

शिव कहते हैं—हे पार्वती देवि ! मनुष्यों के पूर्वजन्म के कर्मों को विशेषरूप से कहता हूँ, सुनो ॥ ३२ ॥

मर्त्याः सर्वे जगज्जाताः कर्म कुर्वन्ति सर्वदा ।
स्वकर्माणि ततो देवि भुज्यन्ते देवमानुषैः ॥ ३३ ॥

हे देवि ! जगत् में उत्पन्न सब प्राणी सदा कर्म को किया करते हैं, इसलिए देवगण किंवा मनुष्य अपने ही कर्मों को भोगते हैं ॥ ३३ ॥

पुण्यापुण्ये हि पुरुषः पर्यायेण समश्नुते ।
भुञ्जतश्च क्षयं याति पापं पुण्यमथापि वा ॥ ३४ ॥

पुण्य और पाप दोनों मनुष्यों को क्रम से अवश्य भोगना पड़ता है । और भोग करने से पाप या पुण्य भी कट ही जाते हैं ॥ ३४ ॥

न तु भोगादृते पुण्यं किंचिद्वा कर्म मानवम् ।
पावकं वा पुनात्याशु क्षयो भोगत्प्रजायते ॥ ३५ ॥

पाप या पुण्य का दुःख और सुख या कुछ कर्म भोग किये बिना मनुष्यों को छुट्टी नहीं मिलती है । यह बात जरूरी है कि भोग ही से पाप क्षय होता है ॥ ३५ ॥

परित्यजति भोगाच्च पुण्यापुण्ये निबोध मे ।
दुर्भिक्षादेव दुर्भिक्षं क्लेशात् क्लेशं भयाद्भयम् ॥ ३६ ॥

पापी पुरुष दुर्भिक्ष से दुर्भिक्ष और क्लेश से क्लेश और भय से भय पाता है । पुण्य भोगने से पुण्य और पाप भोगने से पाप छूट जाता है, यह समझना चाहिये ॥ ३६ ॥

मृतेभ्यः प्रमृता यान्ति दरिद्राः पापकर्मिणः ।
गतिं नानाविधां यान्ति जन्तवः कर्मबन्धनात् ॥ ३७ ॥

दरिद्री, पापकर्मी मनुष्य मरने पर भी मरता है और पाप कर्म के बन्धन से तरह-तरह की गति को जाता है ॥ ३७ ॥

उत्सवादुत्सवं यान्ति स्वर्गात्स्वर्गं सुखात्सुखम् ।
श्रद्दधानाश्च शान्ताश्च धनदाः शुभकारिणः ।। ३८ ।।

और जो मनुष्य श्रद्धायुक्त, शान्त, शुभकर्मी और धनद हैं, उनको शुभ से अति शुभ और उत्सव से अति उत्सव और स्वर्ग से स्वर्ग और सुख से सुख प्राप्त होता है ।। ३८ ।।

सुगन्धिमाल्यसद्वस्त्रसाधुपानासनाशनाः ।
स्तूयमानाः सदा यान्ति पुण्यैः पुण्याटवीष्वपि ।। ३९ ।।

जो पुण्यात्मा लोग हैं वे हमेशा सब लोगों से वन्दित और पूजित होकर सुगन्ध, माला और अच्छे वस्त्र व उत्तम पीने की वस्तु, अच्छे आसन और भोजन इत्यादि को अच्छी राह से अच्छे स्थान में जाकर भोग करते हैं ।। ३९ ।।

अनेकशतसाहस्रजन्मसंचयसंचितम् ।
पुण्यापुण्यं नृणां तद्वत् सुखदुःखांकुरोद्भवम् ।। ४० ।।

और सैकड़ों-हजारों जन्म का कमाया हुआ पुण्य और पाप उस कमानेवाले को सुख और दुःख देता है ।। ४० ।।

मानवैस्तु विशेषेण सुखदुःखादिकं च यत् ।
कमत्रयं च सर्वेषां तन्मध्ये संचितं च यत् ।। ४१ ।।
वक्तव्यं नात्र संदेहो यत्कृत्वा फलमाप्नुयात् ।
प्रारब्धं विस्तरं कर्म वर्तमानं च दृश्यते ।। ४२ ।।

सबके तीन प्रकार के कर्म हैं—प्रारब्ध, संचित, क्रियमाण, इनमें जो संचित कर्म हैं वह मुझको कहना है । इसमें सन्देह नहीं है । क्योंकि प्रारब्ध कर्म विस्तारवाला है और वर्तमान में दीखता ही है ।। ४१-४२ ।।

अश्विन्यादिकनक्षत्रे सर्वे जन्म जायते ।
तदापि पादभेदेन ज्ञातव्यं च शुभाशुभम् ।। ४३ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायांपूजनविधिर्नाम
प्रथमोऽध्यायः ।। १ ।।

अश्विनीआदि नक्षत्रों में संपूर्ण मनुष्यों का जन्म होता है। इनके प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ चरणों के भेद से शुभ-अशुभ कर्म का फल जानना चाहिये ॥ ४३ ॥

प्रथम अध्याय समाप्त।

—:o:—

अथ द्वितीयोऽध्यायः।

अश्विन्याः प्रथमे पादे यदा जन्म प्रजायते।
तदा ब्राह्मणवर्णोऽयं मध्यदेशसमुद्भवः ॥ १ ॥

अश्विनी के प्रथम चरण में जन्म हो तो यह कहना चाहिये कि पूर्वजन्म में मध्यदेश में ब्राह्मण के घर में जन्म पाया था ॥ १ ॥

द्वितीयचरणे देवि पुरा क्षत्री न चान्यथा।
अयोध्यापुरतः पूर्वं पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ २ ॥

हे देवि ! दूसरे चरण में जन्म हो तो यह कहना चाहिये कि वह पहिले जन्म में क्षत्रिय वर्ण था और अयोध्यापुरी से पूर्व का बसनेवाला था और पुत्र-कन्या से वर्जित था, अर्थात् उसके कोई भी सन्तान नहीं थी ॥ २ ॥

तृतीयचरणे देवि वैश्यवर्णसमुद्भवः।
रोगी कुत्सितवर्णोऽयं मृतवत्सो नपुंसकः ॥ ३ ॥

हे देवि ! तीसरे चरण में जन्म हो तो वैश्यवर्ण में उत्पत्ति जानना चाहिये। यह रोगी, नीच वर्णवाला और नपुंसक था, इसके सन्तान कोई नहीं जीती थी ॥ ३ ॥

चतुर्थचरणे देवि यदा भवति मानवः।
तदा शूद्रं विजानीयाद्रोगवान् मृतवत्सकः ॥
श्यामलः पुष्टदेहश्च कुष्ठरोगेण पीडितः ॥ ४ ॥

हे देवि ! जिस मनुष्य का चतुर्थ चरण में जन्म भया हो तो उसको शूद्र जानना चाहिये। उसको रोगी, श्यामवर्ण, पुष्ट शरीरवाला, और कुष्ठरोग से पीड़ित जानना चाहिए ॥ ४ ॥

इति अश्विनी नक्षत्रसामान्यफलम् ।

शिव उवाच ।

अथ कर्म प्रवक्ष्यामि यत्कृतं ब्राह्मणादिभिः ।
एको ब्राह्मणवेदज्ञो गुणरूपसमन्वितः ॥ १ ॥

शिव कहते हैं—ब्राह्मण आदि वर्णों ने जो कर्म किया है उसको कहते हैं। वेद को पढ़नेवाला गुण और रूप से युक्त एक ब्राह्मण था ॥ १ ॥

तस्या पत्नी विशालाक्षी पुंश्चली क्षत्रवंशजा ।
तस्यां पुत्रोऽभवद्देवि नाम्ना नरहरिस्तदा ॥ २ ॥

उसकी स्त्री विशालाक्षी नाम वाली जारिणी थी और क्षत्रिय वंश में उत्पन्न थी। उसके नरहरि नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ ॥ २ ॥

ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टो व्याधिभिः पीडितः सदा ।
तस्य मित्रो द्विजोऽप्येको धनपुत्रैश्च संयुतः ॥ ३ ॥

वह ब्राह्मणकर्म से भ्रष्ट और व्याधियों से सदा पीड़ित था। उसका मित्र एक ब्राह्मण धन और पुत्रों से युक्त था ॥ ३ ॥

नामतो लग्नशर्मेति निकटे तस्य चागतः ।
आदरं बहुधा कृत्वा स्वर्णं दृष्टवा प्रहर्षितः ॥ ४ ॥

उसका लग्नशर्मा नाम था। वह उस ब्राह्मण के पास आया। तब उसने बहुत आदर किया और उसके पास में सोना देखकर प्रसन्न हुआ ॥ ४ ॥

स्वर्णलोभेन तं विप्रं हतवान् पुत्रसंयुतम् ।
स्वर्णं सर्वं हृतं देवि व्ययं कृत्वा दिने दिने ॥ ५ ॥

और उस ब्राह्मण ने सोने के लोभ से पुत्र समेत लग्नशर्मा ब्राह्मण को मार डाला। और सोना को भी खर्च कर डाला ॥ ५ ॥

षडंशैर्गुप्तदानं च गङ्गायमुनसङ्गमे।
चकार तद्धनैर्भक्त्या विष्णुप्रीतिकरं तदा ॥ ६ ॥

और गङ्गा यमुना के सङ्गम में उसने मोह से विष्णु की प्रीति के लिए धन का छठा हिस्सा गुप्तदान भी भक्ति से किया ॥ ६ ॥

एवं बहुगते काले पत्नी तस्य मृता पुरा।
पश्चात्सोऽपि ग्रहग्रस्तो मृत्युं प्राप्नोति दुर्जनः ॥ ७ ॥

ऐसे बहुत काल बीत जाने के बाद उसकी स्त्री मर गई। वह दुर्जन भी ग्रहपीड़ा से ग्रस्त होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥

निक्षिप्तो नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया।
युगसप्ततिपर्यन्तं भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ८ ॥

तब धर्मराज की आज्ञा से यमदूतों ने नरक में पटक दिया और सत्तर युगों तक नरक की पीड़ाओं को भोगता रहा ॥ ८ ॥

नरकान्निःसृतो देवि श्रृगालो गहने वने।
तत्स्थो निजफलं भुक्त्वा कृमियोनावभूत्पुनः ॥ ९ ॥

हे देवि ! नरक से निकलकर वह गहन वन में सियार हुआ फिर कृमियोनि को प्राप्त हुआ ॥ ९ ॥

पुनर्मानुषयोनिः स तूर्णं च प्रथिते कुले।
मध्यदेशे शुभे ग्रामे मृतवत्सो ह्यपुत्रकः ॥ १० ॥

फिर शीघ्र ही मध्यदेश के एक सुन्दर ग्राम में विख्यात कुल में उत्पन्न हुआ। उसके कोई पुत्र न था, संतान मर जाया करती थी ॥ १० ॥

रुग्णो बहुधनाढ्यश्च गौडो मांसप्रियः सदा ।
तस्य भार्या महालुब्धा पुरा लोकमती च या ॥ ११ ॥

वह शरीर से हमेशा रोगी बना रहता, बहुत धनाढ्य गौड़ जाति का था और सदा मांस से प्रीति करनेवाला था। उसकी स्त्री बहुत लोभी थी, पूर्व जिसका लोकमती नाम था ॥ ११ ॥

पुनर्विवाहिता देवि पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ।
मासि पुष्पं भवेत्तस्याः सन्तानं नैव वा भवेत् ॥ १२ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म के प्रसंग से वही फिर विवाही गई थी, उसके प्रत्येक महीने रजोदर्शन होता पर उसके सन्तान नहीं उत्पन्न होती थी ॥ १२ ॥

सज्वरा दीर्घनेत्रा सा कुक्षिरोगेण पीडिता ।
इति श्रुत्वा वचस्तस्य महादेवप्रिया शिवा ॥ १३ ॥

वह दीर्घ नेत्रोंवाली थी, ज्वर और कुक्षि के रोग से सदा पीड़ित बनी रहती थी। ऐसे वचनों को सुनकर ॥ १३ ॥

प्रणम्य पार्वती देवी शङ्करं परमेश्वरम् ।
उवाच वचनं देवं चराचरगुरुं परम् ॥ १४ ॥

पार्वती देवी शिव को प्रणाम करके चराचर के परम गुरुदेव से यह वचन बोलीं ॥ १४ ॥

प्राणिनां केवलं कर्म तव मायाविचेष्टितम् ।
शुभमेवाशुभं चैव कथं जानामि पूर्वजम् ॥
तत्सर्वं कृपया देव वद मे परमेश्वर ॥ १५ ॥

प्राणियों के पूर्वजन्म के कर्म केवल तुम्हारी माया से होते हैं, उन पूर्वजन्म के शुभाशुभ कर्मों को मैं कैसे जानूँ। हे देव ! हे परमेश्वर ! आप कृपा करके सब खुलासा वर्णन करें ॥ १५ ॥

शिव उवाच ।

त्रिविधं प्राणिनां कर्म नृणां चैव स्वभावजम् ।
अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् ॥ १६ ॥

शिव कहते हैं कि प्राणियों के स्वभाव से उत्पन्न तीन प्रकार के कर्म हैं—अशुभ, शुभ और मध्यम; और तीन प्रकार का कर्मों का फल है ॥ १६ ॥

अनिष्टं नागलोके च नरके विविधे तथा ।
इष्टं स्वर्गे फलं देवि मिश्रं मर्त्ये प्रजायते ॥ १७ ॥

अशुभ कर्म पाताल लोक में और अनेक प्रकार के नरकों में भोग किया जाता है । शुभ कर्म स्वर्ग में भोग किया जाता है । हे देवि ! मध्यम कर्म मनुष्यलोक में जन्म लेकर भोगना पड़ता है ॥ १७ ॥

रोगतश्चेष्टया देवि ज्ञेयं सर्वं शुभाशुभम् ।
राजरोगी भवेद्यस्तु ब्रह्महा पूर्वजन्मनि ॥ १८ ॥

हे देवि ! रोगों और चेष्टा से सम्पूर्ण शुभ अशुभ जाना जाता है । जो राजरोगी हो तो यह समझना कि पूर्वजन्म में यह ब्राह्मण को मारनेवाला था ॥ १८ ॥

पुत्रकन्याविहीनो यो गोत्रहा गुरुहा भवेत् ।
पाण्डुरोगी नरो यस्तु देवपूजनवर्जितः ॥ १९ ॥

और जो पुत्र-कन्या न हो तो जानना कि वह पूर्वजन्म में अपने गोत्री का या गुरु का मारनेवाला था । जो मनुष्य देवताओं को नहीं पूजता वह मनुष्य पांडुरोगी होता है ॥ १९ ॥

कन्यापत्यं भवेद्यस्य वेदनिन्दा कृता तदा ।
कन्याघाती पक्षिघाती तस्य भार्या न जीवति ॥ २० ॥

जिसके लड़की ही उत्पन्न होती हों तो जानना कि उसने पूर्वजन्म में वेद की निन्दा की थी । और कन्या को मारने-

वाले और पक्षी को मारनेवाले की स्त्री कभी नहीं जीती है ॥ २० ॥

भ्रातृहा यः पुरा देवि स ज्वरेण प्रपीडितः ।
घण्टावादित्रहारी च कररोगी नरो भवेत् ॥ २१ ॥

हे देवि ! जो पूर्वजन्म में अपने भाई को मार डालता है वह हमेशा ज्वर से पीड़ित बना रहता है । घण्टा बाजा को जो चुराता है उसके हाथ में रोग उत्पन्न होता है ॥ २१ ॥

भगिनीनाशनं देवि कृतं यैः पूर्वजन्मनि ।
तेन पापेन भो देवि ते ज्वरेण प्रपीडिताः ॥ २२ ॥

हे देवि ! जिन्होंने पूर्वजन्म में अपनी बहिन को मार डाला है उस पाप से वे ज्वर से पीड़ित रहते हैं ॥ २२ ॥

मित्रद्रोही बालघाती पशुघाती तथैव च ।
तत्फलेन महादेवि मृतवत्सश्च रोगवान् ॥ २३ ॥

हे देवि ! मित्रद्रोही, बालघाती, पशुघाती पुरुष इन पापों से (मृत वत्स) सन्तान मरनेवाला और रोगी होता है ॥ २३ ॥

कायाघाती गर्भपाती धनपुस्तकहारकः ।
जन्मान्धो जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ २४ ॥

शरीर का नाश करनेवाला, गर्भ गिरानेवाला, धन-पुस्तक को चुरानेवाला मनुष्य जन्म से अन्धा होता है, यह सत्य जानना ॥ २४ ॥

वस्त्रहा भूमिहारी च परनिन्दापरस्तथा ।
तेन पापेन भो देवि दरिद्रो जायते नरः ॥ २५ ॥

हे देवि ! वस्त्र और पृथ्वी को हरनेवाला और परायी निन्दा करनेवाला मनुष्य इस पाप से दरिद्री होता है ॥ २५ ॥

गोत्रदारापहारी च दीर्घरोगी भवेन्नरः ।
महिषीपुत्रघाती च कम्परोगी प्रजायते ॥ २६ ॥

अपने गोत्र की स्त्री को हरनेवाला, दीर्घरोगी, कुष्ठ आदि रोगवाला होता है। और गर्भिणी भैंस को मारनेवाला कम्परोगी होता है ॥ २६ ॥

निर्बीजं वृषभं यो वै प्रकरोति नराधमः ।
षण्ढस्संजायते देवि मूत्रकृच्छ्री भवेत्ततः ॥ २७ ॥

जो पापी मनुष्य बैल को बधिया करते हैं, हे देवि ! वे नपुंसक होते हैं, फिर मूत्रकृच्छ्र रोगी होते हैं ॥ २७ ॥

मातृहा पितृहा देवि महाकुष्ठी नरो भवेत् ।
अगम्यागमनं यस्तु वीरयोषागमं तथा ॥ २८ ॥
करोति योधमस्तस्य शरीरं ज्वरपीडितम् ।
गोवधी जायते देवि श्वेतकुष्ठी नरः सदा ॥ २९ ॥

हे देवि ! माता पिता को मारनेवाला मनुष्य महाकुष्ठी होता है। अगम्या स्त्री से तथा शूरवीर की स्त्री से गमन करने-वाले अधम पुरुष का शरीर ज्वर से पीड़ित होता है। हे देवि ! गौ का वध करनेवाला मनुष्य सदा श्वेतकुष्ठी होता है ॥ २८-२९ ॥

कन्यकागमनं यस्तु करोति हठतः पुरा ।
तेन पापेन भो देवि रोगवान्धनवर्जितः ॥ ३० ॥

और जो मनुष्य पूर्वजन्म में जबरदस्ती से कन्या के साथ गमन करता है वह रोगवान् और निर्धन (कंगाल) होता है ॥ ३० ॥

पुष्पगन्धापहारी च मुखे तस्य विगन्धता ।
घृतहारी भवेत्कुष्ठी तस्माद्भ्रष्टः कृमिर्भवेत् ॥ ३१ ॥

पुष्पों की सुगन्धि को हरनेवाले के मुख में दुर्गन्धि होती है। घृत को हरनेवाला कुष्ठी होता है। फिर उस योनि

से छूटकर कृमि अर्थात् कीड़ा की योनि को प्राप्त होता है ॥ ३१ ॥

वृक्षगन्धापहारी च काकः संजायते नरः ।
वापीकूपापहारी च दद्रुरोगी भवेन्नरः ॥ ३२ ॥

वृक्ष के गन्ध को हरनेवाला मनुष्य कौवा होता है । बावड़ी, कुवाँ को नष्ट करनेवाला दद्रुरोगी होता है ॥ ३२ ॥

देवयात्रापहारी च कण्ठरोगी भवेन्नरः ।
सारङ्गगीतघाती च वने दावाग्निदाहकः ॥ ३३ ॥

देवयात्रा को भंग करनेवाले मनुष्य के कण्ठ में रोग उत्पन्न होता है । मयूर आदि पक्षियों के कूजने को बन्द करनेवाला तथा वन में दावानल लगानेवाला ॥ ३३ ॥

अक्षिरोगी नासिकायां व्रणी कृमिसमाकुलः ।
तैलहारी भवेत्तैली गुडहारी ज्वरी सदा ॥ ३४ ॥

आँख के रोगवाला होता है । नासिका में व्रण और कृमि गिरा करते हैं । तेल को हरनेवाला तेली होता है । गुड़ को हरनेवाला ज्वर से सदा पीड़ित होता है ॥ ३४ ॥

स्वर्णरौप्यापहारी च नरो भवति पुत्रहा ।
दासदासीहरो यस्तु नरो भवति कर्णरुक् ॥ ३५ ॥

सोना-चाँदी को हरनेवाला मनुष्य अपने पुत्र का नाश करनेवाला होता है । दास-दासी को मारनेवाले मनुष्य के कान में रोग बना रहता है ॥ ३५ ॥

लोहमूल्यापहारी च पाण्डुरोगी भवेन्नरः ।
दधिदुग्धहरो यस्तु कुक्षिरोगी भवेन्नरः ॥ ३६ ॥

जो लोह को मोल लेकर दाम नहीं देता, वह मनुष्य पाण्डुरोगी होता है । दधि, दुग्ध का हरनेवाला मनुष्य कुक्षिरोगी होता है ॥ ३६ ॥

मार्गग्राही वस्त्रहारी बाहुरोगी प्रजायते ।

मयूरकुक्कुटानां च कच्छपानां च बाधकः ।। ३७ ।।

मार्ग को रोकनेवाले और वस्त्रों को हरनेवाले की भुजाओं में रोग होता है । मोर, मुर्गे और कछुओं को पीड़ा देनेवाला मनुष्य ।। ३७ ।।

वातरोगी च खञ्जश्च जन्म-जन्म-नपुंसकः ।

मद्यपी मांसभोजी च मत्स्यभोजी तथैव च ।। ३८ ।।

वातरोगी, लँगड़ा और जन्म-जन्म में नपुंसक होता है । मदिरा पीनेवाला, मांस को भक्षण करनेवाला और मछली को भक्षण करनेवाला ।। ३८ ।।

तेन पापप्रभावेण चर्मकारो हि जायते ।

अन्नहा जलहा चैव दन्तरोगी भवेन्नरः ।। ३९ ।।

उस पाप के प्रभाव से चमार होता है । अन्न हरनेवाले तथा जल हरनेवाले के दाँतों में रोग होता है ।। ३९ ।।

ब्राह्मणस्य गृहं यस्तु धनधान्यसमन्वितम् ।

हरणं तस्य वै कुर्यान्मृगीरोगी भवेन्नरः ।। ४० ।।

जो ब्राह्मण के धन और अन्न से पूर्ण घर को हर लेता है वह मृगीरोगवाला होता है ।। ४० ।।

एवं वहुविधो रोगो नराणां चैव जायते ।

पूर्वकर्मफलं चैव भुज्यते खलु मानवैः ।। ४१ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे द्वितीयोऽध्यायः ।। २ ।।

ऐसे बहुत प्रकार का रोग मनुष्यों के होता है । मनुष्यों ने जो पूर्वजन्म में कर्म किया है उसे वे अवश्य ही भोगते हैं ।। ४१ ।।

दूसरा अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ तृतीयोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि यत्प्रश्नं भुवि जायते ।
प्रायश्चित्तं नराणां च मेषराशिक्रमादनु ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! जो प्रश्न संसार में होते हैं उनको मैं मेषराशि के क्रम से मनुष्यों के प्रायश्चित्तों के साथ कहता हूँ ध्यान से सुनो ॥ १ ॥

ब्राह्मणं स्वर्णलोभेन हत्वा चैव सपुत्रकम् ।
स्वर्णं भुक्तं सदारेण तत्पापात् पुत्रवर्जितः ॥ २ ॥

सुवर्ण के लोभ से पुत्रसहित ब्राह्मण को मारकर उसका सुवर्ण, स्त्रीसहित भोग करने के पाप से उसके पुत्र नहीं है ॥२॥

प्रायश्चित्तं जपं देवि गायत्री त्र्यम्बकं ततः ।
पञ्चलक्षप्रमाणेन ततः पापात् प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

हे देवि ! प्रायश्चित्त में गायत्री तथा त्र्यंबकमंत्र का पाँच लक्ष जप कराने से उस पाप से छूट जाता है ॥ ३ ॥

ब्राह्मणस्य सपुत्रस्य प्रतिमां कारयेद्बुधः ।
स्वर्णं दशपलस्यैव तां सम्पूज्य प्रयत्नतः ॥ ४ ॥

पुत्रसहित ब्राह्मण की मूर्ति (दशपल) चालीस तोले सोने की बनाकर उसकी विधान से पूजन करे ॥ ४ ॥

कुण्डं कृत्वा ततो देवि चतुरस्रं प्रसन्नधीः ।
प्रतिमां पूजयेच्चैव मन्त्रेणानेन भोः प्रिये ॥ ५ ॥

हे देवि ! फिर चौकुंठा कुंड बनाकर प्रसन्नचित्त होकर, नीचे लिखे मंत्रों से प्रतिमा की पूजा करे ॥ ५ ॥

ॐ नमो गणाधिपतये गन्धपुष्पादिबलिं समर्पयामि नमः ॥ ॐ इन्द्राय नमः ॥ ॐ अग्नये नमः ॥ ॐ यमाय नमः ॥ ॐ

निर्ऋतये नमः ॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ ॐ कुबेराय नमः ॥ ॐ कालाय नमः ॥ ॐ शिवाय नमः ॥ ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ॐ अनन्ताय नमः ॥ ॐ गरुडवाहनाय नमः ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ ॐ जयाय नमः ॥ ॐ विजयाय नमः ॥ ॐ पुण्यशीलाय नमः ॥ ॐ सुशीलाय नमः ॥

ॐ सर्वे देवास्तथा दैत्या ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
मत्पापं यत्पुरा जातं तत्सर्वं क्षम्यतां सदा ॥ ६ ॥

संपूर्ण देवता और दैत्य, एवं ब्रह्मा, विष्णु, शिव ये सब पूर्व-जन्म में किये हुए मेरे पापों को क्षमा करें ॥ ६ ॥

इमां पूजां गृहाणैवं मम पुत्रं प्रयच्छतु ।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥

हे देव ! इस हमारी पूजा को आप ग्रहण कीजिये और मेरे को पुत्र दीजिये । अज्ञान से अथवा प्रमाद से जो मैंने पूर्वजन्म में कर्म किया है ॥ ७ ॥

तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रयच्छ शरणं मम ।
ततो नवग्रहाः सर्वे दिक्पालाश्चाप्युपग्रहाः ॥ ८ ॥

उस संपूर्ण को आप क्षमा करें । हे देव ! मेरे को अपनी शरण दीजिए । इसके अनंतर नवग्रह, दिक्पाल, उपग्रह की पूजा करे ॥ ८ ॥

सर्वे ममापराधान्वै क्षम्यतां पूर्वजन्मनः ।
एवं सर्वं यथान्यायं पूजां कृत्वा विचारतः ॥ ९ ॥

और कहे कि पूर्व जन्म के मेरे संपूर्ण अपराधों को आप क्षमा करने योग्य हैं । इस प्रकार विधिपूर्वक संपूर्ण पूजन को करने के बाद ॥ ९ ॥

ततो होमं प्रकुर्वीत तिलधान्यादितन्दुलैः ।
दशांशं होमयेद्देवि तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १० ॥

फिर तिल, जौ, चावल इन सबका दशांश होम, दशांश तर्पण और मार्जन करे ॥ १० ॥

गोदानं च ततः कुर्याद्दशवर्णं विशेषतः ।
वृषमेकं प्रदातव्यं स्वर्णशृङ्गं सहाम्बरम् ॥ ११ ॥

फिर दश प्रकार के रंगोंवाली गौवों का दान करे । सोने की सींग और वस्त्रों से युक्त कर, एक बैल का दान करे ॥ ११ ॥

ततो वै ब्राह्मणान्देवि भोजयेद्विधिपूर्वकम् ।
भोजनान्ते ततो दानं सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥ १२ ॥

हे देवि ! अनंतर विधिपूर्वक ब्राह्मणों को भोजन करावे । भोजन के अन्त में सोने का दान और दक्षिणा देवे ॥ १२ ॥

प्रतिमालंकृता देवि वाचकाय प्रदापयेत् ।
एवंकृते महादेवि वंशो भवति नान्यथा ॥ १३ ॥

हे देवि ! अलंकृत की हुई उस प्रतिमा को वाचक याने सम्पूर्ण विधि बतानेवाले, उपदेश करनेवाले ब्राह्मण को देवे । हे महादेवि ! ऐसा करने से अवश्य वंश चलता है । इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ १३ ॥

एकादशीव्रतं चैव सप्तमीं रविसंयुताम् ।
यावत्स्वमरणं देवि कुर्यात्सत्ययुतो नरः ॥ १४ ॥

वह मनुष्य मरणपर्यंत एकादशीव्रत तथा रविवारयुक्त सप्तमी का व्रत करे । सत्य वचन बोलने का नियम रक्खे ॥ १४ ॥

पूर्वपापविशुद्धिः स्याद् व्याधिरेवं विनश्यति ॥ १५ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे
प्रायश्चित्तकथनन्नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

तब पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि होगी इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ १५ ॥

तीसरा अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथ द्वितीये वक्ष्यामि प्रायश्चित्तं तथाम्बिके ।
अश्विन्यां जायते देवि पूर्वकर्मविपाकतः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे अम्बिके ! अब पूर्व कर्म के विपाक से अश्विनी नक्षत्र के दूसरे चरण के प्रायश्चित्त को कहते हैं ॥ १ ॥

अयोध्यापुरतो देवि पूर्वे क्रोशचतुष्टये ।
सरय्वा निकटे चैव वर्णसंकरक्षत्रियः ॥ २ ॥

हे देवि ! अयोध्यापुर से पूर्व दिशा में चार कोस पर सरयू-नदी के किनारे एक वर्णसंकर क्षत्रिय रहता था ॥ २ ॥

नामतः श्वेतवर्मेति पुत्रदार समन्वितः ।
एकदा मातुलो देवि पुत्रेण सह संयुतः ॥ ३ ॥

उसका श्वेतवर्मा नाम था और स्त्री-पुत्र से संयुक्त था । हे देवि ! एक समय उसका मामा अपने पुत्रसहित ॥ ३ ॥

आगतो निकटे देवि स्वर्णकोटिसमन्वितः ।
आदरं बहुधा कृत्वा गृहे वासं ददौ च सः ॥ ४ ॥

करोड़ों रुपये का सुवर्ण द्रव्य लेकर उसके समीप आया । तब उसने बहुत आदर करके उसे अपने घर में ठहराया ॥ ४ ॥

तस्य पत्नी गुणवती रूपयौवनसंयुता ।
मासमेकं तदा देवि प्रत्यहं भगिनीगृहे ॥ ५ ॥

इसकी स्त्री भी गुणवती नामक रूप-यौवन से भरपूर थी । हे देवि ! उसका मामा एक महीना तक अपनी बहन के घर में रहा ॥ ५ ॥

भुज्यते सह पुत्रेण चामिषं विविधं तथा ।
मासान्ते चावधीद्रात्रौ मातुलं सह पुत्रकम् ॥ ६ ॥

वह पुत्रसहित अनेक प्रकार के मांस को भक्षण किया करता था। एक महीना के बाद उसने पुत्रसहित मामा को रात्रि के समय मार डाला ॥ ६ ॥

भूमिमध्ये शवं ताभ्यां यत्नतः स्थापितं तदा ।
स्वर्णकोटिं प्रजग्राह पापात्मा गुरुघातकः ॥ ७ ॥

फिर इन स्त्री-पुरुषों ने मुरदे को यत्न से पृथ्वी में गाड़ दिया और सुवर्णकोटि द्रव्य को ले लिया ॥ ७ ॥

पत्न्या सह ततो द्रव्यव्ययं कुर्वन् दिने दिने ।
एवं बहुतिथे काले क्षत्री कालवशोऽभवत् ॥ ८ ॥

फिर वह अपनी स्त्री-सहित प्रतिदिन द्रव्य को खर्चता था। बहुत-सा समय व्यतीत होने के बाद उस क्षत्रिय की मृत्यु हो गई ॥ ८ ॥

पश्चान्मृता ततः पत्नी निर्जने गहने वने ।
कर्दमे नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ९ ॥

फिर उसकी स्त्री भी निर्जन गहन वन में मर गई। तब यमदूतों ने यम की आज्ञा से घोरकर्दम नरक में ॥ ९ ॥

निक्षिप्य महतीं पीडां तयोर्दत्त्वा ततः प्रिये ।
युगमेकं बरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ १० ॥

पटक कर उन दोनों को बहुत सी पीड़ा दी। हे प्रिये ! एक युग तक नरक की पीड़ा को भोगा ॥ १० ॥

नरकान्निःसृतो देवि गर्दभत्वमजायत ।
पुनः सरटयोनि तु भुक्त्वा मर्त्यस्ततोऽभवत् ॥ ११ ॥

नरक से निकल हे देवि ! फिर गदहा की योनि को प्राप्त हुआ। फिर किरलकांट की योनि को भोग कर अब मनुष्य योनि में आया है ॥ ११ ॥

हतोनेन पुरा देवि मातुलः पुत्रसंयुतः ।
तत्पापफलतो देवि वंशच्छेदश्च जायते ॥ १२ ॥

हे देवि ! पहले इसने पुत्रसहित मामा को मारा था उस पाप से इसका वंश नाश हो गया ॥ १२ ॥

रोगयुक्ताऽभवद्देवि पत्नी वै पूर्वजन्मनि ।
ततो विवाहिता जाता पुनर्वै पूर्वकर्मतः ॥ १३ ॥

हे देवि ! पूर्व जन्म में इसकी स्त्री के रोग उत्पन्न हुआ था अब पूर्वजन्म के कर्म के प्रभाव से वही स्त्री फिर विवाही गई है ॥ १३ ॥

कासश्वाससमायुक्तो विषमज्वरपीडितः ।
प्रायश्चित्तं ततस्तस्य प्रवक्ष्यामि वरानने ॥१४॥

खाँसी, श्वास और विषमज्वर से पीड़ित रहा करता था उसका प्रायश्चित्त कहता हूँ ॥ १४ ॥

प्रत्यहं ब्राह्मणे दानं भक्तिपूर्वं वरानने ।
दशधेनुं प्रयत्नेन हरिवंशश्रुतिं तथा ॥ १५ ॥

हे वरानने ! प्रतिदिन हरिवंश को सुने और दश गाँवों को भक्तिपूर्वक ब्राह्मण को दान करे ॥ १५ ॥

सुवर्णप्रतिमां कृत्वा पलं पञ्चदशस्य च ।
वर्तुलाकारकुण्डे वै होमं कृत्वा प्रसन्नधीः ॥ १६॥

१५ पल अथवा ६० तोले की सोने की प्रतिमा बनावे और गोल कुंड में प्रसन्नता से होम करे ॥ १६ ॥

गायत्रीलक्षजाप्यं च कारयेत्तु प्रयत्नतः ।
दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं तथा ॥ १७ ॥

गायत्री का लक्ष जप करावे और उसका दशांश होम करे, पीछे ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १७ ॥

शय्यादानं विशेषेण प्रतिमां पूजयेत्ततः ।

शय्या दान करके प्रतिमा की पूजन करे ।

अथ प्रतिमापूजनम् ।

षोडशाङ्गुलिका वेदी मृत्तिकासप्तसंयुता ।
चतुरस्रा विचित्रा च गन्धपुष्पसमन्विताः ।
तत्रैव प्रतिमां कृत्वा स्थापितां पूजयेत्ततः ॥ १८ ॥

सोलह अंगुल की वेदी सात जगह की मिट्टी मिलाकर बनावे वह चार कोने की हो और गंध, पुष्प से युक्त वेदी पर प्रतिमा को स्थापन करके पूजन करे ॥ १८ ॥

ॐ चक्रधराय नमः ॥ ॐ गदाधराय नमः ॥ ॐ शार्ङ्गिणे नमः ॥ ॐ गरुडाय नमः ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ ॐ शिवाय नमः ॥ ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ॐ प्रजापतये नमः ॥ ॐ सर्वेश्वराय नमः ॥ ॐ लक्ष्म्यै नमः ॥

इन मंत्रों से पूजा कर प्रार्थना करे ।

ॐ देवदेव महादेव शङ्खचक्रगदाधर ।
मम पूर्वं कृतं पापं हर त्वं धरणीधर ॥ १९ ॥

ॐ हे देवदेव महादेव ! हे शंख चक्र गदाधर ! हे धरणीधर ! तुम मेरे पूर्व जन्म के किये हुए पाप का नाश करो ॥ १९ ॥

एवं पूजां समाप्यैव प्रतिमां तां च दापयेत् ।
आचार्याय तदा देवि सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥ २० ॥

इस पूजा को समाप्त करके पीछे उस प्रतिमा को आचार्य ब्राह्मण को दे देवे । हे देवि ! पीछे सोने की दक्षिणा देवे ॥ २० ॥

ततः प्रदक्षिणां कृत्वा ब्राह्मणे व्यासरूपिणे ।
माघे मासि प्रयागे तु स्नानं पत्नीसमन्वितः ॥ २१ ॥

फिर वेदव्यासरूपी उस ब्राह्मण की प्रदक्षिणा करे और अपनी स्त्री के साथ माघ के महीने में प्रयाग तीर्थ में स्नान करे ॥ २१ ॥

एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं वन्ध्यात्वञ्च विनश्यति ॥ २२ ॥
रोगी च मुच्यते रोगात् कन्यका नैव जायते ॥ २३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायामश्विनीनक्षत्रद्वितीय-चरणविचारणन्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

ऐसा करने से वंश अर्थात् संतान होती है इसमें संदेह नहीं है और मृतवत्सा अर्थात् जिस स्त्री की संतान नहीं जीती हो वा वंध्या हो, उसको भी पुत्र का सुख प्राप्त होता है, रोगी रोग से छूट जाता है और कन्या उत्पन्न नहीं होती है ॥ २२ । २३ ॥

चतुर्थ अध्याय समाप्त ।

———:o:———

अथ पञ्चमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि नक्षत्रतुरगस्य तु ।
तृतीयस्य ततो देवि प्रायश्चित्तमतः शृणु ॥ १ ॥

शिव कहते हैं—हे देवि ! अब अश्विनी नक्षत्र के तीसरे चरण के प्रायश्चित्त को कहते हैं, सुनो ॥ १ ॥

अयोध्यापुरतो देवि दक्षिणे पूर्वदिग्गते ।
नारायणपुरे रम्ये राजपुत्रोऽभवत्तदा ॥ २ ॥

हे देवि ! अयोध्यापुरी से पूर्व दिग्गत दक्षिण में अर्थात् अग्निकोण में रमणीक नारायणपुर में एक राजपुत्र पैदा हुआ ॥ २ ॥

स्वकर्मनिरतो दान्तः प्रजापोषणतत्परः ।
नामतश्चोलसिंहेति तस्य पत्नी प्रभावती ॥ ३ ॥

अपने पूर्व जन्म के कर्म में रत, प्रजापालन में तत्पर और चोलसिंह नामक था उसकी स्त्री प्रभावती थी ॥ ३ ॥

तस्य मित्रं द्विजोप्येकः स्वकर्मपरिवर्जितः ।
एकदा मृगयां यातो राजपुत्रः सब्राह्मणः ॥ ४ ॥

उसका मित्र एक ब्राह्मण अपने कर्म से भ्रष्ट था। एक समय वह राजा और ब्राह्मण शिकार खेलने को गये ॥ ४ ॥

मृगं हत्वा वरारोहे जग्मतुर्गहने वने ।
मांसस्य देवि भागार्थं कलहो हि महानभूत् ॥ ५ ॥

तहाँ मृग को मार कर गहन वन में जा पहुँचा। वहाँ मृग के विभाग करने में दोनों का महान् कलह हुआ ॥ ५ ॥

ततः स ब्राह्मणो दुष्टः क्रोधेनैवापि च द्विषन् ।
मरणं तस्य भो देवि वभूव गहने वने ॥ ६ ॥

अंत में वह दुष्ट ब्राह्मण क्रोध द्वेष करके उसी गहन वन में मृत्यु को प्राप्त हो गया ॥ ६ ॥

ततश्चिन्तापरीतात्मा राजपुत्रो गृहं ययौ ।
गृहे च कारयामास तस्य कर्म यथाविधि ॥ ७ ॥

उसके अनन्तर चिंता से व्याकुल राजपुत्र अपने मकान पर आया और यथार्थ विधि से उसका कर्मकांड कराया ॥ ७ ॥

ततो बहुगते काले प्रयागे मकरे मुदा ।
शरीरं त्यक्तवान् देवि भार्यया सहितस्तदा ॥ ८ ॥

फिर बहुत काल व्यतीत होने पर उस राजपुत्र ने स्त्री सहित प्रयाग में मकर संक्रांति के दिन आनन्द से अपना शरीर छोड़ा ॥ ८ ॥

स्वर्गं भुक्त्वा युगान् सप्त ततः पुण्यक्षये सति ।
मर्त्यलोकेऽभवज्जन्म धनधान्यसमन्वितः ॥ ९ ॥

फिर सातयुगों तक स्वर्ग भोग कर पुण्यक्षीण होने पर मृत्यु-लोक में जन्म लिया, और धन धान्य से युक्त हुआ ॥ ९ ॥

भार्यया सहितो देवि मध्यदेशे वरानने ।
पुत्रो न जायते देवि पूर्वकर्मविपाकतः ॥ १० ॥

हे देवि ! भार्या सहित मध्यदेश में उत्पन्न हुआ । पूर्व कर्म के विपाक से इसके पुत्र नहीं है ॥ १० ॥

ब्रह्महत्याफलेनैव मृतवत्सोपि वा भवेत् ।
तस्य शुद्धिं प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रः प्रजायते ॥ ११ ॥

अथवा इसके संतान नहीं जीती है । अब उस पाप की शुद्धि को कहते हैं जिससे उसके पुत्र हो ॥ ११ ॥

तदुद्देशेन कर्तव्यस्तडागो वापिका पथि ।
हरिवंशश्रवणं देवि विधिपूर्वमतः शिवे ॥ १२ ॥

उस ब्राह्मण के उद्देश से मार्ग में कुवां अथवा बावड़ी बनवा दे और हरिवंशपुराण को विधिपूर्वक सुने तब कल्याण होगा ॥१२॥

दशवर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः ।
एवं कृते न सन्देहो वंशस्तस्य प्रजायते ॥ १३ ॥

और सोना तथा वस्त्रों के साथ दश प्रकार की रंगोंवाली गौवों का दान करे । ऐसा करने से वंश चलता है । इसमें संदेह नहीं है ॥ १३ ॥

सा स्त्री स्यात्सुखिनी देवि सत्यमेव न संशयः ।
काकवन्ध्यात्वमुक्ता स्यात् मृतवत्सा सुखावहा ॥ १४ ॥
व्याधिनाशो भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायामश्विनीनक्षत्रतृतीयचरण-विचारणन्नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

हे देवि ! वह स्त्री सुखवती होगी और काकवंध्या के भी संतान होगी, मृतवत्सा को भी सुख होगा इसमें संदेह नहीं। हे देवि ! ऐसे करने से व्याधि का नाश होता है। इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये ॥ १४-१५ ॥

पञ्चम अध्याय समाप्त।

———:०:———

अथ षष्ठोऽध्यायः।

शिव उवाच।

श्रृणु देवि वरारोहे नृणां कर्मविपाकजम्।
तदहं संप्रवक्ष्यामि यथाकर्मानुसारतः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! मनुष्यों के पूर्वजन्म के कर्मों के विपाक से उत्पन्न हुये फलों को सुनो, मैं उसको कर्मों के अनुसार वर्णन करता हूँ ॥ १ ॥

पुत्रा बहुविधा देवि लौकिका वै विचक्षणाः।
जायन्ते नात्र संदेहस्तत्सर्वं श्रृणु वल्लभे ॥ २ ॥

हे देवि ! बहुत प्रकार के लौकिक विद्वान् पुत्र उत्पन्न होते हैं इसमें संदेह नहीं। हे वल्लभे ! उनको सुनो ॥ २ ॥

प्रथमः पुण्यसंबन्धो मातृपितृप्रियः सदा।
सुसेवानिरतो नित्यं पितुर्मातुश्च यत्नतः ॥ ३ ॥

मुख्य पुण्य संबंधवाला पुत्र सदा माता पिता को प्रिय होता है और नित्यप्रति यत्न से माता पिता की सेवा करने में तत्पर रहता है ॥ ३ ॥

आजन्ममरणाद्देवि पितुराज्ञां करोति च।
मरणे पितृमात्रोश्च श्राद्धं कुर्याद्दिने दिने ॥ ४ ॥

हे देवि ! जन्म से लेकर मरण पर्यन्त तक, माता पिता की आज्ञा में तत्पर रहे जब माता पिता मर जावें तब प्रति दिन तर्पण और श्राद्ध करे यह पुत्र का धर्म है ॥ ४ ॥

पितृश्राद्धं विना देवि भोजनं न करोति हि ।
द्वितीयः शत्रुसंबन्धी तस्य चेष्टाश्च मे शृणु ।। ५ ।।

हे देवि ! वह पुत्र पिता के श्राद्ध किये विना भोजन भी नहीं करता है, दूसरा शत्रु संबंधी पुत्र होता है उसकी चेष्टा मेरे से सुनो ।। ५ ।।

पूर्वजन्मप्रसङ्गेन शत्रुः पुत्रः प्रजायते ।
जन्मतः शत्रुरूपेण मातृपित्रोर्विरोधकृत् ।। ६ ।।

पूर्वजन्म के प्रसंग से शत्रु पुत्र होता है । वह जन्म से ही शत्रुरूप होकर माता-पिता से बैर रखता है ।। ६ ।।

तत्कर्म कुरुते येन तयोः क्लेशोभिजायते ।
तृतीयो ऋणसंबन्धान्मत्तः शृणु वरानने ।। ७ ।।

वह ऐसा कर्म करता है जिससे उनको क्लेश हो । हे वरानने ! तीसरा ऋण के सम्बन्ध से होता है उसको सुनो ।। ७ ।।

ऋणं यस्य गृहीतन्तु न दत्तं हठतः प्रिये ।
तदा पुत्रत्वमाप्नोति द्रव्यदाता न संशयः ।। ८ ।।

हे प्रिये ! पूर्वजन्म में जिससे ऋण (कर्जा) लिया हो उसको हठ करके नहीं दे तो द्रव्यदाता उसका पुत्र होता है । इसमें सन्देह नहीं है ।। ८ ।।

पितृद्रव्यं प्रयत्नेन गृह्णाति हठतः प्रिये ।
द्यूतवेश्याप्रदानेन व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।। ९ ।।

वह यत्न से प्रति दिन हठ से पिता के धन को ग्रहण करता है और हे प्रिये ! जुआ और वेश्या के प्रसङ्ग से प्रति दिन खर्च करता है ।। ९ ।।

यदा द्रव्यविहीनश्च पिता भवति वै प्रिये ।
तदा मृत्युमवाप्नोति युवारूपो न संशयः ।। १० ।।

हे प्रिये ! जब उसका पिता द्रव्यहीन गरीब हो जाता है तब जवानी में वह मर जाता है ॥ १० ॥

चतुर्थो मित्ररूपेण पुत्रो जायेत पार्वति ।
स्थापितं द्रव्यमन्यस्य न दत्तं पूर्वजन्मनि ॥ ११ ॥

हे पार्वती ! चौथा मित्ररूप पुत्र होता है। जिसको पूर्वजन्म में अन्य किसी का द्रव्य अपने पास स्थापित किया, फिर उसको नहीं दिया ॥ ११ ॥

तत्संबन्धस्वरूपेण पुत्रो जातस्तदा शिवे ।
बहुप्रीतिं पितृभ्याञ्च पितृव्ये गोत्रजे तथा ॥ १२ ॥

तो उस सम्बन्ध से पुत्र होता है। हे शिवे ! वह माता, पिता, चाचा, गोत्र में होनेवाले मनुष्यों से बहुत प्रीति रखता है ॥ १२ ॥

बहूद्यमो गुणी भोक्ता पितुः शिक्षासु तत्परः ।
यत्करोति गृहे कर्म सुखदं जायते हिं तत् ॥ १३ ॥

बहुत उद्यमी, गुणी, भोक्ता, पिता की शिक्षा में तत्पर होता है। जो कुछ घर में काम करता है वही सुखदायक होता है ॥ १३ ॥

पूर्वरूपो यदा देवि पत्नी पुत्रसमन्वितः ।
ततः शरीरं वै त्यक्त्वा धनं गृह्य ततः प्रिये ॥ १४ ॥

ऐसा यह पुत्र पहले की तरह जब जवान होता है और स्त्री पुत्र से युक्त होता है तब हे प्रिये ! पिता के सब धन को ग्रहण करके शरीर त्याग कर परलोक को प्राप्त हो जाता है ॥ १४ ॥

अथ वक्ष्यामि ते देवि चतुर्थचरणं शिवे ।
नक्षत्रतुरगस्यैव प्राणिनां नियतं शृणु ॥ १५ ॥

हे देवि ! हे शिवे ! अब अश्विनी नक्षत्र के चतुर्थ चरण को तुमसे कहता हूँ उसको सुनो ॥ १५ ॥

कोशलापुरतो देवि सरय्वा उत्तरे तटे।
तत्र क्षत्री वसत्येको नगरे नन्दने तदा ॥ १६ ॥

हे देवि ! अयोध्यापुर से सरयू के उत्तर किनारे पर नंदन नाम नगर में एक क्षत्री बसता था ॥ १६ ॥

स च धर्मविहीनस्तु लक्ष्मणेति च नामतः।
तस्य भार्या विशालाक्षी कल्याणीनाम सा प्रिये ॥ १७ ॥

वह धर्म से विहीन लक्ष्मण नाम से विख्यात था। हे प्रिये ! उसकी स्त्री सुन्दर नेत्रोंवाली कल्याणी नाम से प्रसिद्ध थी ॥ १७ ॥

कुलटा यौवनोन्मत्ता परपुंसि रता सदा।
व्यापारं कारयामास वस्त्रहेमादिकस्य हि ॥ १८ ॥

वह कुलटा और यौवन से मतवाली परपुरुषों में प्रीति रखनेवाली सदा वस्त्र, सुवर्ण आदि का व्यापार करती रही ॥ १८ ॥

उद्यमं बहुधा कृत्वा द्विजैः सह वरानने।
एवं बहुतिथे काले विप्रद्रव्यं तु चोरितम् ॥ १९ ॥

बहुत उद्यम करके ब्राह्मण से व्यापार करते हुए बहुत दिन बाद ब्राह्मण का द्रव्य चोरों ने हरण कर लिया ॥ १९ ॥

ततः शोकेन विप्रस्तु शीघ्रं पञ्चत्वमागतः।
ततो बहुतिथे काले राजपुत्रस्य पञ्चता ॥ २० ॥

उसके शोक से ब्राह्मण बहुत जल्दी मर गया और उससे बहुत दिन पीछे राजपुत्र क्षत्रिय की भी मृत्यु हो गई ॥ २० ॥

गतः स नरकं घोरं निरुच्छ्वासं सुदारुणम्।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ २१ ॥

फिर वह बहुत बुरे संताप देनेवाले दारुण नरक में गया और साठ हजार वर्षों तक नरक की पीड़ा को भोग किया ॥ २१ ॥

नरकान्निःसृतो देवि बृषयोनिः पुराभवत् ।
ततो वै राजपुत्रस्तु मानुषत्वमुपागतः ॥ २२ ॥

हे देवि ! नरक से बाहर निकलकर पहले बैल की योनि में प्राप्त हुआ, अब वह राजपुत्र मनुष्य योनि में प्राप्त हुआ है ॥ २२ ॥

पुरा तु यत्कृतं पापं तदिहैव प्रभुज्यते ।
मित्रस्य वंचनाद्देवि पुत्रस्यैव च पञ्चता ॥ २३ ॥

पहले जो इसने पाप किया था वह यहाँ भोगा, हे देवि ! पहले जो मित्र को ठगा था इस कारण उसके पुत्र की मृत्यु हो गई थी ॥ २३ ॥

काकवन्ध्या भवेत्पत्नी दुःखशोकसमन्विता ।
तस्य पुण्यं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापस्य निग्रहम् ॥ २४ ॥

उसकी स्त्री काकवन्ध्या एक ही बार संतान जनी । इस दुःख शोक से युक्त उसके पूर्वजन्म के पाप को दूर करनेवाले पुण्य को कहूँगा ॥ २४ ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन सर्वं पापं प्रणश्यति ।
कूष्माण्डं नारिकेलं वा स्वर्णयुक्तं सहाम्बरम् ॥ २५ ॥

गायत्री का लक्ष जप कराने से सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं और कूष्मांड अथवा नारियल को सोना के साथ वस्त्र से आच्छादित करके ॥ २५ ॥

गंगामध्ये प्रदातव्यं संतानार्थं वरानने ।
वर्तुलाकारकुंडे च होमं यत्नेन कारयेत् ॥ २६ ॥

हे वरानने ! संतान के वास्ते गंगाजी के मध्य में दान करे, गोल कुंड बनावे और यत्न से होम करे ॥ २६ ॥

स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरां पट्टवस्त्रसमन्विताम् ।
आचार्याय प्रदद्यात्तु सपात्रां विधिवत् प्रिये ॥ २७ ॥

सोने की सींग और चाँदी के खुर बनवावे। पट्ट वस्त्र उढ़ावे, दोहनी आदि पात्र से युक्त करे, फिर विधिपूर्वक आचार्य ब्राह्मण को देवे ॥ २७ ॥

एवं कृते न संदेहो वन्ध्यात्वञ्च प्रणश्यति।
पुत्रपौत्राश्च वर्द्धन्ते न संदेहो वरानने ॥ २८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे अश्विनी-नक्षत्रस्य चतुर्थचरणो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हे वरानने ! ऐसा करने से वंध्यापन दूर हो जाता है और पुत्र-पौत्रों की वृद्धि होती है। इसमें संदेह नहीं ॥ २८ ॥

षष्ठ अध्याय समाप्त।

—:o:—

अथ सप्तमोऽध्यायः।

पार्वत्युवाच।

देवदेव महादेव सृष्टिस्थितिलयात्मक।
स्त्रीणां च कर्म सम्ब्रूहि दयां कृत्वा ममोपरि ॥ १ ॥

पार्वती पूछती हैं हे देवदेव ! हे महादेव ! सृष्टिस्थिति-संहारस्वरूप आप मेरे ऊपर दया करके स्त्रियों के कर्मों को भली भाँति वर्णन करें ॥ १ ॥

ईश्वर उवाच।

नारीणां शृणु मे सर्वं यत्कृतं पूर्वजन्मनि।
ततोऽहं संप्रवक्ष्यामि समासेन वरानने ॥ २ ॥

शिव कहते हैं हे वरानने ! स्त्रियों ने जो कुछ पूर्वजन्म में जैसे-जैसे कर्म किये हैं वह सब मेरे से सुनो, मैं कुछ संक्षेप से वर्णन करता हूँ ॥ २ ॥

पूर्वजन्मनि या नारी पतिनिन्दां चकार ह।
तेन पापेन भो देवि न स्त्री पुष्पवती भवेत् ॥ ३ ॥

जो स्त्री पूर्वजन्म में अपने पति की निंदा करती है हे देवि उस पाप से वह पुष्पवती (रजस्वला) नहीं होती है ॥ ३ ॥

यदा रौप्यस्य वै वृक्षं स्वांगुष्ठपरिमाणकम् ।
पलपंचमिदं देवि दद्याद्वेदविदे प्रिये ॥ ४ ॥

जब वह अपने अंगुष्ठ प्रमाण चाँदी का वृक्ष बीस तोले का बनवाकर वेदपाठी ब्राह्मण को दान देवे ॥ ४ ॥

तदा पुष्पं भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ।
पतिं सुप्तं परित्यज्य परपुंसि रता भवेत् ॥ ५ ॥

हे देवि ! तब रजस्वला होती है। इसमें कुछ विचार नहीं करना। जो स्त्री शय्या पर सोते हुए अपने पति को छोड़कर पराये पुरुष के संग रमण करती है ॥ ५ ॥

तेन पापेन भो देवि वन्ध्या नारी प्रजायते ॥
सुवर्णस्य कृतं वृक्षं फलपुष्पसमन्वितम् ॥ ६ ॥

हे देवि ! उस पाप से वह स्त्री वन्ध्यात्व को प्राप्त होती है। सो फल-पुष्प आदिकों से युक्त सुवर्ण का वृक्ष बनवा-कर ॥ ६ ॥

दद्याद्वेदविदे नारी पतिसेवासु तत्परा ।
ततः पुत्रं प्रसूयेत सुवर्णपलतो दश ॥ ७ ॥

वेदपाठी ब्राह्मण को दान दे और अपने पति की सेवा में तत्पर रहे। तब पुत्र उत्पन्न होता है। यहाँ पर चालीस तोले सुवर्ण लेवे ॥ ७ ॥

परपुंसि रता नारी स्वपतिं मिष्टवादिनी ।
तेन पापेन भो देवि कन्यापत्यश्च जायते ॥ ८ ॥

हे देवि ! जो स्त्री परपुरुष से हमेशा रत रहे और अपने पति से मीठी-मीठी बातें बनाया करे, उसके कन्या ही पैदा होती है ॥ ८ ॥

रौप्यस्यैव कृतं लिंगं पलपंचदशेन तु।
पूजयित्वा प्रयत्नेन दद्याद्विप्राय श्रोत्रिणे ॥ ९ ॥

जब वह १५ पल अर्थात् ६० तोले चाँदी का शिवलिंग बनवाकर विधिपूर्वक पूजन करके वेदपाठी ब्राह्मण को देवे ॥ ९ ॥

ततः कन्या तु न भवेच्छुभं पुत्रं प्रसूयते।
सततं वै यदा नारी कुलटा धर्मचारिणी ॥ १० ॥
तेन कर्मविपाकेन नारी गर्भं विनश्यति।
ततः प्रपूजयेद्देवं शंखचक्रगदाधरम् ॥ ११ ॥

तो फिर कन्या संतान नहीं पैदा हो और सुन्दर पुत्र उत्पन्न होता है। और जो सदा पराये पुरुष में प्रीति करनेवाली स्त्री है, उसका गर्भ नष्ट हो जाता है। वह स्त्री शंख, चक्र, गदा धारण करनेवाले (विष्णु) देव का पूजन करे ॥ १०-११ ॥

प्रयागे मकरे स्नानं पतिना तु सहाचरेत्।
स्वर्णश्रृङ्गं रौप्यखुरं मुक्तालांगूलग्रन्थितम् ॥ १२ ॥
दद्यात्सदक्षिणं देवि वृषभं विदुषे तथा।
या पतिं दुर्बलं त्यक्त्वा परेण सह संगता ॥ १३ ॥

मकर के सूर्य में पति सहित प्रयागराज में विधिपूर्वक स्नान करे, और सोने के सींग, चाँदी के खुर, मोतियों से गूँथी हुई पूँछवाला वृषभ दक्षिणा के साथ विद्वान् को दे। जो अपने दुर्बल पति को छोड़ के पराये पुरुष के संग चली जाती है ॥ १२-१३ ॥

तेन पापेन भो देवि दरिद्रा पुत्रवर्जिता।
ततः कुमारीं संपूज्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् ॥ १४ ॥

हे देवि ! इस पाप से दरिद्र और पुत्रहीन होती है। वह कुमारी कन्या का पूजन करे और ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का पूजन करे ॥ १४ ॥

पूजयेदब्दमेकं तु प्रत्यहं नियता प्रिये।
वर्षे पूर्णे ततस्तस्यै वस्त्रं दत्त्वा विसर्जयेत् ॥ १५ ॥

हे प्रिये ! एक वर्ष प्रति दिन नियम से पूजन करे, वर्ष दिन पूर्ण होने पर उस कन्या को वस्त्र देके विसर्जन करे ॥१५॥

व्रतं सूर्यस्य वै कुर्यात्प्रणम्य प्रतिवासरम्।
तदा नारी पूर्वपापं दहत्येव न संशयः ॥ १६ ॥

और हमेशा हर महीने रविवार के दिन सूर्य का व्रत करके प्रणाम करे। तब वह स्त्री निश्चय अपने पूर्वजन्म के पापों को दग्ध करती है ॥ १६ ॥

मिष्टं भुंक्ते तु या नारी पत्युर्मिष्टं ददाति न।
तेन पापेन सा नारी मुखे दौर्गन्ध्यधारिणी ॥ १७ ॥

और जो स्त्री आप अकेले मीठा भोजन करे और अपने पति को मीठा भोजन करने को नहीं देवे, तो इस पाप से उसके मुख में दुर्गंधि होती है ॥ १७ ॥

गुडं वा मधु वा खण्डं विप्राय प्रयता सदा।
प्रयच्छति यदा देवि मुखे शुद्धिश्च जायते ॥ १८ ॥

गुड़ अथवा शहद वा खाँड़ को यत्न से सदा ब्राह्मण को दान देवे। हे देवि ! तब उसके मुख में शुद्धि होती है ॥ १८ ॥

स्वपतिघ्नी च या नारी रण्डा भवति नान्यथा।
तया नित्यं प्रपूज्या च तुलसी भक्तिभावतः ॥ १९ ॥

जो स्त्री पूर्वजन्म में अपने पति को मार डालती है उस पाप से वह रंडा होती है। इसमें संदेह नहीं है। वह भक्तिभाव से नित्य प्रति तुलसी का पूजन करे ॥ १९ ॥

ऊर्जे माघे च वैशाखे प्रातःस्नानं समाचरेत्।
एकादशीव्रतं नित्यं द्वादशाक्षर[1] विद्यया ॥ २० ॥

१—"ॐ नमो भगवते वासुदेवाय" यह द्वादशाक्षर मंत्र है।

कार्त्तिक, माघ, वैशाख इन महीनों में प्रातःकाल स्नान करके एकादशी व्रत करके, नित्य प्रति द्वादशाक्षर मंत्र का जप करे ॥ २० ॥

जपं कृत्वा प्रयत्नेन पतिरूपाय विष्णवे।
समर्पणं ततः कुर्यात् शीघ्रं पापं प्रणश्यति ॥ २१ ॥

यत्न से जप कर पीछे पतिरूप विष्णु के अर्थ समर्पण करे, तब शीघ्र ही पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ २१ ॥

यदा पापयुता नारी गर्भपातं च कारयेत्।
तेन दुश्चरितेनेह ज्वरकुक्षिप्रपीडनम् ॥ २२ ॥

यदि कोई स्त्री पूर्वजन्म में गर्भपात करावे उस दुष्टाचरण से इस जन्म में ज्वर और कुक्षि में पीड़ा रहती है ॥ २२ ॥

योनिशूलं भवेद्देवि गुदरोगो भगन्दरः।
तदा कुर्यात् प्रयत्नेन ब्राह्मणीं ब्राह्मणं तथा ॥ २३ ॥

हे देवि ! योनिशूल, गुदारोग, भगंदर ये रोग उत्पन्न होते हैं तब यत्न से ब्राह्मण ब्राह्मणी की मूर्ति ॥ २३ ॥

रौप्यस्य च महादेवि दशनिष्कस्य भक्तितः।
प्रत्यहं पूजयेद्देवि पत्युराज्ञां समाचरेत् ॥ २४ ॥

हे महादेवि ! चालीस मासे प्रमाण चाँदी की बनवावे, फिर प्रति दिन मूर्ति का पूजन करे और अपने पति की सेवा में तत्पर रहे ॥ २४ ॥

भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्घृतखण्डसमन्वितैः।
गोदानं च ततः कुर्यात् भक्त्या विद्योपजीविने ॥ २५ ॥

अनेक प्रकार के घृत खांड़युक्त अन्नों से ब्राह्मणों को भोजन करावे और भक्तिपूर्वक विद्या की आजीविका करनेवाले ब्राह्मण को गोदान देवे ॥ २५ ॥

यदा नारी च दुष्टात्मा स्वपतौ दुर्वचो वदेत् ।
तदा कण्ठे भवेद्रोगो नासिकायां च पीनसम् ॥ २६ ॥

जो दुष्ट नारी पूर्वजन्म में अपने पति को खोटा वचन बोली है उससे उसके कंठ में रोग और नासिका में पीनस रोग उत्पन्न होता है ॥ २६ ॥

वातगुल्मं शिवे वापि श्वेतपुष्पं प्रजायते ।
रौप्यपुष्पयुतं देवि सुवर्णेन समन्वितम् ॥ २७ ॥

हे शिवे ! अथवा उस स्त्री के वातगुल्म (बादी का गोला) वा श्वेत पुष्प, शरीर में सफेद चीतंगे हो जाते हैं। हे देवि ! चाँदी के पुष्पों से युक्त सोने से बनाया हुआ ॥ २७ ॥

दद्याद्विप्राय विदुषे तदा सप्तपलं शुभे ।
कन्यकां कलहा दुष्टा हन्ति नारी यदा हठात् ॥ २८ ॥

सातपल अर्थात् २८ तोले प्रमाण वृक्ष को विद्वान् ब्राह्मण को देवे । और जो दुष्टा नारी हठ से कलह करके कन्या को मार देती है ॥ २८ ॥

तदा कुष्ठं भवेद्देवि जन्मजन्मदरिद्रता ।
सुर्यस्य पूजनं कान्ते सदा नारी व्रतं चरेत् ॥ २९ ॥

उसके कुष्ठरोग होता है और जन्म-जन्म में दरिद्रता होती है। हे कान्ते ! वह सूर्य का पूजन करे और सदा स्त्री व्रत को नियमपूर्वक धारण करे ॥ २९ ॥

मासेमासे शनौ वारे वृक्षे विष्णुस्वरूपिणी ।
विधिवत्पूजनं कुर्यात् पूर्वपापं विशुध्यति ॥ ३० ॥

महीना-महीना प्रति शनिवार को विष्णुरूपी पीपल वृक्ष का विधिपूर्वक पूजन करे। ऐसा करने से पूर्वजन्म के पापों की शुद्धि होती है ॥ ३० ॥

श्वश्रूं च श्वशुरं चैव नित्यं क्रूरवचो वदेत् ।
तेन पापेन भो देवि श्वेतपुष्पं तनौ भवेत् ।। ३१ ।।

हे देवि ! जो स्त्री नित्य प्रति अपने सास-श्वशुर को क्रूर वचन बोलती है, उस पाप से इसके शरीर में सफेद दाग याने कुष्ठरोग उत्पन्न होता है ।। ३१ ।।

सूर्यस्य प्रतिमां देवि सुवर्णत्रिपलस्य च ।
दद्याद्वेदविदे देवि सूर्यस्यैव व्रतं चरेत् ।। ३२ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे
स्त्रीकर्मकथनन्नाम सप्तमोऽध्यायः ।। ७ ।।

हे देवि ! बारह तोले सुवर्ण की मूर्त्ति बनवाकर वेदपाठी ब्राह्मण को दान देवे और सूर्य का व्रत करती रहे । तब पाप नष्ट होगा, इसमें संदेह नहीं है ।। ३२ ।।

सप्तम अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ अष्टमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

भरण्याः प्रथमे पादे नीलकण्ठो भवेद् द्विजः ।
ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टः काकुत्स्थनगरे शुभे ।। १ ।।

शिव कहते हैं कि भरणी के प्रथम चरण में जन्म लेनेवाला मनुष्य, पहिले जन्म में नीलकण्ठ नामक ब्राह्मण के कर्म से भ्रष्ट काकुत्स्थ नाम सुन्दर नगर में उत्पन्न हुआ ।। १ ।।

वैश्येन सह मित्रत्वं क्रय्यं कृत्वा दिने दिने ।
ब्राह्मणी तत्र वृद्धासीत्पतिपुत्रविवर्जिता ।। २ ।।

वह वैश्य से मित्रता करके दिन दिन माल खरीदने का व्यवहार किया करता था । वहाँ एक वृद्धा ब्राह्मणी पति पुत्र करके हीन थी ।। २ ।।

तस्या द्रव्यं गृहीतं च विक्रयार्थं द्विजेन तु ।
ततो बहुदिनं यातं तस्या द्रव्यं न दत्तवान् ॥ ३ ॥

उसका धन विक्रय के अर्थ नीलकंठ ब्राह्मण ने कर्जा ले लिया। बहुत दिन व्यतीत हो गये, परन्तु उसका धन उसने नहीं दिया ॥ ३ ॥

एवं बहुतिथे काले तस्य मृत्युरजायत ।
ब्रह्मकर्मपरिभ्रंशान्नरके पतितं प्रिये ॥ ४ ॥

हे प्रिये ! पीछे उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई और ब्रह्मकर्म के भ्रष्ट होने से नरक में पड़ा ॥ ४ ॥

नरकान्निःसृतो देवि सर्पयोनिरजायत ।
सर्पयोनिफलं भुक्त्वा गर्दभत्वमुपागतः ॥ ५ ॥

हे देवि ! नरक से निकलकर साँपयोनि में उत्पन्न भया और सर्पफल को भोग के गर्दभयोनि में प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥

पुनः संप्राप्तवान् देवि मध्यदेशे च मानुषम् ।
धनधान्यसमायुक्तः पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ६ ॥

हे देवि ! फिर वह मध्य देश में मनुष्य भया । धनधान्य से युक्त और पुत्र कन्या से वर्जित हुआ ॥ ६ ॥

ततो बहुतिथे काले तदा कन्याभवत्प्रिये ।
स्वर्णपूर्वं हृतं देवि स्वर्णसम्बन्धजा सुता ॥ ७ ॥

हे प्रिये ! तब बहुत काल व्यतीत होने पर जिस स्त्री का सुवर्ण हरा था वह कन्या रूप से सोने के सम्बन्ध से पुत्री होती भई ॥ ७ ॥

ततः सा वर्द्धिता कन्या विवाहश्चाभवत्खलु ।
पितृमातृप्रिया नित्यं युवती तु यदाभवत् ॥ ८ ॥

उसके अनन्तर, उस कन्या का विवाह हो गया और माता पिता को प्रिय लगने लगी । जब जवान हो गई ॥ ८ ॥

तदा सा विधवा जाता मातापित्रोश्च दुःखदा ।

पुनः पुत्रविहीनत्वं प्रायश्चित्तमतः शृणु ॥ ९ ॥

तब वह विधवा हो गई तो माता पिता को दुःख देती रही फिर वह मनुष्य पुत्रहीन हो गया। अब इसके प्रायश्चित्त को सुनो ॥ ९ ॥

सूर्यमन्त्रस्य जाप्येन लक्षमेकं वरानने ।

पार्थिवस्यार्चनं सम्यक् त्र्यम्बकेति ततो जपेत् ॥ १० ॥

हे वरानने ! सूर्यमंत्र का एक लक्ष जप और पार्थिव शिवलिङ्ग का पूजन करावे फिर "त्र्यम्बकं यजामहे सुगंधि पुष्टिवर्धनम् । उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्" इस मंत्र को जपे ॥ १० ॥

होमं च कारयेद्धीमान् शतब्राह्मणभोजनम् ।

पायसं शर्करायुक्तं कारयेद्विधिपूर्वकम् ॥ ११ ॥

बुद्धिमान् पुरुष होम को करे और खीर खाँड़ से विधिपूर्वक सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ११ ॥

ततः कूपतडागौ च वापिकाश्च महापथे ।

एवंकृते न संदेहो वंशलाभो वरानने ॥ १२ ॥

यदा न क्रियते देवि तदा वंशो न जायते ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे भरणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

फिर बड़े मार्ग में कुआँ, बावड़ी, तालाब बनवावे। ऐसा करने से निश्चय वंश बढ़ता है। हे देवि ! जो ऐसा नहीं किया जावे तो वंश नहीं चलेगा ॥ १२-१३ ॥

आठवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ नवमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथ द्वितीये वक्ष्यामि भरण्याश्चरणे प्रिये ।
तस्य सर्वं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ १ ॥

शिव कहते हैं, हे प्रिये ! अब भरणी नक्षण के दूसरे चरण में जन्मवाले ने पूर्वजन्म में जो कर्म किया है वह कहते हैं ॥१ ॥

अयोध्यापुरतो देवि क्रोशमात्रे प्रदक्षिणे ।
जानकीनगरे रम्ये द्विजश्चासीत्स तस्करः ॥ २ ॥

हे देवि ! अयोध्यापुरी से दक्षिण की तरफ एक कोस पर जानकी नामवाले सुन्दर पुर में कोई ब्राह्मण उत्पन्न भया और वह चोर था ॥ २ ॥

ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टो मद्यपानरतः सदा ।
स वेश्या निरतो नित्यं पत्नी तस्य पतिव्रता ॥ ३ ॥

और ब्रह्म कर्म से भ्रष्ट मदिरा पीने में तत्पर था, प्रति दिन वेश्या के संग रमण किया करता था और उसकी स्त्री पतिव्रता थी ॥ ३ ॥

पतिभक्तिरता नित्यं देवपूजासु तत्परा ।
एकदा ब्राह्मणोप्येकः क्षुधार्तो दुर्बलः प्रिये ॥ ४ ॥

नित्य पति की भक्ति में रत और देवपूजन करने में तत्पर थी । हे प्रिये ! एक समय एक दुर्बल ब्राह्मण था ॥ ४ ॥

अन्नं च याचयामास लम्पटं प्रति वत्सले ।
दुर्वचश्चावदद्देवि भिक्षुकं प्रति दुर्बलम् ॥ ५ ॥

हे वत्सले ! उस लम्पट तस्कर ब्राह्मण से अन्न माँगा तब दुर्बल ब्राह्मण भिक्षुक को इसने खोटा वचन कहा ॥ ५ ॥

आत्मघातः कृतस्तेन दुर्बलब्राह्मणेन च ।
ततो बहुतिथे काले मरणं तस्य चाभवत् ॥ ६ ॥

फिर दुर्बल ब्राह्मण ने आत्मघात किया और बहुत काल बीतने पर उस लम्पट ब्राह्मण की भी मृत्यु हो गई ॥ ६ ॥

पातिव्रत्येन तत्पत्न्याः सत्यलोकं जगाम सः ।
बहुवर्षसहस्राणि स्वर्गे वासोऽभवत्प्रिये ॥ ७ ॥

अपनी स्त्री के पतिव्रता धर्म से सत्यलोक को गया । हे प्रिये ! स्वर्ग लोक में कई हजार वर्षों तक वास किया ॥ ७ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके स मानुषः ।
पूर्वपापफलाद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ८ ॥

फिर पुण्य क्षीण हो जाने पर उसने मृत्युलोक में मनुष्य का जन्म पाया । हे देवि ! पूर्वजन्म के पाप से पुत्र कन्या से हीन हो गया ॥ ८ ॥

तदुद्देशेन मरणं ब्राह्मणस्याभवत् पुरा ।
मद्यपानं कृतं तेन ततः कुष्ठी प्रजायते ॥ ९ ॥

क्योंकि इसके उद्देश्य से पहिले भिक्षुक ब्राह्मण की मृत्यु हुई थी और जो इसने पूर्वजन्म में मदिरापान की थी इससे कुष्ठी हुआ था ॥ ९ ॥

तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि यतः पापात्प्रमुच्यते ।
गायत्रीमूलमंत्रेण लक्षजाप्यं प्रयत्नतः ॥ १० ॥

अब शांति कहते हैं जिससे पूर्वजन्म के पापों से छूट जावे और गायत्री मन्त्र का एक लक्ष जप करावे ॥ १० ॥

दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं शतम् ।
विधिवत्पूजयेद्देवि कपिलां स्वर्णभूषिताम् ॥ ११ ॥

दशांश होम करे और सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे । हे देवि ! विधिपूर्वक स्वर्णभूषित कपिला गौ का दान करे ॥ ११ ॥

दद्याद्विप्राय तां देवि विदुषे ज्ञानरूपिणे ।
अतः पुत्रः प्रजायेत रोगनाशो भवेदनु ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे भरणी-
नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम
नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

हे देवि ! उस गौ को विद्वान् ब्राह्मण को दान दे तो इसके पुत्र उत्पन्न हो और रोगों का नाश हो ॥ १२ ॥

नवम अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ दशमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

एकोवणिग्जनो देवि काकुत्स्थनगरे शुभे ।
अग्निकोणे शिवपुरो योजनार्द्धप्रमाणके ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! एक वैश्य काशी से अग्निकोण में दो कोश की दूरी पर काकुत्स्थ नामक नगर में ॥ १ ॥

धनाढ्यो ह्यवसद्देवि वैश्यवत्तिरतस्सदा ।
विक्रयं कुरुते देवि गुडमन्नं रसादिकम् ॥ २ ॥

धन से पूर्ण निवास करता था और वैश्य वृत्ति में रत और सदा गुड़ अन्न रस आदिकों का लेनदेन करता था ॥ २ ॥

एकस्मिन् समये देवि गुडमादाय चाध्वनि ।
वृषभं भारसंपन्नं करोति स वरानने ॥ ३ ॥

हे देवि ! एक समय गुड़ लेकर मार्ग में जाते हुये वृषभ को भार से सम्पन्न करता हुआ ॥ ३ ॥

भारेण पीडितोऽनड्वान् स वै पथिगतः शिवे ।
न ज्ञातं तेन वै पापं वृषभार्तिसमुद्भवम् ॥ ४ ॥

हे शिवे ! वह वृषभ मार्ग में भार से पीड़ित हुआ। उसकी पीड़ा से उत्पन्न पाप को उसने नहीं जाना ॥ ४ ॥

एवं बहुतिथे काले बिल्वमङ्गलके पुरे ।
वैश्यस्य मरणं जातं सरय्वां सह भार्यया ॥ ५ ॥

इस प्रकार बहुत समय बीत जाने पर विल्वमङ्गल नामक नगर में सरयू नदी के किनारे पर स्त्रीसहित दोनों की मृत्यु हुई ॥ ५ ॥

स्वर्गलोके गतौ द्वौ च तौ तु क्षेत्रप्रभावतः ।
षष्टिवर्ष सहस्राणि स्वर्गे भुक्तं शुभं फलम् ॥ ६ ॥

पवित्र क्षेत्र के प्रभाव से दोनों स्वर्गलोक में गये। वहाँ साठ हजार वर्षों तक उत्तम फलों को भोगा ॥ ६ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके वरानने ।
अवन्तीनगरे जातौ धनधान्यसमन्वितौ ॥ ७ ॥

हे वरानने ! फिर पुण्य क्षीण हो जाने पर दोनों उज्जैनपुरी में धन धान्य सहित उत्पन्न हुए ॥ ७ ॥

मध्यदेशे विशालाक्षि पूर्वकर्मफलेन हि ।
पुत्रो न जायते देवि गर्भपातस्तथा शिवे ॥ ८ ॥

हे देवि ! पूर्व कर्म के प्रभाव से मध्यदेश में उत्पन्न हुये इनके पुत्र न होकर गर्भपात हुआ करता है ॥ ८ ॥

कन्यका वै प्रजायेत वारंवारं वरानने ।
शरीरे च ज्वरोत्पत्तिर्मध्यमा च प्रजायते ॥ ९ ॥

इनके वारंवार कन्या उत्पन्न होती है, और शरीर में मध्यम ज्वर रहता है ॥ ९ ॥

प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ।
सुवर्णस्य वृषं शुभ्रं पलपंचमितं तथा ॥ १० ॥

अब पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि के लिए प्रायश्चित्त कहते हैं। बीस तोले सुवर्ण का सुन्दर वृष बनावे ॥ १० ॥

प्रतिमां कारयेद्देवि वृषमेकं विभूषितम् ।
प्रपूज्य शिवमंत्रेण वैदिकेन यथाविधि ॥ ११ ॥

हे देवि ! एक वृष की मूर्ति बनाकर उसको विभूषित कर वेदोक्त शिवमन्त्र से विधिपूर्वक पूजन करे ॥ ११ ॥

प्रदद्याद्विदुषे तस्मै ज्ञानिने शुद्धबुद्धये ।
नमः शिवाय मन्त्रेण लक्षजाप्यं प्रयत्नतः ॥ १२ ॥

पीछे शुद्धिबुद्धिवाले विद्वान् ब्राह्मण को दान दे और 'ॐ नमः शिवाय' इस मन्त्र का एक लक्ष जप करवावे ॥ १२ ॥

रोगतो मुच्यते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे भरणीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम दशमोध्यायः ॥ १० ॥

हे देवि ! इस प्रकार रोग से मुक्त हो जाता है, इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ १३ ॥

दशम अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ एकादशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

शृणु देवि वरारोहे नणां कर्मविपाकजम् ।
प्रवक्ष्यामि न संदेहो यदि ते श्रवणे मतिः ॥ १ ॥
उत्तरे चाप्ययोध्यायास्ततः क्रोशत्रयोपरि ।
तत्र तस्थौ च भो देवि लोकशर्मेति नामतः ॥ २ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! मैं मनुष्यों के कर्मविपाक को निस्संदेह कहूँगा जो तुम्हारे चित्त में सुनने की है तो सुनो ।

अयोध्यापुरी से उत्तर दिशा में तीन कोश पर लोकशर्मा नामक ब्राह्मण रहता था ॥ १-२ ॥

तस्य पत्नी शुभाङ्गी वै लीलानाम्नीति विश्रुता ।
ब्राह्मणः कर्मविभ्रष्टो व्याधरूपो वरानने ॥ ३ ॥

उसकी सुन्दर अंगवाली स्त्री लीलानाम से प्रसिद्ध हुई । हे वरानने ! वह ब्राह्मण अपने कर्म से भ्रष्ट व्याधरूप होकर ॥ ३ ॥

मृगान् सबालकान् हत्वा पक्षिणो विविधानपि ।
बुभुजे पत्नीयुक्तस्तु तुतोष बहुधा तदा ॥ ४ ॥

छोटे मृगों को और अनेक पक्षियों को मारकर स्त्रीसहित उसने भोजन किया और बहुत प्रसन्न हुआ ॥ ४ ॥

तस्य पत्नी महादुष्टा मुखरा चञ्चला तथा ।
परपुंसि रता नित्यं धर्मकर्मविवर्जिता ॥ ५ ॥

उसकी स्त्री महादुष्टा, क्रोधिनी और चंचल प्रकृतिवाली थी । प्रति दिन परपुरुष से रमण किया करती और नित्य अपने धर्म कर्म से वर्जित रहती थी ॥ ५ ॥

एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ।
मरणं तस्य वै देवि स्वपुरे सर्पतस्तथा ॥ ६ ॥

हे वरानने ! इस प्रकार संपूर्ण अवस्था बीत गई फिर वृद्धावस्था में हे देवि ! यह अपने ही पुर में कहीं गमन करता हुआ मृत्यु को प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

पत्नी चैव तदा तस्य दुष्टा वै व्यभिचारिणी ।
उभौ च नरके यातौ स्वकर्मवशतः प्रिये ॥ ७ ॥

उसकी दुष्टा व्यभिचारिणी स्त्री भी मृत्यु को प्राप्त हुई । हे प्रिये ! फिर वे दोनों अपने कर्मवश नरक में गये ॥ ७ ॥

कुम्भीपाके महाघोरे नानानरकयातनाम् ।
भुक्त्वा बहुसहस्राणि पुनर्जातश्च सूकरः ॥ ८ ॥

महाघोर कुम्भीपाक नरक में अनेक पीड़ा को कई हजार वर्षों तक भोगकर वे फिर सूकर की योनि में पैदा हुए ॥ ८ ॥

योनिं च सूकरीं भुक्त्वा विडालत्वं पुनः प्रिये ।
ततो विडालयोनिं च भुक्त्वा गृध्रस्ततोभवत् ॥ ९ ॥

हे प्रिये ! सूकर की योनि को भोग करके फिर बिलाव की योनि, फिर गीध की योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ९ ॥

पुनः कर्मवशाद्देवि मानुषत्वं ततोभवत् ।
इहलोके वरारोहे पूर्वकर्मप्रभावतः ॥ १० ॥

हे देवि ! फिर अपने कर्मवश से मनुष्ययोनि में मृत्युलोक में उत्पन्न हुआ ॥ १० ॥

मृतवत्सा भवेन्नारी पुत्रश्चैव न जीवति ।
बहुरोगो भवेद्देवि ज्वरेणैव प्रपीडितः ॥ ११ ॥

इसकी स्त्री मृतवत्सा होती है । इसके पुत्र नहीं जीता, कई रोग और ज्वर से पीड़ित रहता है ॥ ११ ॥

पूर्वजन्मकृतं पापमिह जन्मनि भुज्यते ।
इहलोके कृतं कर्म जन्मजन्मनि भुज्यते ॥ १२ ॥

पूर्वजन्म में किया पाप इस जन्म में, और इस जन्म में जो कर्म किया जाता है वह अन्य जन्मों में भोग किया जाता है ॥ १२ ॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे मम ।
वंशगोपालमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ १३ ॥

हे पार्वती ! अब इसकी शांति को कहता हूँ सुनो । संतान-गोपाल मंत्र का लक्ष जप करावे ॥ १३ ॥

दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं शतम् ।
मन्त्रं च सम्प्रवक्ष्यामि येन पुत्रमवाप्स्यसि ॥ १४ ॥

दशांश होम और सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे। अब पुत्र-प्राप्ति का मंत्र कहता हूँ ॥ १४ ॥

मन्त्रः। ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ १५ ॥

यह मंत्र संतानगोपाल का है ॥ १५ ॥

ततो वै समृगान् कृत्वा मृगबालान् सपक्षिणः।
स्वर्णपञ्चपलेनैव मृगान् कृत्वा सबालकान् ॥ १६ ॥

इससे बच्चों समेत मृगों को और पक्षियों को बनवावे, बच्चों सहित मृग पाँच पल सुवर्ण का बनवावे ॥ १६ ॥

रौप्यस्यैव वरारोहे पक्षिणः पञ्च कारयेत्।
पूजनं विधिवत् कृत्वा सम्प्रार्थ्य परमेश्वरम् ॥ १७ ॥

हे वरारोहे! पाँच पक्षी चाँदी के बनवावे। विधिपूर्वक पूजन कर ईश्वर से प्रार्थना करे ॥ १७ ॥

स्रष्टा त्वं सर्वलोकानां सर्वकामप्रदः सताम्।
देवदेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल ॥ १८ ॥

हे जगन्नाथ! आप सब लोकों को उत्पन्न करनेवाले और श्रेष्ठ पुरुषों के सब कामों को करनेवाले हो ॥ १८ ॥

त्राहि मां कृपया देव पूर्वकर्मविपाकतः।
एवं संपूज्य देवेशं ततो विप्रं प्रपूजयेत् ॥ १९ ॥

हे देवि! कृपा करके पूर्व कर्म विपाक से मेरी रक्षा कीजिये, इस प्रकार विष्णु का पूजन करके ब्राह्मण की पूजा करे ॥ १९ ॥

सुवर्णेन वरारोहे अश्वादिवाहनेन वै।
प्रतिमामर्प्पयेद्देवि विप्राय ज्ञानरूपिणे ॥ २० ॥

हे वरारोहे! सुवर्ण तथा घोड़ा वगैरह ब्राह्मण को पूजित मूर्ति सहित दे देवे ॥ २० ॥

वापिका कूपखातं च पथि मध्ये वरानने।
प्रकरोति यदा देवी तदा पुत्रः प्रजायते।
रोगात्प्रमुच्यते देवि जीवेत् पुत्रो न संशयः ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे भरण्याश्चतुर्थ-
चरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

हे वरानने! मार्ग में बावड़ी या कुआँ खुदवाने से पुत्र उत्पन्न हो। हे देवि! रोग से छूटे और पुत्र भी उत्पन्न हो इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ २१ ॥

एकादश अध्याय समाप्त।

—:०:—

अथ द्वादशोऽध्यायः।

शिव उवाच।

कृत्तिकायां वरारोहे प्रथमे चरणे तथा।
यो जायेत नरो देवि तस्य वक्ष्ये शुभाशुभम् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि! कृत्तिका के प्रथम चरण में जिसका जन्म होता है, उस मनुष्य के शुभाशुभ को कहता हूँ ॥ १ ॥

ईशानेऽपि महादेवि कोशलापुरतोऽनघे।
राजपुत्रोवसत्कश्चिन्नगरे गूढसंज्ञके ॥ २ ॥

हे महादेवि! अयोध्यापुरी से ईशान की तरफ गूढ़ नामक नगर में एक राजपुत्र वास करता था ॥ २ ॥

नामतश्चाहिशर्म्मेति तस्य पत्नी कला शुभा।
धनधान्यसमायुक्तो रूपवान् मन्मथो यथा ॥ ३ ॥

अहिशर्मा नामक ब्राह्मण धनधान्य के सहित कामदेव के समान रूपवाला था, उसकी स्त्री का नाम कला था ॥ ३ ॥

याति चाखेटकं नित्यं मृगीं हत्वा च गर्भिणीम् ।
प्रत्यहं मृगमांसेन पोषयेत्स्वतनुं तथा ॥ ४ ॥

वह रोज शिकार को जाया करता था । एक दिन गर्भिणी मृगी को मारकर और प्रतिदिन मृगों के मांस से अपने शरीर की रक्षा करता था ॥ ४ ॥

शरीरे वृद्धता जाता दया तस्य न चाभवत् ।
ततो वै मरणाद्देवि सती भार्या ततोभवत् ॥ ५ ॥

फिर वृद्ध होने पर भी उसके दया नहीं हुई । फिर वह मर गया और उसकी स्त्री अपने पुरुष के साथ अग्नि में सती हो गई ॥ ५ ॥

सत्यलोकं गतस्तेन भार्यायाः सुकृतेन तु ।
भुक्तं कल्पमितं पुण्यं सत्यलोके वरानने ॥ ६ ॥

हे वरानने ! स्त्री के पुण्य से सत्यलोक को गया । एक कल्प तक सत्यलोक में पुण्य भोग किया ॥ ६ ॥

पुनः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वमुपागतः ।
पत्न्या सह ततो देवि कुले महति पूजिते ॥ ७ ॥

हे देवि ! फिर पुण्य क्षीण होने पर मनुष्य शरीर में स्त्री-सहित श्रेष्ठ कुल में जन्म हुआ ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मविपाकेन मृतवत्सत्वमाप्नुयात् ।
मृगीं सगर्भां हतवान् पूर्वजन्मनि सुव्रते ॥ ८ ॥

पूर्वकर्म से इसकी संतान नहीं जीती है । हे सुव्रते ! क्योंकि पूर्व जन्म में गर्भिणी मृगी को मारा था ॥ ८ ॥

तेन कर्मविपाकेन मर्त्यलोके ह्यपुत्रकः ।
तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रः प्रजायते ॥ ९ ॥

इस कर्मविपाक से मृत्युलोक में पुत्र नहीं हुआ । अब उसकी शांति कहता हूँ—जिससे सन्तान हो ॥ ९ ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां लक्षमेकं जपं तथा ।
दशांशहोमः कर्त्तव्यो विप्राणां भोजनं ततः ॥ १० ॥

गायत्री मन्त्र और 'जातवेदसे सुनवाम०' इस मन्त्र का लक्ष जप करावे। पीछे दशांशहोम और ब्राह्मणों को भोजन करवावे ॥ १० ॥

सौवर्णेन मृगीं कृत्वा मृगबालं तथैव च ।
पूजयित्वा विधानेन कपिलां च ततः प्रिये ॥ ११ ॥
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय सुतेजसे ।
हरिवंशस्य श्रवणं चण्डीपाठं शिवार्चनम् ॥ १२ ॥

सोने की मृगी बच्चोंसहित बनाकर उसका विधिपूर्वक पूजन करे। पीछे कपिला गौ विद्वान् ब्राह्मण को दे। हरिवंश, दुर्गापाठ को सुने और शिवपूजन करवावे ॥ ११-१२ ॥

एवं कृत्वा विधानेन शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ।
कन्यका न भवेत्तस्य गर्भपातो न जायते ॥ १३ ॥

इस प्रकार करने से शीघ्र पुत्र प्राप्त होगा और कन्या न होगी और गर्भपात भी नहीं होगा ॥ १३ ॥

रोगात्प्रमुच्यते रोगी सर्वकामः प्रजायते ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे
कृत्तिकानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम
द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

रोगी रोग से छूट जाय और सब कार्य सिद्ध हो ॥ १४ ॥

द्वादश अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ त्रयोदशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

नराणां पुण्यशीलानामिह जन्मसमुद्भवम् ।
सुखं वक्ष्याम्यहं देवि पूर्वकर्मफलं यतः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि ! पुण्यात्मा मनुष्यों के इस जन्म में पूर्व कर्म के प्रभाव से सुख की उत्पत्ति होती है, उसको कहता हूँ ॥ १ ॥

येन दत्तं पुरा दानं गोसुवर्णगजादिकम् ।
तत्फलेन महादेवि इह तस्मात् सुखं भवेत् ॥ २ ॥

हे महादेवि ! जिसने पूर्वजन्म में गौ, सोना, हाथी आदि का दान किया हो, इस जन्म में उस दान के प्रभाव से सुख प्राप्त होता है ॥ २ ॥

शरीरे जन्मतः कान्तिर्लक्ष्मीवान् गुणवानपि ।
सौख्यं प्रभुज्यते नित्यं पुत्रतो धनतस्तथा ॥ ३ ॥

जन्म से ही शरीर में कांति होती है। लक्ष्मीवान् और गुणी होता है, नित्यप्रति पुत्र और धन का सुख भोगता है ॥ ३ ॥

न रोगो जायते देवि दुःखं नैव कदाचन ।
इह लोके सुखं भक्त्वा कीर्तिमान् सुखमेधते ॥ ४ ॥

हे देवि ! रोग और दुःख कभी उसको नहीं होता है। इस जन्म में सुख भोग के कीर्तिमान् तथा सुखी होता है ॥ ४ ॥

अथ वक्ष्याम्यहं देवि नक्षत्रे कृत्तिकाह्वये ।
द्वितीय चरणे देवि पूर्वं यत् फलमुच्यते ॥ ५ ॥

हे देवि ! अब कृत्तिका नक्षत्र के दूसरे चरण में जन्म लेनेवाले ने जो कर्म किया है उसके फल को कहते हैं ॥ ५ ॥

कान्यकुब्जो द्विजः कश्चिदिन्द्रशर्मेति नामतः ।
पत्नी रुद्रमती देवि कुशीला कलहप्रिया ॥ ६ ॥

हे देवि ! कान्यकुब्ज इन्द्रशर्मा नामक ब्राह्मण था । इसकी स्त्री रुद्रमती दुष्टस्वभाव और कलह करनेवाली थी ॥ ६ ॥

वेदपाठरतो नित्यं षडङ्गस्य च पाठकः ।
एकदा तत्र वै देशे कश्चित् क्षत्री नराधिपः ॥ ७ ॥

ब्राह्मण वेदपाठ और नित्यप्रति षडङ्ग पाठ कर रहा था, एक समय उस देश में कोई क्षत्रिय राजा आया ॥ ७ ॥

मरणे तस्य वै याते तद्विप्रस्य निमन्त्रणम् ।
भुक्तं तेन तदा देवि क्षत्रियस्य क्रियासु च ॥ ८ ॥

उस राजा की मृत्यु हो गई तब उसने ब्राह्मण को निमंत्रण दिया था । हे देवि ! उस क्षत्रिय की क्रिया में ब्राह्मण ने भोजन किया ॥ ८ ॥

गृहीतं तस्य वै दानं शय्यां चैव गजादिकम् ।
सर्वं गृह्य गृहं गत्वा भुक्तं बहुदिनं प्रिये ॥ ९ ॥

और शय्या हस्ती आदि का दान लिया । हे प्रिये ! सम्पूर्ण दान लेकर घर में बहुत दिन तक भोग करता रहा ॥ ९ ॥

ततो बहुगते काले तस्य विप्रस्य पञ्चता ।
स यातो यमलोके वै नरके च सुदारुणे ॥ १० ॥

फिर बहुत समय बीतने पर उस ब्राह्मण की मृत्यु हुई, और वह यमराज के लोक में दारुण नरक भोगता रहा ॥ १० ॥

भुक्तं स्वकर्मजं दुःखं युगमेकं वरानने ।
गजव्याघ्रकृमेर्योनिं ततो भुंक्ते पृथक् पृथक् ॥ ११ ॥

हे वरानने ! एक युग तक अपने कर्म का दुःख भोगने के

बाद हस्ती, व्याघ्र, कृमि इन योनियों को अलग अलग भोगकर ॥ ११ ॥

मनुष्यत्वं ततः प्राप्तः पूर्वकर्मविपाकतः ।
पुत्रो न जायते देवि कन्यका विविधास्तथा ॥ १२ ॥

हे देवि ! पूर्व कर्म के प्रभाव से मनुष्ययोनि में पैदा हुआ । इसके पुत्र नहीं होता है, अधिक कन्या ही उत्पन्न होती हैं ॥ १२ ॥

मृतवत्सा भवेन्नारी रोगाश्च विविधाः प्रिये ।
शान्ति तस्य प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रमवाप्स्यते ॥ १३ ॥

हे प्रिये ! इसकी स्त्री के संतान नहीं जीती हैं, अनेक प्रकार के रोग बने रहते हैं । अब इसकी शांति कहता हूँ जिससे शीघ्र पुत्रप्राप्ति हो ॥ १३ ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन त्र्यम्बकेण तथा प्रिये ।
होमं च कारयामास षडंशं दानमेव च ॥ १४ ॥

हे प्रिये ! गायत्री मंत्र तथा 'त्र्यंबकं यजामहे०' इस मंत्र का लक्ष जप करावे, दशांश होम करे, घर के द्रव्य का छठा हिस्सा दान करे ॥ १४ ॥

दशवर्णाश्च गां दद्याद्विधिवद् ब्राह्मणाय वै ।
भोजयेच्छतसंख्यं च ब्राह्मणं वेदपारगम् ॥ १५ ॥

फिर विधिपूर्वक दश प्रकार के रंगोंवाली गौओं को वेदपाठी ब्राह्मण को दे और सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १५ ॥

एवंकृतेन भो देवि पुत्रश्चैव प्रजायते ।
रोगाणां च निवृत्तिः स्यात् पूर्वपापक्षयो भवेत् ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

हे देवि ! ऐसा करने से पुत्रप्राप्ति, रोगों की निवृत्ति, और सब पूर्वजन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १६ ॥

त्रयोदश अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ चतुर्दशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

तृतीयं तस्य वै देवि चरणं वदतः शृणु ।
कान्यकुब्जकुले कश्चिन्नगरे सूर्यसंज्ञके ॥ १ ॥
उद्योतशर्मा विख्यातस्तस्य स्त्री गिरिजाभवत् ।
वेदपाठरतो नित्यं दारिद्र्येणैव पीडितः ॥ २ ॥
कर्कशा भामिनी तस्य निष्ठुरं वदती स्मृता ।
एकदा सूर्यग्रहणे तैलकारस्तदागतः ॥ ३ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! अब कृत्तिका नक्षत्र के तीसरे चरण का फल सुनो । सूर्यपुर में कान्यकुब्ज उद्योतशर्मा नामक ब्राह्मण था उसकी स्त्री गिरिजा थी । यह ब्राह्मण नित्यप्रति वेदपाठ करने में तत्पर था और दारिद्रय से पीड़ित रहा करता था । इसकी स्त्री कर्कशा नामवाली थी इसको क्रूर वचन हमेशा बोला करती थी । एक समय सूर्यग्रहण में कोई तेली वहाँ आया ॥ १–३ ॥

गङ्गामध्ये ततो दानं तस्मै विप्राय वै शिवे ।
प्रददौ लक्षसंख्यां वै स्वर्णमुद्रां तु दक्षिणाम् ॥ ४ ॥

हे शिवे ! पीछे तैलकार ने इस ब्राह्मण को गंगाजी के मध्य में लाख मोहरों का दान दिया ॥ ४ ॥

प्रतिगृह्य ततो दानं गृहं गत्वा द्विजस्तदा ।
व्ययं करोति स्म तदा भार्यापुत्रेण चैव हि ॥ ५ ॥

तब ब्राह्मण उस दान को लेकर अपने घर प्रतिदिन स्त्री-पुत्रसहित खर्च करता था ॥ ५ ॥

वेदपाठं ततस्त्यक्त्वा प्रत्यहं ससुखं प्रिये ।
मरणं वृद्धसमये गृहे शय्योपरिस्थिते ॥ ६ ॥

हे शिवे ! पीछे वह वेदपाठ का त्याग करके हमेशा सुख को भोगा फिर वृद्धावस्था में घर में शय्या पर उसकी मृत्यु हो गई ॥ ६ ॥

स्वर्णमध्ये च दानं वै न दत्तं गिरिनन्दिनि ।
स गतो नरके घोरे यमराजेन प्रेरितः ॥ ७ ॥

हे गिरिजे ! इसने सुवर्ण के लोभ से कुछ भी दान नहीं किया, इसलिये यह यमराज के द्वारा घोर नरक में गया ॥ ७ ॥

भुंक्ते नरकजं दुःखं स्त्रीपुत्रेण संयुतः ।
युगमेकं वरारोहे ! प्रेतत्वं काकतां गतः ॥ ८ ॥

हे वरारोहे ! स्त्रीपुत्रसहित नरक में एक युग तक भोग किया, फिर कौआ हुआ ॥ ८ ॥

ततः शृगालयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः ।
पूर्वजन्मकृतं कर्म इहलोके प्रभुज्यते ॥ ९ ॥

पीछे गीदड़ की योनि, फिर मनुष्ययोनि में पैदा हुआ है क्योंकि पूर्वजन्म का कर्म इस लोक में भोगना पड़ता है ॥ ९ ॥

पाठयामास वै वेदान् ब्राह्मणेभ्यो वरानने ।
तत्संचितफलाद्देवि महदैश्वर्यमाप्नुयात् ॥ १० ॥

हे देवि ! वह ब्राह्मणों को वेद पढ़ाता हुआ उस कर्म के फल से बड़े ऐश्वर्य को पहुँचा ॥ १० ॥

भार्या मृता ततः पुत्रो द्वितीया च विवाहिता ।
शरीरे बहवो रोगाः सुखं तस्य न जायते ॥ ११ ॥

स्त्री मर गई, फिर पुत्र मर गया, पीछे दूसरी स्त्री विवाही। इसके शरीर में बहुत से रोग हैं, सुख कभी नहीं होता है ॥ ११ ॥

वृद्धे सति वरारोहे पुत्रः शत्रुर्भवेदिति ।
मृतवत्सा भवेन्नारी पूर्वजन्मविपाकतः ॥ १२ ॥

हे वरारोहे ! वृद्धावस्था में इसका पुत्र ही शत्रु हो, या पूर्वजन्म से इसकी स्त्री के सन्तान ही न जीवें ॥ १२ ॥

तस्य पुण्यमहं वक्ष्ये ततो रोगो निवर्तते ।
पुनः पुत्रो भवेद्देवि कन्यका नैव जायते ॥ १३ ॥

हे देवि ! इसके पुण्य को मैं कहता हूँ जिससे रोग निवृत्त होकर पुत्र पैदा हो कन्या न हो ॥ १३ ॥

जातवेदादिमंत्रेण जपं वै कारयेद्बुधः ।
लक्षत्रयं प्रयत्नेन ततो होमं तिलादिभिः ॥ १४ ॥

'जातवेदसे सुनवाम०' इस मंत्र से तीन लक्ष जप करावे। पीछे तिल आदि से होम करवावे ॥ १४ ॥

चतुरस्रे शुभे कुंडे हरिवंश श्रवणं ततः ।
भूदानं विधिवत्कुर्याच्छय्यां पात्राय दापयेत् ॥ १५ ॥

चौकुंठे शुभ कुंड में होम करावे, हरिवंशपुराण सुने, सुपात्र ब्राह्मण को पृथ्वी व शय्या का दान विधिपूर्वक दे ॥ १५ ॥

एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भविष्यति ।
पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

हे देवि ! ऐसा करने से निश्चय रोग का नाश होगा, पुत्र भी उत्पन्न होगा, इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिए ॥ १६ ॥

चतुर्दश अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथपञ्चदशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कान्यकुब्जो द्विजः कश्चिन्नर्मदादक्षिणे तटे ।
माहिष्मत्यां वसत्येको द्विजः परमवैष्णवः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, नर्मदा नदी के दक्षिण तट पर माहिष्मती नगरी में परम वैष्णव ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

नामतो योधशर्मेति तस्य भार्या तु दानवी ।
प्रत्यहं वैश्यवृत्तिस्तु विक्रयं चाकरोत्सदा ॥ २ ॥

योधशर्मा नाम था, उसकी स्त्री दानवी थी, प्रतिदिन वैश्य-वृत्ति (बेचने का काम) करता था ॥ २ ॥

तत्र वैश्य उवासैको धनधान्यसमन्वितः ।
वैश्यतस्तेन विप्रेण स्वर्णं नीतमृणं बहु ॥ ३ ॥
ततो बहुतिथे काले स विप्रो मृत्युमागतः ।
ऋणं तस्मै न दत्तं वै वैश्याय तु स्वकर्मणे ॥ ४ ॥

वहाँ धनाढ्य एक वैश्य था, उसके पास से उस ब्राह्मण ने बहुतसा सोना कर्जा में लिया था, फिर बहुत समय बीतने पर वह ब्राह्मण मर गया और अपने कर्म करनेवाले वैश्य को कर्जा नहीं दिया ॥ ३-४ ॥

मरणे सति विप्रस्तु रौरवं नरकं गतः ।
वैश्यकर्म कृतं तेन स्वकर्म परिमुच्यते ॥ ५ ॥

तब वह ब्राह्मण मृत्यु को प्राप्त होकर रौरवनरक में गया, क्योंकि इसने वैश्यकर्म किया और अपने धर्म से भ्रष्ट रहा ॥ ५ ॥

विंशद्वर्षसहस्राणि यमलोके वसत्यसौ ।
नरकान्निःसृतो देवि यातो वृषभशूकरौ ॥ ६ ॥

यह बीस हजार वर्षों तक यमराज के यहाँ रहा, हे देवि ! नरक से निकलकर बैल और शूकर की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

योनिद्वयफलं भुक्त्वा मनुष्यत्वमवाप्नुयात् ।
धनधान्यसमायुक्तस्तत्पुण्यस्य प्रभावतः ॥ ७ ॥

इन दोनों योनियों के फल को भोग करके मनुष्य की योनि में जन्म हुआ, उस पुण्य के प्रभाव से धनधान्य से युक्त है ॥ ७ ॥

ऋणसंबन्धतो देवि वैश्यः पुत्रत्वमागतः ।
प्रत्यहं तस्य वै द्रव्यं व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ ८ ॥
मद्यवेश्याप्रदानेन धनं सर्वं व्ययं कृतम् ।
यदा पुत्रः समुत्पन्नो युवा तस्य भवेत्प्रिये ॥ ९ ॥
तदा मृत्युमवाप्नोति शोकं दत्त्वा तयोस्तदा ।
पुनः पुत्रो न जातो वै पूर्वजन्मविपाकतः ॥१०॥

हे देवि ! ऋणसंबंध से वैश्य पुत्र हुआ, प्रतिदिन उसके धन को खर्च करके मद्यपान और वेश्या को देने से संपूर्ण धन को खर्च कर डाला । हे प्रिये ! जब इसका पुत्र जवान हुआ, फिर दोनों स्त्री-पुरुषों को शोक देकर मर गया और पूर्वजन्म के प्रभाव से इसके पुत्र नहीं उत्पन्न हुआ ॥ ८-१० ॥

प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ।
गायत्रीलक्षजाप्येन तदर्थं वाटिका पथि ॥ ११ ॥

अब पूर्वजन्म के पापशुद्धि के लिए प्रायश्चित्त कहता हूँ—गायत्री का लक्ष जप करावे। और मार्ग में धर्मशाला बनवावे ॥ ११ ॥

कूपं प्रयत्नतः कुर्यात्तडागं विधिपूर्वकम् ।
होमं वै कारयेच्चैव विधिपूर्वं वरानने ॥ १२ ॥

हे वरानने ! विधि से कुआँ या तालाब को बनवावे और होम करवावे ।। १२ ।।

पलपञ्चसुवर्णस्य दानं दद्याद्विशेषतः ।
दशवर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः ।। १३ ।।

विशेष करके पाँच पल (बीस तोले) सोने का दान करे, दश प्रकार की वर्णोंवाली सोने की और वस्त्रों के सहित गौओं का दान करे ।। १३ ।।

भोजयेच्छतविप्रांस्तु यथाशक्ति सदक्षिणान् ।
एवंकृते न संदेहो रोगनाशो भवेदनु ।। १४ ।।

और सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे, यथाशक्ति दक्षिणा देवे । ऐसा करने से वातरोग का नाश हो जायगा ।। १४ ।।

पुत्राः पौत्रा विवर्द्धन्ते मम वाक्यं न चाऽन्यथा ।। १५ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चदशोऽध्यायः ।। १५ ।।

इससे पुत्र-पौत्रों की वृद्धि होगी, यह मेरा वाक्य अन्यथा नहीं होगा ।। १५ ।।

पञ्चदश अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ षोडशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मनक्षत्रजं फलम् ।
रोहिण्याः प्रथमे पादे यस्य जन्म च जायते ।। १ ।।

शिवजी कहते हैं, रोहिणी नक्षत्र के पहले चरण में जन्मवाले मनुष्य के फल को कहता हूँ ।। १ ।।

तस्य कर्म पुरा देवि संचितं संब्रवीम्यहम् ।
अन्तर्वेद्यां द्विजः कश्चिद्ध्रुोपनामा वसत्प्रिये ।। २ ।।

हे देवि ! उसके पूर्वसंचित कर्म को ठीक तौर पर कहता हूँ। गंगा-यमुना के मध्य देश में कोई भोप नामक ब्राह्मण रहता था ॥ २ ॥

ब्रह्मकर्मविहीनश्च चौरकर्मरतस्सदा ।
सार्द्धं चौरेण भो देवि बहुद्रव्यमुपार्जितम् ॥ ३ ॥

हे देवि ! वह ब्रह्मकर्म से हीन था और सदा चोरी में लगा रहता था। उसने चोरों के साथ मिलकर बहुत सा धन इकट्ठा किया ॥ ३ ॥

परस्त्रीलम्पटो देवि स्वां भार्यां परिमुच्य च ।
एवं बहुगते काले कालवश्यस्ततोभवत् ॥ ४ ॥

हे देवि ! यह अपनी स्त्री को त्याग करके दूसरे की स्त्री से संबंध रखता था। इसी तरह बहुत दिनों में मर गया ॥ ४ ॥

यमः कर्मप्रभावेण नरके नामकर्दमे ।
वासयामास भो देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥

हे देवि ! यम ने कर्म के प्रभाव से इसे 'कर्दम' नरक में साठ हजार वर्ष तक रक्खा ॥ ५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि कुक्कुटत्वं प्रजायते ।
ततो यातो महादेवि नरयोनिं च दुर्लभाम् ॥ ६ ॥

हे देवि ! नरक से निकलकर मुरगा का जन्म पाया, फिर दुर्लभ मनुष्ययोनि को प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

पाण्डुरोगेण संयुक्तः पुत्रो नैव प्रजायते ।
वेश्याः कन्याः प्रजायन्ते पुत्रस्य मरणं भवेत् ॥ ७ ॥

पांडुरोग (पीलिया) है। इसके पुत्र नहीं होता है, और जिन वेश्याओं से रमण करता था वे इसकी पुत्री हुईं और पूर्व-जन्म के पाप से पुत्र होकर मर जाता है ॥ ७ ॥

तस्योपदानं वक्ष्यामि सत्सर्वं शृणु हे प्रिये ।
ॐ नमः शिवाय मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ ८ ॥

हे प्रिये ! अब इसका उपाय कहते हैं—"ॐ नमः शिवाय" इस मंत्र का लक्ष जप करावे ॥ ८ ॥

पार्थिवं तिलपिष्टेन गोमयेन तथा प्रिये ।
पूजयामास विधिवद्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ ९ ॥

हे प्रिये ! तिल की पीठी से अथवा गोबर से पार्थिव शिव बना करके भक्तिपूर्वक चित्त स्थिर करके शिव का पूजन करे ॥ ९ ॥

होमं वै कारयेद्देवि षडंशं दक्षिणां ततः ।
आचार्याय सुवर्णं च पूर्वपापविशुद्धये ॥ १० ॥

हे देवि ! होम करावे, अपने द्रव्य का छठा हिस्सा दान करे । आचार्य को पापनिवृत्ति के लिए सोने का दान दे ॥ १० ॥

कूपखातं ततो देवि वाटिकां चैव कारयेत् ।
एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भवेदनु ॥ ११ ॥

हे देवि ! कुआँ खुदवावे, धर्मशाला बनवावे, ऐसा करने से वातरोग का नाश होगा ॥ ११ ॥

कन्यका न भवेद्देवि पुत्रश्चैव प्रजायते ।
मृतवत्सा लभेत्पत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १२ ॥

इतिश्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

हे देवि ! फिर कन्या जन्म न होकर पुत्रवान् हो, वृद्धि हो और जिस स्त्री के संतान नहीं जीती हो उसके दीर्घायु पुत्र हो ॥ १२ ॥

षोडश अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ सप्तदशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

द्वितीयचरणं देवि रोहिण्याः शृणु विस्तरम् ।
गङ्गाया उत्तरे कूले पुरं वैमानिकं शुभम् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! रोहिणी के द्वितीय चरण का फल सुनो । गंगा के उत्तर तट पर सुन्दर वैमानिक नामक नगर था ॥ १ ॥

वासुदेवश्च नाम्ना हि ब्राह्मणो वेदपारगः ।
लीलावती पवित्रा च तस्य पत्नी शुभा तथा ॥ २ ॥

वहाँ वासुदेव नाम का वेदपाठी ब्राह्मण रहता था, और उसकी स्त्री पवित्र सुन्दरी थी ॥ २ ॥

युवती रूपसम्पन्ना स्वैरिणी च सदा प्रिये ।
बहुद्रव्यं तया लब्धं परपुंसः प्रसङ्गतः ॥ ३ ॥

हे प्रिये ! जवान और रूपवती थी । वह सदा अपनी इच्छा से विचरनेवाली थी और परपुरुष के संग रहकर बहुत सा धन इकट्ठा किया ॥ ३ ॥

पापादुपार्जितं द्रव्यं भुज्यते पतिना सह ।
गङ्गायां मरणं तस्य विप्रस्य भार्यया सह ॥ ४ ॥

उस पाप से इकट्ठा हुआ द्रव्य अपने पति के साथ भोगा फिर स्त्री सहित वह ब्राह्मण गंगा के किनारे पर मर गया ॥ ४ ॥

स्वर्गवासो हि दम्पत्योः षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके वरानने ॥ ५ ॥

हे वरानने ! साठ हजार वर्षों तक स्त्री पुरुष का स्वर्ग में वास रहा । पुण्य क्षीण होने पर मृत्युलोक में उत्पन्न हुए ॥ ५ ॥

धनधान्यसमायुक्तो धर्मे मतिरथाधिका ।

पुत्राश्च बहवस्तेषां मरणं चैव जायते ॥ ६ ॥

धन धान्य से युक्त धर्म में प्रीति रखनेवाला हुआ और कई पुत्र उत्पन्न हुये और मर गये ॥ ६ ॥

कन्यका विविधास्तासां मृत्युश्चैव प्रजायते ।

पुनश्च तस्य हानिश्च बहुरोगःप्रजायते ॥ ७ ॥

कई कन्याएँ हुईं उनकी भी मृत्यु हो गई । इसके संतान की हानि और बहुत बड़ा रोग उत्पन्न होता है ॥ ७ ॥

तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।

त्र्यम्बकेति च मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ ८ ॥

इसने जो पूर्व जन्म में किया उसकी शांति कहता हूँ । त्र्यम्बकेति इस मन्त्र का लक्ष जप करावे ॥ ८ ॥

देवस्य प्रतिमां कृत्वा पूजयेच्चैव शास्त्रतः ।

सुवर्णस्य शिवं कुर्यात् पलपञ्चप्रमाणकम् ॥ ९ ॥

महादेव की मूर्ति बनवाकर शास्त्र के अनुसार पूजन करे और पांच पल सोने की शिवमूर्ति बनवावे ॥ ९ ॥

धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्मन्त्रेणानेन पूजयेत् ।

धूप, दीप, नैवेद्य इत्यादि से नीचे लिखे मंत्रों से पूजन करे ।

ॐ ह्लौं ह्लीं जूं सः हराय नमः । इति प्रतिमास्थापनम् । रौप्यपात्रे । ॐ ह्लौं ह्लीं जूं सः महेश्वराय नमः इति धूपम् । ॐ ह्लौं ह्लीं जूं सः पिनाकधृजे नमः इति स्पृश्यावाहनम् ।

आवाहये महादेव देवदेव सनातन ।

इमां पूजां गृहाण त्वं मम पापं व्यपोहतु ॥

ॐ ह्लौं ह्लीं जूं सः यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं सोहं शङ्करस्य सर्वेन्द्रियवाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राण इहागत्य इह जीवस्थितिं

सुखं चिरं तिष्ठन्तु। इति प्राणप्रतिष्ठां विधाय, शिवं ध्यायन् पूजयेत्। ॐ ह्लौं ह्लीं जूं सः पशुपतये नमः इति पञ्चामृतेन स्नानम्। ॐ ह्लौं ह्लीं जूं सः शिवाय नमः इति चन्दनादिभिः पूजनम्। ॐ ह्लौं ह्लीं जूं सः महादेवाय नमः इति विसर्जनम्।

गोदानं च ततः कुर्यात् कृष्णां च कपिलां ततः।
विप्राय वेदविदुषे सुवर्णं दक्षिणां ततः॥ १०॥
प्रदक्षिणां ततः कुर्याद्विप्रस्येशानरूपिणः।
शतसंख्यद्विजांश्चैव भोजयित्वा विसर्जयेत्॥ ११॥

काली या कपिला गौ को वेदपाठी ब्राह्मण को दे, सुवर्ण की दक्षिणा दे, फिर शिवस्वरूप ब्राह्मण की प्रदक्षिणा करे, सौ ब्राह्मणों का भोजन द्वारा सत्कार करे॥ १०-११॥

प्रयागे मकरे माघे पत्न्या सह वरानने।
स्नानं कुर्याच्च भो देवि व्रतमेकादशीं चरेत्॥ १२॥

हे वरानने! माघ मास में मकर संक्रांति को प्रयाग में स्नान करे और एकादशी का व्रत करे॥ १२॥

एवंकृते न संदेहो रोगनाशश्च जायते।
पुत्रं चापि लभेद्देवि चिरजीविनमुत्तमम्॥ १३॥
यद्देवं च प्रकुरुते सप्तजन्मसपुत्रकः॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम सप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

हे देवि! ऐसा करने से रोग नाश होता है, और चिरंजीवी पुत्र पैदा होता है। जो ऐसा न करे तो सात जन्म तक पुत्र न होवे॥ १३-१४॥

सत्रहवाँ अध्याय समाप्त

——:०:——

अथाष्टादशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गोमत्या उत्तरे कूले क्रोशद्वयप्रमाणतः ।
विष्णुदासेति विख्यातो देवीपुत्रो वरानने ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे वरानने ! गोमती नदी के उत्तर तट से दो कोस दूर विष्णुदास नाम से प्रसिद्ध और देवीपुत्र मनुष्य जाति का था ॥ १ ॥

शङ्करे वै पुरे रम्ये तस्य भार्या च सुन्दरी ।
कर्कशा कुलटा सा वै पतिविद्वेषकारिणी ॥ २ ॥

वह सुन्दर शंकरपुर में पैदा हुआ और उसकी स्त्री सुन्दरी कर्कशा और जारिणी थी । वह अपने पति से रोज झगड़ा किया करती थी ॥ २ ॥

शुश्रूषां कुरुते नैव श्वश्रूणां च वरानने ।
स्वधर्मनिरतो नित्यं शिवभक्तिपरायणः ॥ ३ ॥

हे वरानने ! अपनी सास की सेवा नहीं करती थी, और विष्णुदास अपने धर्म में दृढ़ होकर ठीक रीति से शिवजी की भक्ति करता था ॥ ३ ॥

कृषिं वै सोकरोच्चैव विप्राणां चैव सेवकः ।
पित्रोश्च परमो दासः सदा च प्रियभाषणः ॥ ४ ॥

खेती भी करता, ब्राह्मणों का सेवक और माता पिता का परमभक्त था, और सदा मीठा बोलता था ॥ ४ ॥

एतस्मिन्नगरे देवि व्रती कश्चित्समागतः ।
भिक्षार्थमागतो द्वारे तया भिक्षा ददे न च ॥ ५ ॥

हे देवि ! इस नगर में ब्रह्मचारी भिक्षा के लिए विष्णुदास के द्वार पर आया, लेकिन इसकी स्त्री ने भिक्षा नहीं दिया ॥ ५ ॥

अपभ्रंशमवोचत्सा भिक्षुकं प्रति सुन्दरी ।
विष्णुदासो गृहे नासीत्तद्दिने कुत्रचिद्गतः ॥ ६ ॥

वह सुन्दरी स्त्री उस भिक्षुक को भला बुरा कहने लगी । उस दिन विष्णुदास घर नहीं था, कहीं चला गया था ॥ ६ ॥

एवं बहुगते काले तस्य मृत्युर्बभूव ह ।
भक्तत्वान्मम भो देवि यक्षलोके गतः स वै ॥ ७ ॥

हे देवि ! बहुत दिनों के बाद उस विष्णुदास की मृत्यु हो गई । वह मेरा भक्त था इसलिए यक्षलोक में गया ॥ ७ ॥

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि यक्षेण सह भोगवान् ।
तस्य भार्या मृता क्रूरा श्वश्रूणां दुःखदायिनी ॥ ८ ॥

तीस हजार वर्षों तक कुबेर लोक में भोग किया फिर सास श्वशुर को दुःख देनेवाली उसकी स्त्री भी मर गई ॥ ८ ॥

सा गता नरके घोरे रौरवे नाम्नि भामिनि ।
भुक्त्वा नरकजं दुःखं पुनर्व्याघ्री बभूव ह ॥ ९ ॥

हे भामिनि ! वह रौरव नरक में गई और नरक भोग कर पीछे व्याघ्री की योनि में उत्पन्न हुई ॥ ९ ॥

पुनः शृगाली वै जाता मानुषी च ततोऽभवत् ।
पुनर्विवाहिता सा वै मर्त्यलोके वरानने ॥ १० ॥

फिर शृगाली हुई । हे वरानने ! इस लोक में फिर वही इसके साथ विवाही गई है ॥ १० ॥

वन्ध्या चैव विशालाक्षि पूर्वजन्मविपाकतः ।
रोगो बहु भवेद्देवि सुखं नैवोपजायते ॥ ११ ॥

हे विशालाक्षि ! पूर्वजन्म के विपाक से यह स्त्री वंध्या भी है, इसके कई रोग हैं, इसको सुख कभी नहीं होता ॥ ११ ॥

तस्याः पुण्यं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापप्रणाशनम् ।
स्वपतिं प्रत्यहं माघे स्नापयेदुष्णवारिणा ॥ १२ ॥

अब पूर्वजन्म के पाप नष्ट करनेवाले उसके पुण्य को कहता हूँ। प्रतिदिन माघ महीने में गरम जलसे अपने पति को नियमपूर्वक स्नान करावे ॥ १२ ॥

स्वश्रूचरणयोः प्रातर्नमस्कुर्यात् प्रयत्नतः ।
अलाबूं नैव खादेत्तु षोडशाब्दप्रमाणतः ॥ १३ ॥

और प्रति दिन प्रातःकाल उठकर सास को प्रणाम करे, बाद शौचादि क्रियायें कर अपनी गृहस्थी का कार्य करे और सोलह वर्ष तक लौकी का भक्षण न करे ॥ १३ ॥

माघे नियमतो देवि पतिना सह सुव्रते ।
स्नानं प्रतिदिनं कुर्याद्दीपं दद्याद्यथाविधि ॥ १४ ॥

हे देवि ! माघ महीने में नियम से अपने पति के साथ स्नान करे और विधिपूर्वक दीपदान करे ॥ १४ ॥

ततः कृत्वा सुवर्णस्य वृक्षं वै द्विपलस्य च ।
रौप्यां दशपलां देवि वेदीं शुभ्रां च कारयेत् ॥ १५ ॥

फिर दोपल सोना अर्थात् आठ तोले सोने का वृक्ष बनवावे और दश पल प्रमाण चाँदी की वेदी बनावे ॥ १५ ॥

वृक्षं तस्यां च संस्थाप्य कल्पवृक्षस्वरूपिणम् ।
पूजयित्वा ततो देवं शंखचक्रगदाधरम् ॥ १६ ॥

उस वेदी पर कल्पवृक्ष स्वरूप वृक्ष को स्थापित कर शंख, चक्र और गदाधारी विष्णु की पूजा करे ॥ १६ ॥

सगणं देवदेवेशं वृषकेतुं वरप्रदम् ।
ततो वै पूजयेद्देवि विधिवच्चारुरूपिणम् ॥ १७ ॥

हे देवि ! पीछे विधिपूर्वक सुंदर रूपवाले वरदायक महादेव का गणसहित पूजन करे ॥ १७ ॥

वस्त्रकांचनकेयूरैः कुंडलाभ्यां विशेषतः ।
तद् वृक्षं वेदिकायुक्तं तस्मै विप्राय दापयेत् ॥ १८ ॥

वस्त्र, सोने के आभूषण कुंडल सहित वृक्ष को वेदी समेत ब्राह्मण को दे देवे ॥ १८ ॥

अन्यान्विप्रान् वरारोहे भोजयेद्विविधै रसैः ।
पायसैर्मोदकैः शुभ्रैः षट्षष्टिप्रमितान्प्रिये ॥ १९ ॥

हे प्रिये ! अन्य ६६ ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के खीर, लड्डू आदि रसों का भोजन करावे ॥ १९ ॥

ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सनूपुराम् ।
सप्तम्यां रवियुक्तायां व्रतं कुर्यान्मम प्रिये ॥ २० ॥

हे प्रिये ! फिर सोने के सींग और खुरों के आभूषणों से युक्त कपिला गौ का दान करे और रविवार सप्तमी का मेरा व्रत करे ॥ २० ॥

गोपालस्य च मंत्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥ २१ ॥

गोपाल मंत्र का लक्ष जप करावे और दशांश होम, तर्पण और मार्जन करावे ॥ २१ ॥

एवंकृते न संदेहः शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ।
कन्यका नैव जायन्ते रोगश्चैव निवर्त्तते ॥ २२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रोहिणीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

ऐसा करने से पुत्र उत्पन्न होता है, कन्या की उत्पत्ति नहीं होती है और रोग दूर होते हैं ॥ २२ ॥

अठारहवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथैकोनविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

रोहिण्याश्चरणं देवि चतुर्थं साम्प्रतं शृणु ।
यत्कृतं संचितं पूर्वमिह जन्मनि तत्फलम् ॥ १ ॥

हे देवि ! अब रोहिणी के चतुर्थ चरण का फल सुनो जो पूर्व जन्म का किया हुआ है, और इस जन्म में भोगा जाता है ॥ १ ॥

बुद्धिशर्मा द्विजः कश्चिदन्तर्वेद्यां बभूव ह ।
पुरोहितो महाभ्रष्टः परपाके सदा रतः ॥ २ ॥

एक बुद्धिशर्मा नामक ब्राह्मण गंगा यमुना के मध्यदेश में रहता था वह पुरोहित महाभ्रष्ट सदा दूसरों की रसोई बनाता था ॥ २ ॥

भार्या पररता तस्य चंचला चपला सदा ।
धनं च संचितं तेन प्रतिग्रहप्रसंगतः ॥ ३ ॥

उसकी स्त्री परपुरुष से रत और चंचल तथा चपला थी । ब्राह्मण ने सदा प्रतिग्रह के प्रभाव से धन संचित किया ॥ ३ ॥

मरणं तस्य वै जातं पश्चाद्भार्या मृता तु सा ।
गतोऽसौ नरके घोरे पूर्वजन्मविपाकतः ॥ ४ ॥

वह ब्राह्मण मर गया फिर उसकी स्त्री भी मर गई दोनों पूर्व जन्म के किये हुए कर्म से घोर नरक में गये ॥ ४ ॥

युगमेकं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
वषयोनि च संप्राप्तो रासभत्वं ततोऽलभत् ॥ ५ ॥

हे वरारोहे ! एक युग तक नरक की पीड़ा भोग करके वृषभयोनि में गया पीछे गधा की योनि में गया ॥ ५ ॥

मानुषत्वं पुनर्याति मध्यदेशे वरानने ।
अपुत्रता भवेद्देवि कन्यका चैव जायते ॥ ६ ॥

हे देवि ! पीछे मध्य देश में मनुष्य का जन्म हुआ । इसके पूर्वजन्म के कर्मों से पुत्र नहीं है । कन्या ही जन्मती है ॥ ६ ॥

शरीरे रोगमुत्पन्नं सुखं नैव प्रजायते ।
प्रायश्चित्तं ततो देवि प्रवक्ष्यामि वरानने ॥ ७ ॥

हे देवि ! शरीर रोगी हुआ है सुख कुछ भी नहीं हुआ । अब इसका प्रायश्चित्त कहते हैं ॥ ७ ॥

आकृष्णेति जपेन्मंत्रं लक्षं वै विधिवत्प्रिये ।
होमं कुर्यात्प्रयत्नेन तिलाज्यमधुना सह ॥ ८ ॥

"आकृष्णेन रजसा०" इस मंत्र का विधिपूर्वक लक्ष जप करावे, फिर तिल-घृत-मधु से होम करे ॥ ८ ॥

कुण्डे वै वर्त्तुलाकारे दशांशं तर्पणं तथा ।
मार्जनं तु विशेषेण ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ ९ ॥

गोल आकारवाले कुंड में हवन करावे और दशांश तर्पण तथा मार्जन करावे, पीछे ब्राह्मण भोजन करावे ॥ ९ ॥

दशवर्णा प्रदातव्या गुडधेनुस्तथा प्रिये ।
शय्यां दद्यात्प्रयत्नेन विधिवद्ब्राह्मणाय च ॥ १० ॥

दश प्रकार के वर्णोंवाली दश गौओं का वेदज्ञ को दान करे । हे प्रिये ! गुड़ की धेनु तथा शय्या को यत्न से सुयोग्य ब्राह्मण को दे ॥ १० ॥

भोजयेद्ब्राह्मणाञ्छुद्धान् वेदपाठरतान् प्रिये ।
सप्तसप्ततिसंख्यान्वैदीक्षिताञ्छुद्धमानसान् ॥ ११ ॥

हे प्रिये ! वेदपाठ में तत्पर, यज्ञादि करनेवाले तथा शुद्ध मनवाले सतत्तर (७७) ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ११ ॥

प्रयागे माघमासे वै प्रातःस्नानं सभार्यया ।
एवंकृते न संदेहः पुत्रस्तस्य प्रजायते ।। १२ ।।

माघ में प्रयाग में प्रातःकाल स्त्रीसहित स्नान करे ऐसा करने से निश्चय पुत्र उत्पन्न होता है ।। १२ ।।

रोगः प्रमुच्यते तस्य वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं कन्यका नैव जायते ।। १३ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकोनविंशोऽध्यायः ।। १९ ।।

उसका रोग दूर होकर वंध्यापन दूर हो, जिसकी संतान नहीं जीती हो उसके शीघ्र पुत्र हो कन्या उत्पन्न न हो ।। १३ ।।

उन्नीसवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ विंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथ वक्ष्ये महादेवि चन्द्रनक्षत्रजं फलम् ।
यत्कृतं मानुषैः पूर्वं तच्छृणुष्व वरानने ।। १ ।।

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! अब मृगशिर नक्षत्र में जन्मनेवाले मनुष्यों ने जो पूर्वजन्म में किया है सो कहते हैं—सुनो ।। १ ।।

मध्यदेशे पुरे शुभ्रे वसत्येको द्विजः खलु ।
ब्रह्मकर्मरतो नित्यं वेदवेदांगपारगः ।। २ ।।

मध्यदेश के सुन्दर पुर में एक ब्राह्मण रहता था, वह ब्रह्म कर्म में हमेशा तत्पर रहता था और वेद-वेदांग को जाननेवाला था ।। २ ।।

प्रत्यहं पाठयामास चतुर्वेदान् सविस्तरान् ।
वेदशर्मा द्विजः ख्यातस्तस्य पत्नी सुशीलिका ॥ ३ ॥

वह प्रतिदिन चारों वेदों को पढ़ाता था, उसका नाम वेदशर्मा था, उसकी स्त्री सुशीला थी ॥ ३ ॥

प्रत्यहं पाठयेद्वेदं जीविकार्थं वरानने ।
लोहकारस्य मरणं तत्पुरेऽभूद्वरानने ॥ ४ ॥

हे वरानने ! जीविका के लिए वेद पढ़ाता था । उस नगर में एक लोहकार की मृत्यु हो गई । उसी स्थान पर वेदशर्मा मौजूद था ॥ ४ ॥

न दत्तं तस्य वै स्वर्णं लोहकारस्य संस्थितम् ।
तत्स्वर्णं प्रत्यहं देवि बुभोज सह भार्यया ॥ ५ ॥

हे देवि ! उस लोहकार का सोना इस ब्राह्मण ने लेकर नहीं दिया । उस सोना को प्रति दिन स्त्रीसहित भोगता था ॥ ५ ॥

एवं बहुगते काले मरणं ब्राह्मणस्य वै ।
सूर्यलोको भवेद्देवि यतः सूर्यस्य सेवकः ॥ ६ ॥

बहुत समय बीतने पर उस ब्राह्मण की मृत्यु हुई । और उसको सूर्यलोक प्राप्त हुआ क्योंकि वह सूर्य का भक्त था ॥ ६ ॥

विंशद्वर्षसहस्राणि सूर्यलोकेऽवसत्प्रिये ।
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके च मानवः ॥ ७ ॥

हे प्रिये ! वह बीस हजार वर्ष तक सूर्यलोक में निवास करता रहा । पुण्य क्षीण होने पर मृत्युलोक में मनुष्य हुआ ॥ ७ ॥

पुत्रकन्याविहीनस्तु धनधान्यसमन्वितः ।
लोहकारस्य स्वर्णं हि गृहीतं नैव दत्तवान् ॥ ८ ॥

पुत्र कन्या से हीन परन्तु धनधान्य से संयुक्त है। इसने जो पूर्वजन्म में लोहकार का सोना लेकर नहीं दिया था ॥ ८ ॥

तेन कर्मविपाकेन लोहकारः सुतोभवत् ।
प्रीतिमांश्चैव सर्वेषां पितृमातृप्रियंकरः ॥ ९ ॥

इस कर्मविपाक से लुहार ही इसके पुत्र हुआ। वह सबसे तथा मातापिता से प्रेम करनेवाला पैदा हुआ ॥ ९ ॥

युवारूपसमापन्नस्तदा मृत्युर्भवेदनु ।
पुनः पुत्रस्य चाभावः कन्या चैव प्रजायते ॥ १० ॥

जब जवान हुआ तब उसकी मृत्यु हो गई फिर इसके संतान नहीं होती कन्या ही जन्मती हैं ॥ १० ॥

तत्पापस्य विशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमतः शृणु ।
गायत्रीलक्षजाप्येन दुर्गायाः पूजनेन च ॥ ११ ॥

दशवर्णाप्रदानेन भूमिदानेन पार्वति ।
सर्वं पापं क्षयं याति पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥ १२ ॥

हे पार्वति ! इस पाप की शुद्धि के लिए प्रायश्चित्त सुनो। गायत्री का लक्ष जप, दुर्गापूजन, दशवर्णवाली गौओं का दान, भूमिदान, इनके करने से पूर्वजन्म का किया सब पाप नष्ट हो जाता है ॥ ११-१२ ॥

गयाश्राद्धं प्रयत्नेन तदर्थं नियतः प्रिये ।
प्रयागे मकरे मासि स्नानं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ १३ ॥

हे प्रिये ! इसलिए नियम से गयाश्राद्ध करे, मकर के महीने में प्रयाग जाकर विधिपूर्वक स्नान करे ॥ १३ ॥

ततः पापं क्षयं याति पुनः पुत्रस्य जीवति ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मृगशिरा-
नक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम
विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

ऐसा करने से पाप नष्ट होकर पुत्र जीवें और संपूर्ण रोग नष्ट हो जाते हैं इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ १४ ॥

बीसवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ एकविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कान्यकुब्जे शुभे देशे कश्चिच्च नन्दने पुरे ।
बोधशर्मा द्विजश्चासीत् भिक्षुवृत्तिस्तु निर्धनः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—सुंदर कान्यकुब्ज देश में नंदनपुर में बोधशर्मा नामक भिक्षुक वृत्तिवाला निर्धन ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

परान्नं भुज्यते नित्यं परप्रेष्यरतः सदा ।
तस्य पत्नी समाख्याता वाधमानाम वै पुरा ॥ २ ॥

वह नित्यप्रति पराये अन्न को खाता और सदा दूसरे की नौकरी किया करता था। उसकी स्त्री वाधमा नामक थी ॥ २ ॥

जन्मतो मरणं यावत् परान्नं भुज्यते च वै ।
नरके पतनं तेन तयोर्जातं प्रतिग्रहात् ॥ ३ ॥

उसने जन्म से मरण तक पराया ही अन्न भोजन किया। इस प्रतिग्रह के प्रभाव से उन दोनों का नरक में वास हुआ ॥ ३ ॥

बहुवर्षसहस्राणि प्रवासो नरकेऽभवत् ।
नरकान्निःसृतो देवि काकश्चैव मृगोऽभवत् ॥ ४ ॥

कई हजार वर्षों तक नरक में वास रहा। हे देवि! नरक से निकलकर काक और फिर मृग हुआ ॥ ४ ॥

पुनर्वै मेषयोनिश्च पूर्वकर्मविपाकतः ।
ततो वै मानुषो जातो मध्यदेशे वरानने ॥ ५ ॥

हे वरानने! फिर पूर्वकर्मविपाक से मेढ़ा भया और मध्यदेश में मनुष्य हुआ ॥ ५ ॥

रोगवान्नृत्यशीलश्च पुत्रकन्याविवर्जितः ।
परान्नं प्रत्यहं भुंक्ते श्राद्धं नैव कृतं पुरा ॥ ६ ॥

रोगी और नाचनेवाला पुत्र कन्या से हीन इसने पराया अन्न भोजन किया, लेकिन कभी श्राद्ध नहीं किया ॥ ६ ॥

अतो वंशस्य वै छेदः फलञ्चैव तु पूर्वजम् ।
शान्ति तस्य प्रवक्ष्यामि पूर्वपापक्षयस्ततः ॥ ७ ॥

इसलिये पूर्वजन्म के फल से वंश नष्ट हो गया। अब इसकी शांति कहते हैं जिससे पूर्वजन्म के सब पाप नष्ट हो जावें ॥ ७ ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं जापयेच्छिवे ।
ततः पापविशुद्धिः स्याद्दशांशहवनं यदा ॥ ८ ॥

गायत्री मंत्र तथा 'जातवेदसे' इस मंत्र का दो लाख जप करावे। हे शिवे! उसका दशांश होम करावे तब पाप की शुद्धि हो ॥ ८ ॥

तर्पणं मार्जनं देवि ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ।
शतसंख्यामिताञ्छुद्धान् गृहस्थानतिभक्तितः ॥ ९ ॥

हे देवि! तर्पण तथा मार्जन करावे और शुद्ध गृहस्थ सौ ब्राह्मणों को भक्ति से भोजन करावे ॥ ९ ॥

वृषमेकं प्रदद्यात्तु नीलवर्णं विभूषितम् ।
एवंकृते न संदेहो रोगनाशो भवेद् ध्रुवम् ।
पुत्रस्तु जायते देवि वंध्यात्वं च प्रणश्यति ॥ १० ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मृगशिरा-नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकविंशति-तमोऽध्यायः ॥ २१ ॥

हे देवि ! फिर नील वर्ण बैल का दान वेदज्ञ ब्राह्मण को दे । ऐसा करने से निश्चय रोग का नाश होकर पुत्र उत्पन्न होगा और वंध्यापन भी दूर होवेगा ॥ १० ॥

इक्कीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ द्वाविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

नर्मदादक्षिणे तीरे पुरीका नाम वै पुरी ।
तस्यां पुर्यां विशालाक्षि कुलालो धनवानपि ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे विशालाक्षि ! नर्मदा नदी के दक्षिण तट पर पुरीका नामक नगरी थी । वहाँ धनाढच कुलाल कुम्हार रहता था ॥ १ ॥

कुलालकर्मतो देवि बहुद्रव्यमुपार्जितम् ।
कर्मचन्द्र इति ख्यातस्तस्य पत्नी च देवकी ॥ २ ॥

हे देवि ! उसने कुम्हार कर्म से बहुतसा द्रव्य इकट्ठा किया । वह कर्मचंद्र नाम से और उसकी स्त्री देवकी नाम से प्रसिद्ध थी ॥ २ ॥

स्वकर्मनिरतो नित्यं पात्रं कृत्वा दिने दिने ।
एवं सर्वं वयो जातं वृद्धत्वं च ततोऽभवत् ॥ ३ ॥

वह प्रतिदिन घट आदि पात्र बनाने में लगा रहता था । इस तरह संपूर्ण अवस्था बीत गई, और वह वृद्ध हो गया ॥ ३ ॥

वृद्धे जाते तदा देवि दारिद्र्यत्वमजायत् ।
सूर्पकारस्य वै द्रव्यं व्यवहारे गृहीतवान् ॥ ४ ॥

हे देवि ! वृद्धावस्था होने पर दरिद्र हो गया। तब व्यवहार में छाज बनानेवाले (धानक) के धन को ग्रहण किया ॥ ४ ॥

शतसंख्यामितं स्वर्णं व्ययं सर्वं कृतं शिवे ।
कुलालस्याभवन्मृत्युः पत्नी तस्य मृता पुरा ॥ ५ ॥

हे शिवे ! सुवर्ण की सौ मोहर जो लिया था वह सब खर्च कर डाला, पीछे उस कुम्हार की मृत्यु हो गई। और उसकी स्त्री पहले ही मर गई थी ॥ ५ ॥

नर्मदायां महादेवि तावुभौ मृत्युमापतुः ।
तत्तीर्थस्य फलाद्देवि स्वर्गलोकं गतावुभौ ॥ ६ ॥

हे देवि ! उन दोनों की नर्मदा नदी पर मृत्यु हुई। उस तीर्थ के प्रभाव से दोनों को स्वर्गलोक हुआ ॥ ६ ॥

बहुवर्षसहस्राणि ताभ्यां भुक्तं फलं शुभम् ।
ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके च जायते ॥ ७ ॥

इन दोनों ने हजारों वर्ष तक सुन्दर फल भोगा फिर पुण्य क्षीण होने पर मृत्युलोक में जन्म लिया ॥ ७ ॥

मानुषेपि शुभं जन्म धनधान्यसमन्वितः ।
पुनर्विवाहिता नारी पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ॥ ८ ॥

मनुष्य लोक में भी सुन्दर कुल में धनधान्य से युक्त जन्म हुआ। पूर्वजन्म के प्रभाव से वही स्त्री फिर इसको विवाही गई ॥ ८ ॥

ऋणसंबन्धतो देवि पुत्रो जातस्तदा शिवे ।
सूर्पकारो महादेवि वैरुद्धचं बालतः कृतम् ॥ ९ ॥

हे देवि ! ऋण के संबन्ध से वह छाज बनानेवाला धानक इसका पुत्र हुआ और उसने बालकपन से विरोध किया ॥ ९ ॥

प्रत्यहं वसु यल्लब्धं तत्सर्वं च व्ययं तथा ।
द्यूतवेश्याप्रदानेन धनं सर्वं व्ययं गतम् ॥ १० ॥

प्रतिदिन जो धन पाता वह जुवा खेलने या वेश्याप्रसंग में खर्च हो जाता था । इस तरह सब धन खर्च हो गया ॥ १० ॥

युवा जातो यदा देवि पुत्रकन्यासमन्वितः ।
मरणं तस्य वै जातं पुनः पुत्रो न जायते ॥ ११ ॥

हे देवि ! जब जवान हुआ और इसके पुत्र पुत्री हुए । फिर इसका पुत्र मर गया और संतान नहीं हुई ॥ ११ ॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वं वरानने ।
गायत्रीलक्षजाप्येन त्र्यम्बकेन तथा प्रिये ॥ १२ ॥

हे वरानने ! अब शान्ति कहते हैं सब सुनो । गायत्री का या "त्र्यम्बकं यजामहे०" इस मंत्र का लक्ष जप कराने से शांति होगी ॥ १२ ॥

कर्तव्यं कुंडमुच्चैस्तु त्रिकोणं विधिवत्प्रिये ।
होमं च कारयेद्देवि दशांशं तर्पणं ततः ॥ १३ ॥

हे देवि ! त्रिकोण ऊँचा कुंड विधिपूर्वक बनवावे, दशांश होम और तर्पण करावे ॥ १३ ॥

ततो वै कपिलां दद्याद्धेमशृंगीं सहाम्बराम् ।
एवंकृत्वा वरारोहे पुनः पुत्रः प्रजायते ॥ १४ ॥

फिर सोने की सींग और वस्त्रसहित कपिला गौ का दान करे । हे वरारोहे । ऐसा करने से पुत्र फिर होगा ॥ १४ ॥

सूर्पकारस्य प्रतिमां पलसप्तदशस्य तु ।
सुवर्णस्यैव भो देवि रचितां वस्त्रछादिताम् ॥ १५ ॥
सूर्परौप्यस्य वै कुर्यात्पलषष्टिप्रमाणतः ।
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय सुतेजसे ॥ १६ ॥

हे देवि ! सत्रह पल सोने की सूर्पकार की मूर्ति बनाकर उस पर वस्त्र उढ़ावै और साठ पल अर्थात् २४० दो सौ चालीस तोले चाँदी का छाज बनावे फिर इन सबों को तेजस्वी वेदज्ञ ब्राह्मण को दान देवे ॥ १५-१६ ॥

तस्योद्देशेन भो देवि ऋणबन्धात्प्रमुच्यते ।
पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मृगशिरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

हे देवि ! सूर्पकार (डोम) के उद्देश्य से इस दान के देने से पूर्वजन्म के ऋणसम्बन्ध से छूट जाय फिर इसके पुत्र हो इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ १७ ॥

बाईसवाँ अध्याय समाप्त ।

———:o:———

अथ त्रयोविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथ वक्ष्याम्यहं देवि चतुर्थचरणं तथा ।
मृगशिरो नाम नक्षत्रं तस्य पूर्वं च संचितम् ॥ १ ॥

हे देवि ! अब मृगशिर नक्षत्र के चौथे चरण में जन्म लेनेवाले के पूर्व संचित कर्म को कहते हैं ॥ १ ॥

अवन्तीपुरतो देवि दक्षिणे क्रोशपंचके ।
पुरं तच्चैव विख्यातं केशवं नाम शोभनम् ॥ २ ॥

हे देवि ! उज्जैन नगरी से दक्षिण दिशा में पाँच कोस पर एक केशव नामक सुन्दर पुर है ॥ २ ॥

वसत्येको हि देवेशि ब्राह्मणो वेदपारगः ।
किशोरशर्मा विख्यातो मृतगेहे प्रभुज्यते ॥ ३ ॥

हे देवि ! वहाँ किशोरशर्मा नामक वेदपाठी ब्राह्मण रहता था सो प्रतिदिन मृतकों के घरों में (तेरही का) भोजन किया करता था ॥ ३ ॥

कष्टेनैव महादेवि व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।
धनं च बहुधा कृत्वा पुण्यकार्यं न कारयेत् ॥ ४ ॥

हे महादेवि ! उसने बड़ी कृपणता से बहुत धन संचित किया, लेकिन पुण्यकार्य में कुछ भी खर्च न किया ॥ ४ ॥

ततो भ्रातुः कनिष्ठस्य भागं नैव ददौ च सः ।
त्रिकोटिप्रमितं द्रव्यं स्वगृहे चैव संचितम् ॥ ५ ॥

पीछे उसने अपने छोटे भाई को धन का हिस्सा नहीं दिया और जो तीन करोड़ रुपया था वह अपने ही घर में रख लिया ॥ ५ ॥

द्रव्यस्यैव विभागाय मरणं ब्राह्मणोपरि ।
कृतं भ्रात्रा कनिष्ठेन द्रव्यं तस्मै न दत्तवान् ॥ ६ ॥

फिर द्रव्य के विभाग के लिए उसके छोटे भाई ने उस ब्राह्मण पर अपनी आत्महत्या कर दी, लेकिन उसको द्रव्य नहीं दिया ॥ ६ ॥

एवं बहुतिथे काले किशोरः स मृतस्तु वै ।
गतो वै नरके घोरे युगमेकोनविंशतिम् ॥ ७ ॥

बहुत समय बीत जाने पर किशोरशर्मा ब्राह्मण मर गया, फिर उन्नीस युगों तक घोर नरक में वास करता रहा ॥ ७ ॥

पुनः कर्मवशाद्देवि गर्दभत्वं च जायते ।
वृषयोनिस्ततो जातो मानुषत्वं भवेत्पुनः ॥ ८ ॥

हे देवि ! पीछे कर्म के वश से गधा की योनि में गया और फिर बैल की योनि को प्राप्त होकर पीछे मनुष्य हुआ ॥ ८ ॥

मध्यदेशे वरारोहे पुत्रो नैव प्रजायते ।
कन्यका बहवो गर्भा विनश्यन्ति वरानने ॥ ९ ॥

हे वरारोहे ! मध्यदेश में जन्म लिया है । इसके पुत्र नहीं होता और इसके कन्या ही जन्मती हैं । इसके बहुत से गर्भ खंडित हो जाते हैं ॥ ९ ॥

पूर्वजन्मकृतं कर्म भुज्यते देवि मानवैः ।
इह लोके वरारोहे पुण्यं पापमनूनकम् ॥ १० ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म का किया कर्म पुण्य या पाप संपूर्ण मनुष्यों को इस लोक में भोगना पड़ता है ॥ १० ॥

भ्रातस्तस्य कनिष्ठस्य मरणं पूर्वजन्मनि ।
तदुद्देशेन भो देवि तस्माद् रोगं च जायते ॥ ११ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म में इसके छोटे भाई ने धन के लिए अपनी मृत्यु की थी, इसलिये इसके शरीर में रोग होता है ॥ ११ ॥

तस्य पापस्य शुद्धिं च शृणु देवि प्रयत्नतः ।
गायत्रीमूलमंत्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ १२ ॥

हे देवि ! अब इसके पाप को दूर करने का उपाय सुनो । "गायत्री" मूलमंत्र से लक्ष जप करावे ॥ १२ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्रीजातवेदेन त्र्यम्बकेन तथैव च ॥ १३ ॥

घर के छठे हिस्से धन को पुण्य कार्य में खर्च कर देवे और "गायत्री" या "जातवेदसुनवाम०" अथवा "त्र्यंबकं यजामहे०" इस मंत्र का ॥ १३ ॥

लक्षत्रयं जपं चैव दशवर्णाः प्रदापयेत् ।
हवनं विधिवत्कुर्यात् तर्पणं मार्जनं तथा ।। १४ ।।

तीन लक्ष जप करावे । और अनेक वर्णवाली गौओं का वेदज्ञ ब्राह्मणों को दान करे। विधिपूर्वक हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ।। १४ ।।

सौवर्णस्य वरारोहे सूर्यं कुर्यात्प्रयत्नतः ।
पलपञ्चप्रमाणेन द्विगुणं चंद्रमेव च ।। १५ ।।

हे वरारोहे ! पाँच पल प्रमाण सोने का सूर्य बनावे और फिर दश पल का चंद्रमा बनावे ।। १५ ।।

रौप्यस्यैव प्रकुर्यात्तु यथाशास्त्रं प्रपूजयेत् ।
मंत्रेणानेन भो देवि दद्याद्विप्राय तद्द्वयम् ।। १६ ।।

रूपा का चंद्रमा बनावे । हे देवि ! पीछे शास्त्र के अनुसार इन दोनों (सूर्य व चन्द्रमा) के मंत्रों से पूजा करे। इन दोनों मूर्त्तियों को ब्राह्मण को देवे ।। १६ ।।

"ॐ ह्रींमार्तण्डाय स्वाहा"

सूर्यदेव महाभाग त्रैलोक्यतिमिरापह ।
मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर ।। १७ ।।

मंत्रः । "ॐ ह्रीं मार्तंडाय स्वाहा" हे सूर्यदेव ! हे महाभाग ! त्रिलोकी के अंधकार को दूर करनेवाले हे परमेश्वर ! आप मेरे पूर्वजन्म के पाप को क्षमा करो ।। १७ ।।

"ॐ सोमाय स्वाहा"

ॐ सौम्यरूप महाभाग मंत्रराज द्विजोत्तम ।
पूर्वजन्मकृतं पापमोषधीश क्षमस्व मे ।। १८ ।।

"ॐ सोमाय स्वाहा" हे सौम्यरूपमहाभाग ! हे मंत्रराज ! हे द्विजोत्तम ! हे औषधीश ! आप पूर्वजन्म में किये हुये मेरे इन पापों को दूर करो ।। १८ ।।

ततश्च ब्राह्मणान्पूज्य भोजयित्वा विसर्जयेत् ।
एवंकृते न संदेहो विद्वान् पुत्रोऽभिजायते ॥ १९ ॥

फिर ब्राह्मणों का पूजन कर भोजन कराके विसर्जन कर देवे ऐसा करने से विद्वान् पुत्र उत्पन्न होता है ॥ १९ ॥

रोगः सर्वः क्षयं याति नात्र कार्या विचारणा ॥ २० ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मृगशिरा-नक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

संपूर्ण रोग नष्ट होता है इसमें कुछ संदेह नहीं करना चाहिए ॥ २० ॥

तेईसवाँ अध्याय समाप्त ।

—-:०:—-

अथ चतुर्विंशोऽध्यायः

शिव उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि रौद्रनक्षत्रजं फलम् ।
येन कर्मविपाकेन मृत्युलोके च भुज्यते ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—अब आर्द्रा नक्षत्र में जन्मवाले के फल को कहेंगे, जिस कर्मविपाक से मृत्युलोक में भोगना पड़ता है ॥ १ ॥

अवन्तीपुर्यां भो देवि रंगकारश्च तिष्ठति ।
वस्त्राणि रंगयन्नित्यं स्वधर्मं पालयेत्सदा ॥ २ ॥

हे देवि ! उज्जैन नगरी में एक वस्त्र रँगनेवाला था । वह सदा अपने धर्म का पालन करता और अनेक प्रकार के वस्त्रों को रँगा करता था ॥ २ ॥

कुबेर इति तन्नाम लीलानाम्नी च तत्प्रिया ।
पतिव्रता च सा देवि रंगकारश्च तां त्यजन् ॥ ३ ॥

उसका नाम कुबेर था और उसकी स्त्री लीला नामक थी । हे देवि ! वह पतिव्रता थी । रंगकार ने अपनी स्त्री पतिव्रता का त्याग कर दिया ॥ ३ ॥

ब्राह्मणीं रमते चैकां पापप्रीतिं समुद्वहन् ।
त्यक्त्वा पतिव्रतां भार्यां ब्राह्मणीं प्रीतितोऽभजत् ॥ ४ ॥

फिर वह एक ब्राह्मणी के साथ रमण करता था और प्रतिदिन पापकर्म में प्रीति बढ़ाता हुआ अपनी स्त्री को त्याग कर ब्राह्मणी के साथ प्रेम करता था ॥ ४ ॥

द्रव्यं च संचितं तेन रङ्गकारेण वै शिवे ।
भूमिमध्ये च तद् द्रव्यं कृतं तेन च सुन्दरि ॥ ५ ॥

हे शिवे ! तिस रंगकार ने जो धन संचित किया था उसको पृथ्वी में गाड़ दिया ॥ ५ ॥

किञ्चिद्दानं कृतं तेन गंगायमुनसंगमे ।
मरणं तस्य वै जातं सा च भार्या विवाहिता ॥ ६ ॥

उसने गंगा यमुना नदी के संगम में कुछ दान भी किया था । फिर वह मर गया, और उसकी विवाही हुई स्त्री भी मर गई ॥ ६ ॥

तत्पुरे च सती जाता लीलानाम पतिव्रता ।
सत्यलोकं गतः सोपि लक्षद्वयमितं प्रिये ॥ ७ ॥

वह लीला नामक पतिव्रता स्त्री उसी नगर में सती हो गई । उसके पुण्य से पति दो लाख वर्ष तक स्वर्गलोक में वास करता रहा ॥ ७ ॥

पुनः पुण्यक्षये जाते मनुष्योऽभूत्सदाशिवे ।
मध्यलोके च विख्यातो धनधान्यसमन्वितः ॥ ८ ॥

हे सदाशिवे ! पीछे पुण्य क्षीण होने पर मध्यलोक में उत्पन्न होकर धनधान्य से युक्त प्रसिद्ध मनुष्य हुआ ॥ ८ ॥

पुत्राश्च बहवो जाताः कोपि तेषु न जीवति ।
शरीरे च ज्वरोत्पत्तिः खंजत्वं चरणे तथा ॥ ९ ॥

इसके कई पुत्र उत्पन्न हुए परन्तु उनमें कोई भी जीवित नहीं रहे । और शरीर में हमेशा ज्वर रहता है, और पैर से लँगड़ा है ॥ ९ ॥

ब्राह्मणीगमनं देवि पूर्वजन्मनि वै कृतम् ।
तेन पापेन भो देवि पुत्रस्तस्य न जीवति ॥ १० ॥

हे देवि ! इसने पूर्वजन्म में ब्राह्मणी के संग गमन किया था, इस पाप से पुत्र नहीं जीते हैं ॥ १० ॥

अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि तां शृणुष्व वरानने ।
दशायुतं जपेद्देवि गायत्रीं वेदमातरम् ॥ ११ ॥

हे वरानने ! इसकी शांति को कहता हूँ, सुनो । वेदमाता गायत्री का एक लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
षडंशं चैव दानं वै दद्याद्वेदविदे शिवे ॥ १२ ॥

तद्दशांश हवन और तिसका दशांश तर्पण तथा मार्जन करावे । हे शिवे ! वेदज्ञ ब्राह्मण को अपने धन के छठे हिस्से का दान करे ॥ १२ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छर्करापायसेन च ।
गामेकां विधिवद्द्याद्धेमवर्णां सुभूषिताम् ॥ १३ ॥

शक्कर और खीर का ब्राह्मणों को उत्तम भोजन करावे और विधिपूर्वक सोने के समान एक गौ का दान करे ॥ १३ ॥

एवंकृते न संदेहो बहुपुत्रश्च जायते ।
रोगस्यैव विमुक्तिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

ऐसा करने से अवश्य पुत्र हो और रोग से मुक्त हो जाय, इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ १४ ॥

चौबीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ पञ्चविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

शृणु देवि वरारोहे नृणां वै पूर्वजन्मनि ।
यत्कृतेन महाघोरे नरके परिपच्यते ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! मनुष्यों को पूर्वजन्म के कर्म से महाघोर नरक में दुःख भोगना पड़ता है । उसको सुनो ॥ १ ॥

अवन्त्यां पश्चिमे द्वारे वैश्यो वसति भाग्यवान् ।
धनधान्यसमायुक्तः स्वधर्मनिरतः सदा ॥ २ ॥

उज्जैन नगरी में पश्चिम के दरवाजे की ओर एक भाग्यवान् रहता था वह धन धान्य से युक्त और धर्म में सदा तत्पर रहता था ॥ २ ॥

एवमर्द्धं वयो जातं दरिद्रत्वं ततोऽभवत् ।
व्ययार्थं वै ततो देवि विप्रस्वर्णं गृहीतवान् ॥ ३ ॥

इस प्रकार आधी उम्र बीत गई तब दरिद्रता हो गई तब खर्च के लिए एक ब्राह्मण से द्रव्य उधार लिया ॥ ३ ॥

पलविंशप्रमाणं तद्व्ययं जातं वरानने ।
ततो वैश्यस्य मृत्युर्वै भार्यया सहितस्य वै ॥ ४ ॥

हे वरानने ! उसने बीस पल सोना लिया था सो सब खर्च कर डाला फिर स्त्रीसहित उस वैश्य की मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

स्वर्गं जातं ततो देवि नर्मदामरणादपि ।
षष्टिवर्षसहस्राणि स्वर्गस्यैव फलं शुभम् ॥ ५ ॥

हे देवि ! पीछे नर्मदा नदी तट पर मरने से स्वर्ग लोक में गया और साठ हजार वर्षों तक स्वर्गलोक का फल भोगा ॥ ५ ॥

भुक्तं बहुविधं देवि भार्यया सहितेन वै ।
ततः पुण्यक्षये जाते पुनर्मर्त्यौ बभूवतुः ॥ ६ ॥

हे देवि ! पीछे स्त्री सहित अनेक प्रकार के सुख भोगते हुए पुण्य क्षीण होने पर फिर दोनों मनुष्य हुए ॥ ६ ॥

धनधान्यसमायुक्तौ पुत्रकन्याविवर्जितौ ।
रुग्णौ दुर्बलगात्रौ च पूर्वकर्मफलेन तु ॥ ७ ॥

धनधान्य से युक्त पुत्र-कन्या से रहित और रोगी है और पूर्वजन्म कर्म के फल से दुर्बल शरीरवाला है ॥ ७ ॥

ऋणसम्बन्धतो देवि विप्रः पुत्रोऽभवत्तदा ।
ऋणं यावत्प्रमाणं वै गृहीतं पूर्वजन्मनि ॥ ८ ॥

हे देवि ! ऋण के संबन्ध से ब्राह्मण पुत्र होता भया जितना प्रमाण कर्जा का द्रव्य पूर्वजन्म में ग्रहण किया था ॥ ८ ॥

तावन्मात्रं गृहीत्वा तु ततो वै मरणं भवेत् ।
पुनः पुत्रो न तस्यैव विंशद्वर्षे गते सति ॥ ९ ॥

उतने द्रव्य को खर्च करके मर गया और फिर इसके बीस वर्ष व्यतीत हो चुके पुत्र नहीं हुआ ॥ ९ ॥

तस्य दानं शृणुष्वादौ पूर्वपापक्षयो यतः ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १० ॥

पहले उसके दान को सुनो जिससे पूर्वजन्म का पाप नष्ट हो । घर के धन का अष्टमांश ब्राह्मण को समर्पण कर दे ॥१०॥

स्वर्णपञ्चपलेनैव पुष्पं च मकराकृतिम् ।
प्रदद्याद्वेदविदुषे पूर्वपापक्षयो भवेत् ॥ ११ ॥

और पाँच पल सोने का मकराकार पुष्प बनाकर वेदज्ञ ब्राह्मण को पूर्व पाप निवृत्ति के लिए दान दे ॥ ११ ॥

गायत्र्याश्च जपं कुर्याल्लक्षमेकं वरानने ।
होमं च तद्दशांशेन मार्जनं च तथाविधम् ॥ १२ ॥

हे वरानने ! गायत्री का लक्ष जप, होम और तद्दशांश मार्जन करावे ॥ १२ ॥

गामेकां स्वर्णशृङ्गीं च वत्सवस्त्रविभूषिताम् ।
दद्याद्वेदविदे देवि ब्राह्मणाय तदा भवेत् ॥ १३ ॥

सवत्सा उत्तम गौ की सींगें सोने की मढ़ावे, वस्त्र उढ़ावे और चाँदी की खुरी से भूषित करे, हे देवि ! वेदपाठी ब्राह्मण को दे ॥ १३ ॥

पुनः पुत्रः प्रसूयेत नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

फिर पुत्र उत्पन्न होवे इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये ॥ १४ ॥

पच्चीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ षड्विंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अवन्तीनगरी नाम्ना ततः क्रोशद्वयोपरि ।
अग्निकोणे महादेवि मङ्गलं नाम वै पुरम् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! उज्जैन नगरी से दो कोस पर अग्निकोण में मंगल नामक पुर है ॥ १ ॥

तस्मिन्ग्रामे वसत्येको ब्राह्मणो द्यूततत्परः ।
अन्ये तु बहवस्तत्र वसन्ति सुद्विजोत्तमाः ॥ २ ॥

उस ग्राम में जुवा खेलनेवाला एक ब्राह्मण रहता था । अन्य वहाँ दूसरे उत्तम ब्राह्मण भी बसते थे ॥ २ ॥

मद्यपानरतो नित्यं चौरविद्यासुतत्परः ।
परस्त्रीलम्पटो देवि वेश्यायां निरतः सदा ॥ ३ ॥

वह ब्राह्मण मद्यपान तथा नित्य चोरी करता था, हे देवि ! और परस्त्री लंपट वेश्यागामी था ॥ ३ ॥

प्रत्यहं स च भो देवि द्विजरूपो नरोऽधमः ।
चौरत्वाद् द्रव्यमुत्पाद्य नैव दानं समाचरेत् ॥ ४ ॥

हे देवि ! वह अधम ब्राह्मण प्रतिदिन चोरी से धन को इकट्ठा करता था । पर दान कभी नहीं करता था ॥ ४ ॥

एवं बहुदिने याते तस्य मृत्युर्बभूव ह ।
नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया ॥ ५ ॥

बहुत दिन व्यतीत होने पर उसकी मृत्यु हो गई । यमराज की आज्ञा से यमदूत उसको नरक में ले गए ॥ ५ ॥

सप्ततिर्वै सहस्राणि रौरवे परिपच्यते ।
महाकष्टं लभेद्देवि कृमिसूचीमुखादिभिः ॥ ६ ॥

सत्तर हजार वर्ष तक रौरव नरक में दुःख भोगा । सुई के समान कृमियों से महाकष्ट को प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

पुनः कर्मवशाद्देवि नरकान्निर्गतो यदा ।
विडालकाकयोर्निं च तदा प्राप्तो द्वयं हि च ॥ ७ ॥

हे देवि ! फिर कर्म के वश से जब नरक से निकल आया तब बिलाव और काग इन दोनों योनियों को प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥

योनिद्वयफलं भुक्तं मानुषत्वं ततो लभेत् ।
मध्यदेशे वरारोहे ततः पीडा महत्यपि ॥ ८ ॥

इन दो योनियों के भोगने के बाद मध्यदेश में मनुष्य शरीर को प्राप्त हुआ ॥ ८ ॥

वंशच्छेदो भवेद्देवि पूर्वकर्मविपाकतः ।
तस्योपरि विशालाक्षि शान्ति शृणु वरानने ॥ ९ ॥

हे देवि ! पूर्व कर्मविपाक से वंश नष्ट हो गया । अब इसकी शान्ति सुनो ॥ ९ ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण यथाविधि ।
जपं वै कारयामास हवनं तर्पणं तथा ॥ १० ॥

"गायत्री", "जातवेदसे०", "त्र्यम्बकं यजा०" इन तीनों मंत्रों का विधिपूर्वक जप, हवन और तर्पण करवावे ॥ १० ॥

लक्षत्रयं जपेद्देवि पूर्वपापविशुद्धये ।
ततो वै पूजयेद्देवि तुलसी शुद्धिरूपिणीम् ॥ ११ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि के लिए तीन लक्ष जप करवावे । पीछे शुद्धरूपवाली तुलसी का पूजन करे ॥ ११ ॥

पूजयेद्विविधैश्चान्नैर्धूपनैवेद्यदीपकैः ।
भूमिदानं ततो देवि यथाशक्ति प्रदापयेत् ॥ १२ ॥

हे देवि ! अनेक प्रकार के अन्न, धूप, दीप, नैवेद्य से पूजन करे । पीछे शक्ति के अनुसार भूमि का दान भी करे ॥ १२ ॥

एवंकृते महादेवि सर्वरोगक्षयो भवेत् ।
पुत्रश्च जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

हे महादेवि ! ऐसे करने से संपूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं, पुत्र उत्पन्न होता है और वंध्यापन भी दूर होता है ॥ १३ ॥

छब्बीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ सप्तविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि चतुर्थचरणं शिवे ।
कृतं नरेण यद्देवि पूर्वजन्मनि किल्विषम् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे शिवे ! अब आर्द्रा नक्षत्र के चतुर्थ चरण को कहता हूँ । वहाँ पैदा होनेवाले पूर्वजन्म में जो पाप किया है, उसको सुनो ॥ १ ॥

अवन्तीपुरतोऽवात्सीच्छूद्र एको महाधनः ।
विक्रयं क्रियते छागमेषयोर्गृहवासिनोः ॥ २ ॥

उज्जैन नगरी में एक धनी शूद्र रहता था, वह घर में बकरी और मेढ़ा को बेचने का व्यापार करता था ॥ २ ॥

गजमश्वं तथा रत्नवस्त्राणि विविधानि च ।
एकदा सूर्यग्रहणं दृष्टं तेन वरानने ॥ ३ ॥

हे वरानने ! हाथी, घोड़ा, रत्न, अनेक प्रकार के वस्त्र इन सबों को बेचने का व्यवहार करता था । एक समय उसने सूर्य-ग्रहण देखा ॥ ३ ॥

गोसहस्रं कृतं दानं भार्यया सहितेन वै ।
नर्मदायां विशालाक्षि स्वर्णवस्त्रयुतं तथा ॥ ४ ॥

हे विशालाक्षि ! तब स्त्रीसहित नर्मदा नदी पर सुवर्ण और वस्त्रसहित हजार गौओं का दान किया ॥ ४ ॥

तत्रैव चाभवत् पीडा मृत्युलोकसमुद्भवा ।
स्वर्णकारस्य वै द्रव्यं व्यवहारनिमित्तकम् ॥ ५ ॥

उसे जन्म से मृत्युलोक में पीड़ा होती है । एक सुनार का द्रव्य व्यवहार के लिए लिया ॥ ५ ॥

गृहीतं चैव नो दत्तं ततः शृणु वरानने ।
ततो बहुगते काले शूद्रस्य मरणं ह्यभूत् ॥ ६ ॥

हे वरानने ! धन लेकर फिर नहीं दिया । बहुत समय बीत जाने पर उस शूद्र की मौत हो गई ॥ ६ ॥

ततोऽसौ नरके घोरे वर्षलक्षद्वयं तथा ।
तत्रैव बहुधा पीडां भुक्त्वा चैव स्वकर्मतः ॥ ७ ॥

उसने दो लाख वर्ष तक नरक भोगा । वहाँ अपने कर्मवश बहुत पीड़ा भोग करके ॥ ७ ॥

पुनर्जातो मर्त्यलोके काकश्च महिषो बकः ।
मानुषत्वं ततो देवि कुले महति वै शुभे ॥ ८ ॥

हे देवि ! मनुष्य लोक में कौआ हुआ और फिर भैंसा तथा बगुला भया । पीछे श्रेष्ठकुल में मनुष्य हुआ ॥ ८ ॥

स्वर्णकारस्य द्रव्यं वै गृहीतं पूर्वजन्मनि ।
न दत्तं वै ऋणं देवि पुत्रस्य मरणं ततः ॥ ९ ॥

इसने जो पूर्वजन्म में सुनार का धन लेकर फिर नहीं दिया था, इससे पुत्र का मरण हुआ ॥ ९ ॥

युवरूपो यदा जातो व्याधिग्रस्ततनुस्तदा ।
देहार्द्धवातरोगश्च पुत्रस्य मरणं ततः ॥ १० ॥

जब जवान हुआ तब वह बीमारी से दुःखी हो गया और आधे शरीर में वात रोग है, और पुत्र का मरना होता है ॥ १० ॥

भार्याद्वयसमायुक्त एका प्रीतिमती भवेत् ।
पूर्वजन्मनि यत्कर्म पुण्यं पापं शरीरतः ॥ ११ ॥

इसके दो स्त्रियाँ थीं तिसमें एक अत्यन्त प्रीतिवाली है । पूर्व-जन्म में जो कर्म पुण्य अथवा पाप शरीर से होता है ॥ ११ ॥

मर्त्यलोके मनुष्येण भुज्यते नात्र संशयः ।
अथातः संप्रवक्ष्यामि पापनिग्रहहेतवे ॥ १२ ॥

मनुष्य करके मर्त्यलोक में वही फल भोगा जाता है । इसमें संदेह नहीं है । अब पाप दूर करने के वास्ते उपाय को कहेंगे ॥ १२ ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन हरिवंशश्रुतेन च ।
रथाश्ववस्त्रदानेन ग्रामदानेन वै तथा ॥ १३ ॥

गायत्री के लक्ष जप कराने से, हरिवंश सुनने से, रथ, अश्व, वस्त्र, ग्राम (भूमि) इनके दान करने से ॥ १३ ॥

तिलधेनुप्रदानेन सर्वपापक्षयो भवेत् ।
स्वर्णमुद्रासहस्रस्य प्रतिमां कारयेद् बुधः ॥ १४ ॥

अथवा तिल गौ के दान से संपूर्ण पाप नष्ट हो जावे वा हजार (सुवर्णमुद्रा) मोहरों की मूर्ति बनवावे ॥ १४ ॥

पूर्वोक्तेन विधानेन पूजयित्वा प्रदापयेत् ।
पार्थिवं पूजयेच्छम्भुं तथा गोमयनिर्मितम् ॥ १५ ॥

फिर पूर्वोक्त विधान करके तिसका पूजन कर दान कर देवे; फिर पार्थिव या गोबर के शिव का पूजन करे ॥ १५ ॥

लक्षत्रयं प्रमाणं च पञ्चगव्येन पूजयेत् ।
पञ्चामृतेन भो देवि गोदुग्धेनैव पूजयेत् ॥ १६ ॥

हे देवि ! तीन लाख पार्थिव शिव का पंचगव्य से पूजन करे । पंचामृत और दुग्ध से पूजन करे ॥ १६ ॥

तथा च विविधैर्मन्त्रैः षडङ्गैर्वेदसंभवैः ।

मुच्यतेऽर्द्धाङ्गरोगेण नात्र कार्या विचारणा ॥१७॥

अनेक वेद और षडंगमंत्रों से पूजन करने से अर्द्धाङ्ग रोग अच्छा हो जायगा, इसमें कुछ संदेह नहीं करना ॥ १७ ॥

वन्ध्यात्वं प्रशमं याति लभेत्पुत्रं न संशयः ।

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरजीविनमुत्तमम् ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

वंध्या रोग दूर होकर पुत्र उत्पन्न होता है। इसमें संदेह नहीं है, जिसके सन्तान नहीं होती, उस स्त्री के दीर्घायु पुत्र उत्पन्न होता है ॥ १८ ॥

सत्ताईसवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथाष्टाविंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

ये नराश्च परद्रव्यं हरन्ति सततं प्रिये ।

ते नरा दुःखतां यान्ति रोगेण च प्रपीडिताः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—जो मनुष्य दूसरे के धन को ले लेते हैं। हे प्रिये ! वे मनुष्य हमेशा रोग से दुःखी रहते हैं ॥ १ ॥

ऋणं तस्य गृहीतं वै तदृणं न ददाति च ।

ऋणसंबन्धतो देवि पुत्रो भवति दारुणः ॥ २ ॥

जिसका ऋण लेकर फिर न देवे तो हे देवि ! ऋणसम्बन्ध से उसके दारुण पुत्र उत्पन्न होता है ॥ २ ॥

गृहीतमात्रं वै भग्नं धातुभग्नस्तथा नरः ।

कन्याघातात्तु पूर्वं हि फलं भवति तादृशम् ॥ ३ ॥

ग्रहण किया हुआ सब धन नष्ट हो जाय, तथा धातु गिरने लगे। यह फल कन्या के मार डालने से होता है ॥ ३ ॥

अवन्तीपुरतो देवि ख्यातं चैव सुशोभनम् ।
क्रोशमात्रं ततो देवि चोत्तरे नगरे तथा ॥ ४ ॥
वसन्तपुरमित्याख्यं वसन्ति बहवो जनाः ।
नाम्ना तन्मध्य आभीरो नन्दनो वसति प्रिये ॥ ५ ॥

हे देवि ! उज्जैन नगरी से उत्तर की तरफ एक कोस पर सुन्दर विख्यात वसंतपुर है। वहाँ बहुत लोग रहते हैं। वहाँ नन्दन अहीर भी रहता था ॥ ४-५ ॥

तस्य भार्या तु विख्याता नाम्ना वै सुन्दरी प्रिये ।
सर्वथा च महादेवि कृपणः सह भार्यया ॥ ६ ॥

हे प्रिये ! उसकी स्त्री सुन्दरी नाम से विख्यात थी। हे महादेवि ! वह स्त्री सहित बड़ा ही कंजूस था ॥ ६ ॥

मित्रं तस्य महादेवि ब्राह्मणो वेदपारगः ।
स तिष्ठति पुरीमध्ये धनं तस्य स्थितं बहु ॥ ७ ॥

एक वेदपारंगत ब्राह्मण उसका मित्र था, वह भी उज्जैन में रहता था। उसके पास बहुत सा धन था ॥ ७ ॥

प्रत्यहं च परान्नेन भोजनं कुरुते स तु ।
यदा वृद्धत्वमायातः पुरीं चैव तदात्यजत् ॥ ८ ॥
आगतो मित्रपार्श्वे वै वसन्ते वै पुरे शुभे ।
आभीरेण गृहे वासं मित्रत्वाद्दत्तवान् स्वयम् ॥ ९ ॥

वह प्रतिदिन दूसरे के अन्न का भोजन करता, जब वृद्ध हुआ तब उज्जैन को छोड़ कर वसन्तपुर में अपने मित्र के पास आया, तब अहीर ने मित्रभाव से उसको अपने घर में रहने का स्थान दिया ॥ ८-९ ॥

बहुकालमवात्सीत्स तत्प्रीत्या सुरसुन्दरि।
आभीरस्तु ततो देवि स्वर्णं दृष्ट्वा प्रहर्षितः ॥ १० ॥

हे देवि ! वह ब्राह्मण उसकी प्रीति से बहुत दिन तक रहा और अहीर उसके सोने को देख करके अत्यन्त प्रसन्न हुआ ॥ १० ॥

तस्य स्वर्णं समाहृत्य स्वगृहे स्थापितं तदा।
ब्राह्मणेन महत्कष्टं कृतं द्रव्यस्य शोकतः ॥ ११ ॥
महाशोकसमायुक्तः काश्यां चैव समागतः।
शरीरं चापि तत्याज स्वर्णशोकेन वै द्विजः ॥ १२ ॥

उसके सोने को लेकर अपने घर में रख लिया तब द्रव्य के शोक से ब्राह्मण अत्यन्त दुःखी हुआ। वहाँ से काशी चला गया और सोने के शोक से अपना शरीर भी त्याग दिया ॥ ११-१२ ॥

शूद्रेणैव महादेवि तस्य स्वर्णं प्रभुज्यते।
ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत् ॥ १३ ॥

हे महादेवि ! शूद्र ने बहुत दिन तक उस सोने का भोग किया फिर उसकी मृत्यु हो गई ॥ १३ ॥

नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ १४ ॥

यम की आज्ञा से यमदूत नरक में ले गया और साठ हजार वर्षों तक नरक की पीड़ा भोगी ॥ १४ ॥

ततस्तेन तु प्रेतत्वं भुक्तमब्दसहस्रकम्।
उलूकत्वं वरारोहे कौशिक्या निकटे ततः ॥ १५ ॥

फिर वह हजार वर्षों तक प्रेतयोनि में रहकर कौशिकी नदी के निकट उल्लू हो गया ॥ १५ ॥

सरय्वा उत्तरे कूले मानुषत्वं ततोऽभवत्।
मध्यदेशे च भो देवि पत्न्या सह वरानने ॥ १६ ॥

धनधान्यसमायुक्तो राजसेवासु तत्परः ।
जातः पुनर्वसोर्देवि प्रथमे चरणे खलु ॥ १७ ॥

हे देवि ! फिर सरयू नदी के उत्तर तट पर मनुष्य हुआ और मध्यदेश में स्त्री सहित धन धान्य से युक्त, राजसेवा में तत्पर है, यही पुनर्वसु के प्रथम चरण में जन्मा है ॥ १६-१७ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि यतो गोशतमदात्सः ।
भूपतित्वं ततो देवि धनाढ्यत्वं भवेत् खलु ॥ १८ ॥

इसने पूर्व जन्म में सौ गौओं का दान किया था इसलिये राजकार्य में नियुक्त है और धनाढ्य है ॥ १८ ॥

ब्राह्मणस्य हृतं स्वर्णं स्वयं चौर्येण यत्पुरा ।
तेन पापेन भो देवि पुत्रस्य मरणं खलु ॥ १९ ॥

ब्राह्मण का सोना उसने चुराया था। इसलिये उसके पुत्र की मृत्यु हुई ॥ १९ ॥

तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु पार्वति ।
गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ २० ॥

हे पार्वति ! उसकी शांति कहता हूँ घर के वित्त से आठवें भाग द्रव्य को पुण्य के कार्य में खर्च करे ॥ २० ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां याः फलेति तथा प्रिये ।
लक्षत्रयं जपं कुर्याद्दशांशहवनं ततः ॥ २१ ॥

हे प्रिये ! "गायत्री", तथा "जातवेदसे०" "याः फला०" इन मंत्रों का तीन लाख जप करावे, फिर तद्दशांश हवन करावे ॥ २१ ॥

तर्पणं मार्जनं चैव दशांशः क्रमतस्तथा ।
हरिवंशस्य श्रवणं चण्डिकार्चनमेव च ॥ २२ ॥

तर्पण तथा मार्जन भी दशांश क्रम से करावे, हरिवंश को सुने, देवीजी का पूजन करे ॥ २२ ॥

शिवार्चनमशेषेण वापिकां चैव कारयेत् ।
कूपं चैव तडागं च पथि मध्ये च कारयेत् ।। २३ ।।

फिर अच्छी तरह से शिवजी का पूजन करे, रास्ते में बावड़ी, कुआँ खुदवावे और तालाब बनवावे ।। २३ ।।

कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।
गंगामध्ये प्रदातव्यं शनौ चाश्वत्थपूजनम् ।। २४ ।।

कुम्हड़ा तथा नारियल को पंचरत्न से भरकर गंगाजी में दान करे, शनैश्चर के रोज पीपल के वृक्ष का पूजन किया करे ।। २४ ।।

पलसप्तदशेनैव प्रतिमां कारयेद् बुधः ।
चतुष्कोणगतां वेदीं रौप्यैर्दशपलान्वितैः ।। २५ ।।

सत्रह पल सोने की मूर्ति बनवाकर फिर दश पल चाँदी की चतुष्कोण बेदी बनवावे ।। २५ ।।

तन्मध्ये प्रतिमां स्थाप्य सपुत्रस्य द्विजस्य तु ।
पूजां कुर्यात्तु वै भक्त्या मन्त्रेणानेन वै शिवे ।। २६ ।।

हे शिवे ! उसके ऊपर पुत्रसहित उस ब्राह्मण की मूर्ति को स्थापित कर उस मूर्ति को भक्ति से इस मंत्र से पूजन करे ।। २६ ।।

वासुदेवादिदशभिर्मन्त्रैरेभिः पृथक् पृथक् ।
पूजयेत्प्रतिमां तां तु ततो दद्याद् द्विजन्मने ।। २७ ।।

इन वासुदेव आदि दश मंत्रों से अलग अलग उस मूर्ति का पूजन करे, पीछे ब्राह्मण को दान कर दे ।। २७ ।।

पूजयेद्देवदेवेशं सर्वपापापनुत्तये ।
ततः सम्प्रार्थ्य देवेशं शङ्खचक्रगदाधरम् ।। २८ ।।

संपूर्ण पाप दूर होने के लिए शंख, चक्र, गदाधारी विष्णु भगवान् की प्रार्थना कर विष्णु का पूजन करे ।। २८ ।।

पीताम्बरं चतुर्बाहुं पुण्डरीकनिभेक्षणम् ।
वासुदेवं जगन्नाथं धराधर गुरो हरे ॥ २९ ॥

पीताम्बरधारी, चतुर्भुज, कमलनेत्र, वासुदेव, जगन्नाथ इनकी प्रार्थना करे हे धरणीधर ! हे गुरो ! हे हरे ॥ २९ ॥

मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर ।
ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सनूपुराम् ॥ ३० ॥

हे परमेश्वर ! पूर्वजन्म में किये हुये मेरे पाप को क्षमा करो ऐसा कहकर पीछे सोने की सींगड़ी और खुरियों से युक्त की हुई कपिला गौ का दान करे ॥ ३० ॥

विधिवद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय तपस्विने ।
दशवर्णास्ततो दद्याद् ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ ३१ ॥

वेद के जाननेवाले तपस्वी ब्राह्मण को दश प्रकार की गौओं का विधिपूर्वक दान करे, पीछे ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥३१॥

भूमिदानं ततो दद्याद्विप्राय विदुषे ततः ।
एवंकृते न संदेहः पूर्वपापं विनश्यति ॥ ३२ ॥

उससे पीछे वेद के जाननेवाले ब्राह्मण को पृथ्वी का दान दे ऐसा करने से पूर्व किये हुए सम्पूर्ण पाप नष्ट होते हैं, इसमें संदेह नहीं है ॥ ३२ ॥

सन्तानो जायते देवि रोगाणां संक्षयस्ततः ।
कन्यका नैव जायन्ते वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥ ३३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुनर्वसु-नक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्टा-विंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

हे देवि ! संतान उत्पन्न होती है और रोग का नाश होता

है और पुत्रियों की उत्पत्ति नहीं होती वंध्यात्व धर्म दूर हो जाता है ।। ३३ ।।

अट्ठाईसवाँ अध्याय समाप्त ।

अथ एकोनत्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।
अवन्तीपुरतो देवि पूर्वे क्रोशप्रमाणतः ।। १ ।।

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! अब वह कहूँगा कि पूर्वजन्म में जो कर्म किया है वह उज्जैनपुरी से पूर्व दिशा में एक कोस में फैला हुआ ।। १ ।।

लक्ष्मणस्य पुरं ख्यातं तत्रैव बहवो जनाः ।
वसन्ति वैष्णवाः सर्वे वेदकर्मविचक्षणाः ।। २ ।।

लक्ष्मणजी का नगर है, वहाँ बहुत से वैष्णव जन और सब वेद कर्मों के जाननेवाले वास करते हैं ।। २ ।।

स्वर्णकारो वसत्येकः स्वकर्मनिरतः सदा ।
दामोदर इति ख्यातस्तस्य पत्नी प्रभावती ।। ३ ।।

वहाँ एक सुनार अपने कर्म को सदा करनेवाला दामोदर नामक और उसकी स्त्री प्रभावती थी ।। ३ ।।

विष्णुभक्तिरतः शान्तः सज्जनानां च सेवकः ।
पत्नी पतिव्रता तस्य पतिशुश्रूषणे रता ।। ४ ।।

वह विष्णु की भक्ति में प्रीति करनेवाला, शान्तचित्त, सज्जनों का दास था, उसकी स्त्री पतिव्रता थी ।। ४ ।।

तस्य पुत्रद्वयं जातं गुणज्ञं पितृसेवकम् ।
एका च बल्लवी तत्र निवासाय तदागता ।। ५ ।।

उस सुनार के दो पुत्र गुणवाले और पिता की सेवा करने-

वाले उत्पन्न हुए, और वहाँ एक बल्लवी स्त्री (गौवों को पालन करनेवाली) बसने के लिए आई ॥ ५ ॥

पुत्रद्वयसमायुक्ता बहुगोधनसंयुता ।
एको द्यूतरतः पुत्रो द्वितीयश्चौरसम्मतः ॥ ६ ॥

दो पुत्रों के साथ बहुत से गोधनसहित थी, परन्तु उसका एक पुत्र तो जुआ खेलनेवाला था और दूसरा चोरों से मिला हुआ चोर था ॥ ६ ॥

उपार्जितं महिषी स्वं गोधनं बहुधा तथा ।
चौरद्यूतोपचाराभ्यां धनाढ्यत्वमजायत ॥ ७ ॥

महिषी धन और अनेक प्रकार की गौओं का धन उसने चोरी से इकट्ठा किया तब वह धनी हुआ ॥ ७ ॥

दुग्धादिकं महादेवि भुज्यते प्रत्यहं तदा ।
स्वर्णकारो महाद्रव्यामाभीरीं सर्वसंयुताम् ॥ ८ ॥

हे महादेवि ! प्रति दिन दूध आदि पदार्थों को खाता रहा फिर वह सुनार धनवाली अहीरी को ॥ ८ ॥

आनीतवान् स्वगेहे तां तदा च वरवर्णिनीम् ।
ततो बहुगते काले महामारीज्वरादिना ॥ ९ ॥

अपने घर में ले आया फिर बहुत दिन पीछे महामारी (हैजा) और ज्वर आदि से ॥ ९ ॥

पुत्राभ्यां सममद्राक्षीद्बल्लव्या मरणं तदा ।
द्रव्यं तस्यास्तदा देवि स्वर्णकारो गृहीतवान् ॥ १० ॥

पुत्रों सहित वह अहीरी मर गई, तब हे देवि ! उसके द्रव्य को उस सुनार ने ले लिया ॥ १० ॥

भुक्तं द्रव्यं च तत्सर्वं यावत्तिष्ठति भूतले ।
भार्यया सह पुत्राभ्यां महिषीगोधनादिकम् ॥ ११ ॥

जब तक पृथ्वीतल पर रहा (जीवनपर्यंत) उसके संपूर्ण

द्रव्य, महिषी और गोधन आदि को स्त्री पुत्रों सहित भोगता रहा ॥ ११ ॥

ततो वयोत्तरे देवि मृत्युस्तस्याभवत्किल ।
पत्नी तस्य मृता साध्वी ताभ्यां स्वर्गमभूत्पुरा ॥ १२ ॥

हे देवि ! फिर अवस्था पूरी होने पर उसकी मृत्यु हो गई और पतिव्रता उसकी स्त्री भी मर गई तब उन से पहिले स्वर्ग स्वर्ग प्राप्त भया ॥ १२ ॥

पञ्चवर्षसहस्राणि स्वर्गे सुखमजीजनत् ।
पुनः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं भवेद्भुवि ॥ १३ ॥

पाँच हजार वर्षों तक स्वर्ग में वास रहा फिर पुण्य क्षीण हो गया तब मनुष्य शरीर हुआ है ॥ १३ ॥

अयोध्यानगराद्देवि सरय्वा उत्तरे तटे ।
कोशद्वये विशालाक्षि पुरे देहलसंज्ञके ॥ १४ ॥

हे विशालाक्षि ! सरयू नदी के उत्तर किनारे पर अयोध्या नगरी से दो कोस पर देहल नामक पुर में ॥ १४ ॥

स्वकर्मनिरतः प्राज्ञः स्वविद्यायां विचक्षणः ।
स्वदेशे चैव विख्यातः शत्रूणां च विमर्दनः ॥ १५ ॥

अपने कर्म में तत्पर विद्वान् अपनी विद्या में निपुण अपने देश में विख्यात शत्रुओं को नष्ट करनेवाला है ॥ १५ ॥

पुर्नविवाहिता पत्नी साध्वी या पूर्वजन्मनि ।
तस्य नेत्रे विशालाक्षि पूर्वजन्मफलाद्गते ॥ १६ ॥

जो पूर्व जन्म में इसकी पतिव्रता स्त्री थी वही फिर विवाही गई है । हे विशालाक्षि ! पूर्वजन्म के फल से उसके नेत्र चले गये हैं (अंधा है) ॥ १६ ॥

बाल्ये चैव तु पुत्रस्य नेत्रं वामं प्रणाशितम् ।
तेन पापेन भो देवि गतं नेत्रद्वयं शिवे ॥ १७ ॥

हे देवि ! इसने बाल अवस्था में पुत्र का वामनेत्र नष्ट कर दिया था। हे शिवे ! इस पाप से इसके दोनों नेत्र नष्ट हो गये ॥ १७ ॥

भक्षितं तस्य तत्स्वर्णं न दत्तं ब्राह्मणाय वै ।
तेन पापेन भो देवि मृतः पुत्रो वरः शुभे ॥ १८ ॥

पूर्व जन्म में निरा अहीर का सोना भोगा, ब्राह्मण को कुछ दान न दिया। हे शुभे ! इस पाप से इसका उत्तम पुत्र मर गया है ॥ १८ ॥

मित्रसंबन्धतः पापात् पुत्रपौत्रद्वयं मृतम् ।
पूर्वजन्मकृतं देवि शुभाशुभफलं तथा ॥ १९ ॥
भुज्यते प्राणिभिः सर्वैस्तथा देवि विशेषतः ।
म्लेच्छसेवारतो नित्यं म्लेच्छस्यैव च सङ्गतिः ॥ २० ॥

मित्रसंबंधी पाप होने से पुत्र और पौत्र दोनों मर गये हैं, हे देवि ! पूर्व जन्म में किया हुआ शुभाशुभ फल संपूर्ण प्राणियों से विशेष करके इस जन्म में भोगना पड़ता है। पूर्व जन्म में नित्य यह म्लेच्छ की सेवा में रहता था इसलिये म्लेच्छ की ही संगति हुई है ॥१९-२० ॥

कुमार्गतो भवेद्देवि मर्त्यलोके जनिर्यदा ।
शान्तिं शृणु महादेवि पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ २१ ॥

जब मृत्युलोक में जन्म हुआ तब से ही कुमार्ग में रहता था। हे देवि ! पूर्व पाप को नष्ट करनेवाली शान्ति को कहता हूँ सुनो ॥ २१ ॥

गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां याः फली त्र्यम्बकेण वा ॥ २२ ॥
विष्णोरराटमन्त्रेण जपं वै कारयेत्तथा ।
पञ्चलक्षप्रमाणेन यथापापं प्रणश्यति ॥ २३ ॥

घर के धन से आठवें भाग को पुण्य कार्य में खर्च करे। "गायत्री", "याः फली०" मंत्र, "जातवेदसे सुन०" यह मंत्र, "त्र्यम्बकं०" मंत्र या "विष्णोरराट०" इन मंत्रों से पाँच लाख जप करावे तब संपूर्ण पाप नष्ट हों ॥ २२-२३ ॥

होमं वै कारयेद्देवि दशांश विधिपूर्वकम्।
ततो वै तर्पणं कुर्यान्मार्जनं तु विशेषतः ॥ २४ ॥

विधि पूर्वक दशांश होम करावे इसके बाद तर्पण और मार्जन करावे ॥ २४ ॥

प्रतिमां कारयेत्तद्वद्विष्णोश्चैव सदाशिवे।
अष्टादशपलस्यैव सुवर्णस्य हरिं विभुम् ॥ २५ ॥

हे सदा शिवे ! अठारह पल सुवर्ण की विष्णुभगवान् की मूर्ति बनवावे ॥ २५ ॥

तद्वदेव शिवस्यैव रजतस्य परं विभुम्।
प्रतिमां पूजयेद्देवि मन्त्रेणानेन सुव्रते ॥ २६ ॥

इसी तरह अठारह पल प्रमाण चाँदी की शिव की मूर्ति बनवावे हे देवि ! पीछे इस मंत्र से पूजन करे ॥ २६ ॥

ॐ गरुडध्वज देवेश चराचरगुरो हरे।
वासुदेव जगन्नाथ पूर्वपापं विनाशय ॥ २७ ॥
ॐनन्दिकेश्वर भूतेश देवदेव सुरेश्वर।
मम पूजां गृहाण त्वं पूर्वपापं प्रणाशय ॥ २८ ॥
ततः इन्द्रादिदशदिक्पालान्पूजयेत्।

पीछे इंद्र आदि दश दिक्पालों का पूजन करे ॥ २७-२८ ॥

ॐइन्द्राय नमः १ ॥ ॐअग्नये नमः ॥ २ ॥
ॐयमाय नमः ३ ॥ ॐनैर्ऋतये नमः ॥ ४ ॥
ॐवरुणाय नमः ५ ॥ ॐवायवे नमः ॥ ६ ॥

ॐकुबेराय नमः ॥ ७ ॥ ॐईशानाय नमः ॥ ८ ॥
ॐब्रह्मणे नमः ॥ ९ ॥ ॐ अनन्ताय नमः ॥ १० ॥
गन्धपुष्पाक्षतैः सर्वान्पूजयेच्च पृथक् पृथक् ।
ततो गां कपिलां देवि स्वर्णशृङ्गीं प्रपूजयेत् ॥ २९ ॥

इनका नाम उच्चारण करके गंध पुष्प अक्षत आदिकों से सबका अलग अलग पूजन करे। हे देवि ! पीछे सोने की सींगड़ियों से युक्त की हुई गौ का पूजन करे ॥ २९ ॥

मन्त्रेणानेन भो देवि सर्वपापहरां शुभाम् ।
ॐनमो भगवत्यै कामेश्वर्यैमम पापंव्यपोहतुस्वाहा ॥
पुरा मम कृतं पापं कामधेनो सुरेश्वरि ।
कपिले त्वं जगन्मातर्मम कार्यं प्रसाधय ॥ ३०॥

हे देवि ! संपूर्ण पापों को हरनेवाली शुभ कपिला गौ को इस मंत्र से पूजे ॥ (मंत्रः । ॐ नमोभगवत्यै कामेश्वर्यै मम पापं व्यपोहतु स्वाहा) पहिले किये हुए मेरे पाप को दूर करो हे कामधेनो ! हे सुरेश्वरि ! हे कपिले ! तुम जगत की गाता हो मेरे कार्य को सिद्ध करो ॥ ३० ॥

ततश्च दद्याद्गां देवि ब्राह्मणाय शिवात्मने ।
दशवर्णास्ततो दद्यात् पात्राणि विविधानि च ॥ ३१ ॥
वृषभं च ततो देवि नीलवर्णं सुसंस्कृतम् ।
ब्राह्मणाय प्रदद्यात्तु सर्वपापस्य संक्षयः ॥ ३२ ॥

हे देवि ! पीछे शिवस्वरूपी ब्राह्मण को उस गौ को दान दे पीछे दश प्रकार के वर्णोंवाली गौओं का व अनेक प्रकार के पात्रों का दान करे। हे देवि ! पीछे अलंकृत किये हुए नील वृषभ को ब्राह्मण को दे तब सम्पूर्ण पाप नष्ट हों ॥ ३१-३२ ॥

पूजयेद्विविधैरन्नैः पायसैश्च समोदकैः ।
ब्राह्मणाञ्छतसंख्याकान् रुद्रविष्णुस्वरूपिणः ॥ ३३ ॥

अनेक प्रकार के अन्नों से दूध के पदार्थ और लड्डू आदिकों से शिव और विष्णुस्वरूपी सौ ब्राह्मणों को भोजन करवावे ॥ ३३ ॥

प्रतिमां दापयेत्पश्चाद् ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणाम् ।
बन्धुभिः सह भुञ्जीत ततो विप्रविसर्जनम् ॥ ३४ ॥

पीछे उस मूर्ति को उत्तम ब्राह्मणों को दान देवे, और बंधुजनों को साथ लेकर भोजन करे, पीछे ब्राह्मणों का विसर्जन करे ॥ ३४ ॥

यथाशक्ति प्रदद्याद्वै ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणाम् ।
हरिवंशस्य श्रवणं पार्थिवस्य च पूजनम् ॥ ३५ ॥

शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को दक्षिणा दे, हरिवंशपुराण को सुने और पार्थिव शिव का पूजन करे ॥ ३५ ॥

भूमिदानं विशेषेण ब्राह्मणाय च दापयेत् ।
एवं कृते वरारोहे पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥ ३६ ॥

विशेष करके ब्राह्मण को पृथ्वी का दान दे । हे वरारोहे ! ऐसा करने से पूर्व जन्म का पाप सब दूर होता है ॥ ३६ ॥

पापं प्रशमयेच्छीघ्रं मम वाक्यं च नान्यथा ।
रोगादिविविधं दुःखं तत्सर्वं विलयं व्रजेत् ॥ ३७ ॥

पाप शीघ्र ही शांत होता है, यह मेरा वचन अन्यथा नहीं है । रोग आदि जो अनेक दुःख हैं वे शीघ्र ही नष्ट होवें ॥ ३७ ॥

वंशवृद्धिर्भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ ३८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

हे देवि ! वंश की वृद्धि होवे इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ ३८ ॥

उन्तीसवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ त्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुर्यामवन्तिकायां वै नापितो वसति प्रिये ।
स्वकर्मणः परिभ्रष्टः कृषिकर्मरतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! उज्जैन नगरी में एक नाई रहता था। वह अपने कर्म से भ्रष्ट था, और सदा खेती का काम किया करता था ॥ १ ॥

पत्नी तस्य महादेवि परपुंसि रता सदा ।
कर्कशानाम विख्याता दर्दुरानाम नामतः ॥ २ ॥

हे महादेवि ! उसकी स्त्री सदा परपुरुष से रमण करने वाली कर्कशा थी और दर्दुरा नामवाली थी ॥ २ ॥

एकस्मिन्दिवसे देवि वैश्यो धनसमन्वितः ।
स्वर्णकोटिं च संगृह्य निकटे तस्य चागतः ॥ ३ ॥

हे देवि ! एक दिन एक धनाढ्य वैश्य करोड़ रुपयों के सोने को लेकर उसके पास आया ॥ ३ ॥

नापितेन ततो देवि वैश्यो धनसमन्वितः ।
अर्द्धरात्रे गते काले ततः खड्गेन वै हतः ॥ ४ ॥

हे देवि ! तब उस धनी वैश्य को उस नाई ने आधी रात के समय तलवार से मार डाला ॥ ४ ॥

द्रव्यं सर्वं गृहीत्वा तु तां पुरीं च ततस्त्यजन् ।
सर्वं स्वर्णं व्ययीकृत्य न दानं च कृतं क्वचित् ॥ ५ ॥

फिर संपूर्ण द्रव्य को ग्रहण कर उस नगर को छोड़ दिया और सारा सोना खर्च कर दिया, कुछ भी दान नहीं किया ॥ ५ ॥

एकदा समये देवि नापितेन सह स्त्रिया ।
प्रयागे मकरे मासि मासमेकं निरन्तरम् ॥ ६ ॥

हे देवि ! एक समय उस नाई ने स्त्री सहित माघ महीने में प्रयागजी में ॥ ६ ॥

प्रत्यहं क्रियते स्नानं प्रातःकाले सदाशिवे ।
गोदानं च कृतं तेन वृषभं स्वर्णभूषितम् ॥ ७ ॥

प्रतिदिन प्रातःकाल स्नान किया, हे सदाशिवे ! गोदान किया और सोने से विभूषित किये हुए बैल का दान किया ॥ ७ ॥

ततो वै मरणं तस्य नापितस्य सुरेश्वरि ।
निर्जले तस्य भो देवि चोपले पथिमध्यगे ॥ ८ ॥

हे सुरेश्वरि ! पीछे उस नाई का मरना रास्ते में कहीं निर्जल स्थान में एक पत्थर पर हुआ ॥ ८ ॥

यमदूतैर्महादेवि नरके नामकर्दमे ।
क्षिप्तो यमाज्ञया वर्षसहस्रं षष्टिसंमितम् ॥ ९ ॥

हे महादेवि ! पीछे धर्मराज के दूतों ने यम की आज्ञा से साठ हजार वर्षों तक नरक में रक्खा ॥ ९ ॥

नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ।
पुनर्महिषयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः ॥ १० ॥

हे देवि ! नरक से निकल व्याघ्रयोनि को प्राप्त हुआ पीछे भैंसे की योनि में होकर फिर मनुष्य भया ॥ १० ॥

ऋक्षे पुनर्वसौ देवि तृतीयचरणे वरे ।
प्रातःस्नानफलं देवि नृपवंशसमुद्भवः ॥ ११ ॥

हे देवि ! पुनर्वसुनक्षत्र के तीसरे चरण में जन्मनेवाला यह प्रातःकाल के स्नान के फल से राजकुल में उत्पन्न भया है ॥ ११ ॥

मध्यदेशे वरारोहे सरय्वा उत्तरे तटे ।
महाधनेन संयुक्तश्चौराणां कर्मकारकः ॥ १२ ॥

हे वरारोहे ! मध्यदेश में सरयू नदी के उत्तर तट पर महाधन से युक्त चोरी करनेवाला है ॥ १२ ॥

पत्नी तस्य भवेद् वन्ध्या मृतवत्सा सुतायुता ।
कफरोगसमायुक्ता ज्वरेणैव प्रपीडिता ॥ १३ ॥

उसकी स्त्री वंध्या है उसके संतान नहीं होती है वा कन्या ही जन्मती है, कफरोग से संयुक्त है, या ज्वर से पीड़ित रहती है ॥ १३ ॥

मित्रस्यैव वधः पूर्वं नापितेन यतः कृतः ।
तेन कर्मफलेनैव महारोगसमुद्भवः ॥ १४ ॥

इसने जो पूर्वजन्म में (नाई की योनि में) मित्र का वध किया था उस कर्मफल से यह महारोग हुआ है ॥ १४ ॥

पुत्रोपि जायते देवि तस्य मृत्युर्भवेत्किल ।
शान्ति तस्य प्रवक्ष्यामि शृणु देवि समासतः ॥ १५ ॥

हे देवि ! पुत्र भी हुआ था उसकी भी मृत्यु हो गई, अब उसकी शांति कहता हूँ संक्षेप से सुनो ॥ १५ ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपो यदा ।
तदा पापं क्षयं याति पूर्वजन्मनि यत्कृतम् ॥ १६ ॥

गायत्री मूल मंत्र से पाँच लक्ष जप करावे तब पूर्व जन्म का संपूर्ण पाप नष्ट हो ॥ १६ ॥

हरिवंशस्य श्रवणं चण्डीपाठं शिवार्चनम् ।
विधिवद्देवि कर्तव्यं पापं सर्वं विनश्यति ॥ १७ ॥

हरिवंश को सुने और दुर्गापाठ करावे, विधि से शिवजी का पूजन करे। हे देवि ! ऐसा करने से संपूर्ण पाप नष्ट होवें ॥ १७ ॥

चतुरस्रे ततः कुण्डे होमं चैव तु कारयेत् ।
तिलधान्यादिभिर्देवि दशांशजपसंख्यया ॥ १८ ॥

फिर जप की दशांश संख्या से चौकुंठे कुण्ड में तिल, धान्य आदि से होम करावे ॥ १८ ॥

वैश्यस्य प्रतिमां देवि कारयेद्वै सुवर्णतः ।
पञ्चविंशपलेनैव रचितां च प्रयत्नतः ॥ १९ ॥

हे देवि ! सोने की वैश्य की मूर्ति पच्चीस पल की बनवावे ॥ १९ ॥

ताम्रपात्रे शुभे स्थाप्य पूजयेत्प्रतिमां ततः ।
मन्त्रेणानेन भो देवि गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ २० ॥

फिर उत्तम ताँबे के पात्र में उस मूर्ति को स्थापित कर पीछे गन्ध, अक्षत आदिकों करके इस मन्त्र करके पूजन करे ॥ २० ॥

मन्त्रः । ॐ नमस्ते देवदेवेश शङ्खचक्रगदाधर ।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा मया पापं कृतं पुरा ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव शरणागतवत्सल ॥ २१ ॥

ॐ चक्रधराय नमः । ॐ गोविन्दाय नमः ।
ॐ दामोदराय नमः । ॐ कृष्णाय नमः ।
ॐ हंसाय नमः । ॐ परमहंसाय नमः ।
ॐ अच्युताय नमः । ॐ हृषीकेशाय नमः ।

मन्त्रः। ॐ हे देवदेवेश ! हे शङ्खचक्रगदाधर ! अज्ञान से अथवा प्रमाद से जो मैंने पूर्वजन्म में पाप कियाहो। हे शरणागतवत्सल ! उस सम्पूर्ण को क्षमा करो ॥ २१ ॥

ॐ चक्रादिनामभिश्चैतैः सर्वदिक्षु प्रपूजयेत् ।
प्रतिमां पूजयित्वा तु तां विप्राय प्रदापयेत् ॥ २२ ॥

इस प्रकार इन चक्रधर नामों से सम्पूर्ण दिशाओं में मूर्ति का पूजन करके ब्राह्मण को दे देवे ॥ २२ ॥

ततो गां कृष्णवर्णां तु ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
पञ्चसंख्यमितं देवि प्रदद्याद्वै कुटुम्बिने ॥ २३ ॥

पाँच काली गौओं का दान ब्राह्मण को दे ॥ २३ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि यथासंख्यान्वरानने ।
एवंकृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ २४ ॥

हे देवि ! अपनी शक्ति के अनुसार ब्राह्मणभोजन करावे। हे वरारोहे ! ऐसा करने से शीघ्र ही पुत्र होवे ॥ २४ ॥

वन्ध्यात्वं नाशयत्याशु सर्वरोगो विनश्यति ॥ २५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

शीघ्र ही वन्ध्यापन दूर होवे और संपूर्ण रोग नष्ट होवें ॥ २५ ॥

तीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ एकत्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अवन्त्याः पश्चिमे देवि क्रोशमात्रोपरि प्रिये ।
कैवर्त्तको वसत्येको नन्दने च पुरे शुभे ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! अवन्ती नगरी से पश्चिम की तरफ एक कोस पर नंदननामक पुर में एक धीवर (कहार) बसता था ॥ १ ॥

मनोहर इति ख्यातो धनाढ्यो जायते महान् ।
मत्ता तस्याभवत्पत्नी पतिशुश्रूषणे रता ॥ २ ॥

उसका नाम मनोहर और उसकी स्त्री का नाम मत्ता था, वह धनी था, उसकी स्त्री पतिसेवा करती थी ॥ २ ॥

मत्स्यमांसस्य भो देवि विक्रयं चाकरोत्खलु ।
सञ्चितं बहुरत्नञ्च न दानं बहुधाकरोत् ॥ ३ ॥

हे देवि ! वह सदा मछलियों का मांस बेचा करता था, सो उसने बहुत सा धन इकट्ठा किया, लेकिन बहुत सा दान नहीं किया ॥ ३ ॥

एकदा चन्द्रग्रहणे शतस्वर्णयुतं वृषम् ।
अदाद्विप्राय विदुषे भार्यया सह भक्तितः ॥ ४ ॥

एक समय चंद्रग्रहण में सौ मोहरों से युक्त एक बैल विद्वान् ब्राह्मण को स्त्रीसहित भक्ति से दान दिया ॥ ४ ॥

ततो मृत्युवश यातो भार्या तस्य मृता पुरा ।
यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितः पुरा ॥ ५ ॥

पीछे मृत्यु के वश में हुआ और इसकी स्त्री पहले ही मर गई थी, फिर धर्मराज के दूतों ने महाघोर नरक में छोड़ा ॥ ५ ॥

यमाज्ञया महादेवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
नरकान्निःसृतो देवि शृगालो गहने वने ॥ ६ ॥

हे महादेवि ! धर्मराज की आज्ञा से साठ हजार वर्षों तक वह मनुष्य नरक में रहा, फिर नरक से निकलकर गह्वर वन में गीदड़ हुआ ॥ ६ ॥

पुनः काको वरारोहे ततो भवति मानुषः ।
गुणज्ञो देवताभक्तो वेश्यासुरततत्परः ॥ ७ ॥

हे वरारोहे ! पीछे कौआ की योनि में प्राप्त होकर फिर गुणी मनुष्य हुआ है, और देवभक्त है, लेकिन वेश्या के संग रमण करने वाला है ॥ ७ ॥

रागी सूक्ष्मतनुर्वक्ता ज्ञानवान्सुतवर्जितः ।
तस्य भार्या भवेत्स्थूला कुरूपा कर्कशा तथा ॥ ८ ॥

प्रीति करनेवाला, सूक्ष्म शरीरवाला, बोलनेवाला तथा ज्ञानवान् और पुत्ररहित, उसकी स्त्री स्थूल शरीरवाली, कुरूपा और कर्कशा है ॥ ८ ॥

पूर्वजन्मप्रसङ्गाच्च मत्स्यमांसोपभोगिनी ।
मासि पुष्पं भवेद्देवि गर्भस्य पतनं तथा ॥ ९ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म के प्रसंग से मछली के मांस को खानेवाली हुई, और हर महीने रजस्वला होती है, लेकिन गर्भपात हो जाता है ॥ ९ ॥

तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ।
यत्कृतेन वरारोहे शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥ १० ॥

हे देवि ! अब इसकी शांति कहता हूँ सो सुनो, जिसके करने से शीघ्र ही पुत्र उत्पन्न हो ॥ १० ॥

हरिवंशस्य श्रवणं त्रिवारं च विधानतः ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं तथा ॥ ११ ॥

विधिपूर्वक तीन बार हरिवंश को सुने और गायत्री मूलमंत्र से पाँच लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥

दशांशं हवनं देवि दशांशं चैव तर्पणम् ।
मार्जनं च विशेषेण दशांशं चैव कारयेत् ॥ १२ ॥

हे देवि ! दशांश होम और तर्पण तथा तद्दशांश मार्जन करावे ॥ १२ ॥

ततो गां कपिलां दद्याद्दशवर्णां ततः प्रिये ।
सूर्यस्य प्रतिमां देवि स्वर्णैर्दशपणैस्तथा ॥ १३ ॥

हे प्रिये ! पीछे कपिला गौ का दान करे और दशवर्ण-वाली गौ का दान करे, दश तोले सोने की मूर्त्ति को बनवावे ॥ १३ ॥

भूषितं विविधैर्वस्त्रैः स्वर्णरौप्यविभूषणैः ।
पूजयित्वा विधानेन मन्त्रेणानेन पार्वति ॥ १४ ॥

पीछे अनेक वस्त्रों से भूषित कर और सोने-चाँदी के भूषणों से युक्त करे। हे पार्वति ! इस विधि से इस मंत्र से पूजन करे ॥ १४ ॥

मन्त्रः । ॐ त्वंज्योतिःसर्वलोकानांपूज्यस्त्वंसर्वदेहिनाम् ।
पूर्वजन्मकृतं पापं हर मे तिमिरापह ॥ १५ ॥

(१) **ॐ श्री सूर्याय नमः ।** (२) **ॐ सवित्रे नमः ।** (३) **ॐ साक्षिणे नमः ।** (४) **ॐ त्रिगुणात्मने नमः ।** (५) **ॐ द्वादशात्मने नमः ।** (६) **ॐ केयूरधारिणे नमः ।** (७) **ॐ तीक्ष्णांशुधारिणे नमः ।** (८) **ॐ कलाकाष्ठादिरूपिणे नमः ।** (९) **ॐ विष्णवे नमः ।** (१०) **ॐ ब्रह्मणे नमः ।** (११) **ॐ रुद्राय नमः ।** (१२) **ॐ मार्त्तण्डाय नमः ।**

ॐ मन्त्रैर्द्वादशभिर्देवि पूजयेत्प्रतिमां ततः ।
धूपदीपादिभिश्चैव ताम्बूलैश्च विधानतः ॥ १६ ॥

हे देवि ! इन बारह मंत्रों से धूप दीप आदिकों से तथा नागर पान समर्पण कर विधि से पूजन करे ॥ १६ ॥

पूजितां प्रतिमां दद्याद् ब्राह्मणाय वराय च ।
दासीं दासं धनं धान्यं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।। १७ ।।

पूजा की हुई मूर्त्ति को उत्तम ब्राह्मण को दान दे और दास-दासी, धन-धान्य ये भी सब वस्तु ब्राह्मण को दे ।। १७ ।।

अश्वदानं रथं वस्त्रं पात्राणि विविधानि च ।
शय्यादिकं वरारोहे वित्तशाठ्यं न कारयेत् ।। १८ ।।

हे वरारोहे ! अश्व, रथ, अनेक प्रकार के वस्त्र इन सबों का भी दान करे और इसमें कंजूसी न करे ।। १८ ।।

एवं कृते न सन्देहश्चिरंजीविसुतं लभेत् ।
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न चान्यथा ।। १९ ।।

इस प्रकार करने से निश्चय चिरंजीवी पुत्र प्राप्त होता है और पूर्वजन्म में किया हुआ पाप संपूर्ण नाश हो जाता है ।। १९ ।।

सप्तम्यां रवियुक्तायां व्रतं कुर्यात्सुरेश्वरि ।
पापं व्याधिः क्षयं याति ज्वरः क्वापि न जायते ।। २० ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुनर्वसु-नक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैक-त्रिंशोऽध्यायः ।। ३१ ।।

हे सुरेश्वरि ! रविवार के दिन वाली सप्तमी का व्रत करे और इस प्रकार करने से संपूर्ण पाप और व्याधि नाश हो जाती है और शरीर में ज्वर कभी नहीं रहता है ।। २० ।।

इकतीसवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ द्वात्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पापेन जायते व्याधिः पापेनैवासुतो भवेत् ।
पापेन जायते मूर्खः पापेनैव दरिद्रता ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, पाप से ही अनेक प्रकार की व्याधियाँ होती हैं, और पाप से ही पुत्र नहीं होता और पाप से ही मनुष्य मूर्ख और दरिद्री होता है ॥ १ ॥

पूर्वजन्मकृतं यत्तु पापं वा पुण्यमेव वा ।
इहजन्मनि भो देवि भुज्यते सर्वदेहिभिः ॥ २ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म में किया हुआ पुण्य अथवा पाप इस जन्म में संपूर्ण देहधारियों को भोगना पड़ता है ॥ २ ॥

पुण्येन जायते विद्या पुण्येन जायते सुतः ।
पुण्येन सुन्दरी नारी पुण्येन लभते श्रियम् ॥ ३ ॥

पुण्य से विद्या प्राप्त होती है, और पुण्य से पुत्र होता है और पुण्य से सुन्दर स्त्री और लक्ष्मी मिलती है ॥ ३ ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि पुष्यनक्षत्रजं फलम् ।
तत्सर्वं शृणु मे देवि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ४ ॥

अब पुष्य नक्षत्र में जन्मनेवाले के फल कहता हूँ—उसने जो कुछ पूर्वजन्म में किया है सो सब सुनो ॥ ४ ॥

मध्यदेशे वरारोहे धनाढ्यो बल्लवोऽवसत् ।
हंसकेतुरिति ख्यातो भार्या तस्य तु केकयी ॥ ५ ॥

हे वरारोहे ! मध्यदेश में एक धनाढच हंसकेतु अहीर बसता था और उसकी स्त्री का नाम केकयी था ॥ ५ ॥

बहवो वषभास्तस्य महिष्यो गास्तथा प्रिये ।
धर्मकर्मरतः शूद्रो विक्रयेद्गोवृषादिकम् ॥ ६ ॥

हे प्रिये ! उसके बहुत से बैल, भैंस, गौ रहा करती थीं और वह शूद्र अपने धर्म-कर्म में रत था और गाय, बैलों को बेचा करता था ॥ ६ ॥

घततक्रस्य भो देवि विक्रयं कुरुते सदा।
एको वैश्यो धनाढ्यो वै तस्य मित्रं तदाभवत् ॥ ७ ॥

हे देवि ! घी और मट्ठा बेचा करता था, उसका मित्र एक धनाढ्य वैश्य था ॥ ७ ॥

महाप्रीतिस्तयोर्जाता बहुवर्षप्रमाणतः ।
एकदा तु निशायां वै शूद्रेण वणिकः प्रिये ॥ ८ ॥

फिर बहुत दिनों तक इन दोनों की बड़ी प्रीति रही। हे प्रिये ! एक समय उस शूद्र ने उस वैश्य को ॥ ८ ॥

शुभरत्नादिलाभाय कटारेण तदा हतः ।
द्रव्यं सर्वं गृहीतं तु भूमिमध्ये तथा धृतम् ॥ ९ ॥

सुन्दर रत्नादिकों के लोभ से तलवार से मार डाला और उसका सब धन लेकर जमीन में गाड़ दिया ॥ ९ ॥

तन्मध्ये तु षडंशस्य व्ययं कुर्याद् दिने दिने ।
बहुवर्षगते काले शूद्रो मृत्युवशोभवत् ॥ १० ॥

फिर उसमें से छठे हिस्से धन को प्रति दिन खर्च करता था और फिर बहुत से वर्ष बीत जाने पर वह शूद्र मर गया ॥ १० ॥

पातयामास घोरे तु यमदूतो यमाज्ञया ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ११ ॥

ततो जातो महादेवि राक्षसो गहने वने ।
पुनः शृगालयोनिं च मानुषत्वं भवेत्पुनः ॥ १२ ॥

यमराज की आज्ञा से यम के दूत उसको घोर नरक में छोड़ते हुए, फिर साठ हजार वर्ष तक नरक की पीड़ा को भोगकर गह्वर वन में राक्षस हुआ, पीछे गीदड़ की योनि को प्राप्त हो फिर मनुष्य की योनि में पैदा हुआ ॥ ११-१२ ॥

धनधान्यसमायुक्तो भार्या जाता तु या पुरा।
वन्ध्यारोगसमायुक्ता कन्यका चैव जायते ॥ १३ ॥

और यह धन-धान्य से युक्त है और पूर्वजन्म में जो इसकी स्त्री थी सो वह वंध्या, रोगी या उसके कन्या ही जन्मती है ॥ १३ ॥

तस्य रोगो भवेत्पश्चाद्विविधश्च वयोन्तरे।
पूर्वजन्मनि भो देवि मित्रश्च निहतं यतः ॥ १४ ॥

पीछे बुढ़ापा में इसके कई तरह के रोग उत्पन्न हो गये हैं। हे देवि! इसने जो पूर्वजन्म में मित्र को मारा था ॥ १४ ॥

तत्पापेन च भो देवि पुत्रो नैवोपजायते।
बहुपुत्रप्रघाती च कम्परोगी प्रजायते ॥ १५ ॥

हे देवि! उस पाप से इसके पुत्र नहीं उत्पन्न होता है और बहुत पुत्रों को मारनेवाला और कंपरोगवाला है ॥ १५ ॥

तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने।
षडंशं वै ततो दानं विदुषे ब्राह्मणाय च ॥ १६ ॥

हे देवि! इसकी शांति कहता हूँ सो सुनो। विद्वान् ब्राह्मण को छठे हिस्से धन का दान करे ॥ १६ ॥

गां तथा महिषीं दद्याद्विधिवद्भोजयेद्द्विजान्।
गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं च जपं ततः ॥ १७ ॥

गौ तथा महिषी का दान और नाना प्रकार के ब्राह्मणों को भोजन करावे और "गायत्री" तथा "जातवेदसे सुन०" इन मंत्रों का दो लाख जप करावे ॥ १७ ॥

कुण्डे कोणत्रये चैव होमं वै कारयेत्ततः ।
जपस्यैव दशांशेन हवनादिकमाचरेत् ॥ १८ ॥

त्रिकोण कुंड में होम करावे और जप की दशांश संख्या से हवनादि कर्म कराना योग्य है ॥ १८ ॥

ततो वै प्रतिमां कुर्याद्वैश्यस्यैव विधानतः ।
द्वादशेन पलेनैव सुवर्णस्य विशेषतः ॥ १९ ॥

पीछे विधिपूर्वक बारह पल सोने की वैश्य की मूर्त्ति बनवावे ॥ १९ ॥

पूजयेत्पूर्वजैर्मन्त्रैस्ततो विप्राय दापयेत् ।
एवंकृते न संदेहः पुत्रो भवति नान्यथा ॥ २० ॥

पूर्वोक्त मंत्रों करके प्रतिमा को पूजन करे पीछे ब्राह्मण को दे । ऐसा करने से पुत्र होता है इसमें संदेह नहीं है ॥ २० ॥

सर्वरोगः क्षयं याति नात्र कार्या विचारणा ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

बत्तीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि शृणु देवि विशेषतः ।
आदौ पापफलं देवि भुज्यते देवमानुषैः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! अब खूब ध्यान देकर सुनो । पहले पाप का फल संपूर्ण देव और मनुष्यों को भोगना पड़ता है ॥ १ ॥

पश्चात्पुण्यफलं देवि परलोक इहापि वा ।
एकः शिल्पकरो देवि वसते हस्तिनापुरे ॥ २ ॥

हे देवि ! पीछे पुण्य का फल इस लोक में और परलोक में भोगते हैं। हस्तिनापुर में एक शिल्पकार (कारीगर) रहता था ॥ २ ॥

हेमदास इति ख्यातो भार्याद्वयसमन्वितः ।
प्रत्यहं शिल्पकार्यं च करोति व्ययकारणात् ॥ ३ ॥

हेमदास के दो स्त्रियाँ थीं, अपने खर्च के लिए कारीगरी का काम किया करता था ॥ ३ ॥

काशीतः पश्चिमे देवि स्वकर्मनिरतः सदा ।
अश्वत्थानां च वृक्षाणां छेदनानि चकार सः ॥ ४ ॥

हे देवि ! वह अपना कर्म करता हुआ काशी से पश्चिम की तरफ पीपल के वृक्षों को काटता था ॥ ४ ॥

एवं बहुगते काले शिल्पकारो मृतः प्रिये ।
नरके तस्य पतनं षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥

हे प्रिये ! बहुत समय बीतने पर वह कारीगर मर गया, और साठ हजार वर्ष तक नरक में पड़ा रहा ॥ ५ ॥

पत्न्या सह वरारोहे यातो योनिं विडालकाम् ।
विडालयोनिं वै भुक्त्वा वृषयोनिं ततोभवत् ॥ ६ ॥

हे वरारोहे ! फिर स्त्रीसहित बिलाव योनि में, और फिर बिलाव योनि से बैल की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

पुनः स्यान्मानुषो देवि मध्यदेशे सुपूजितः ।
पूर्वजन्मनि वृक्षाणां छेदनं प्रत्यहं कृतम् ॥ ७ ॥

हे देवि ! पीछे मध्यदेश में उत्तम मनुष्य हुआ है । पूर्वजन्म में वृक्षों को काटता था—याने उच्छिन्न करता था ॥ ७ ॥

तेन पापेन भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते ।
कन्यकाश्चैव सञ्जाताः स्त्रिया रोगः सुदारुणः ॥ ८ ॥

हे देवि ! इस पाप से इसके पुत्र नहीं होता है, और कन्या ही जन्मती हैं और स्त्री के दारुण रोग हमेशा बना रहता है ॥ ८ ॥

शरीरे महती पीडा रात्रौ निद्रा न लभ्यते ।
कन्यकायाश्च वैधव्यं वृक्षच्छेदनतः प्रिये ॥ ९ ॥

हे प्रिये ! इसके शरीर में बहुत पीड़ा और रात को नींद नहीं आती । वृक्षों के काटने से इसकी कन्या विधवा हो गई है ॥ ९ ॥

तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि ततः पापनिवर्त्तनम् ।
चतुर्थांशं तु वै दानं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ १० ॥

अब इसकी शांति कहता हूँ, इससे पाप निवृत्त होगा । अपने धन का चौथा हिस्सा ब्राह्मण को दान देवे ॥ १० ॥

दशायुतं जपं कुर्याद्गायत्रीमूलमन्त्रतः ।
पलपञ्च सुवर्णस्य वृक्षं वै कारयेत्ततः ॥ ११ ॥

"गायत्री" मूल मंत्र से लक्ष जप करावे और पाँच पल सोने का वृक्ष बनवावे ॥ ११ ॥

पूजयित्वा यथान्यायं वृक्षं विप्राय दापयेत् ।
पञ्चधेनुं तथा दद्यात् वृषं चाभरणान्वितम् ॥ १२ ॥

यथार्थ विधि से पूजित वृक्ष को दान करे, और पाँच गौ, एक बैल का दान करे ॥ १२ ॥

कूषमाण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।
गङ्गामध्ये च दातव्यं ततः पापक्षयो भवेत् ॥ १३ ॥

कुम्हड़ा और नारियल को पंचरत्न से भर के गंगाजी के मध्य में दान करने से सब पाप नष्ट हो जाता है ॥ १३ ॥

सर्वव्याधिः क्षयं याति कन्यका च सुखान्विता ।
पुत्रश्चैव प्रजायेत नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

सब रोग दूर हो, और कन्या सुखी हो, पुत्र उत्पन्न हो इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये ॥ १४ ॥

तेंतीसवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मध्यदेशे वरारोहे लोहकारश्च तस्थिवान् ।
गौरेका लोहकारेण बाल्यतः पालिता शिवे ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे वरारोहे ! मध्यदेश में एक लुहार रहता था, उसने बालकपने से एक गौ पाली थी ॥ १ ॥

एकस्मिन्दिवसे पङ्के मग्ना च गौर्वराभवत् ।
तच्छ्रुत्वा लोहकारस्तु न गतस्तत्र वै शिवे ॥ २ ॥

हे देवि ! एक दिन वह गौ कीचड़ में रपट गई । यह सुनकर लुहार उसको लेने नहीं गया ॥ २ ॥

मृता रात्रौ तदा देवि पङ्के वै तरणी च सा ।
बहुघस्रात्ततो देवि मरणं तस्य वै गृहे ॥ ३ ॥

हे देवि ! वह गौ उस कीचड़ में रात्रि को मर गई । बहुत दिन बीत जाने पर घर में लुहार की भी मृत्यु हो गई ॥ ३ ॥

तस्य पत्नी सती जाता सत्यलोकं गतौ च तौ ।
दशलक्षमितं वर्षं सत्यलोके च तस्थिवान् ॥ ४ ॥

उसकी स्त्री सती हो गई, दोनों को स्वर्गलोक दश लाख वर्ष मिला ॥ ४ ॥

पुनः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके तदाभवत् ।
मानुषः शुभजन्मा च धनधान्यसमन्वितः ॥ ५ ॥
पत्न्या सह वरारोहे ब्राह्मणानां च सेवकः ।
पूर्वजन्मनि देवेशि पङ्के मग्ना च यत्र गौः ॥ ६ ॥

फिर पुण्यक्षीण होने पर मृत्युलोक में मनुष्य हुए हैं और अच्छे धनी कुल में हे वरारोहे! स्त्रीसहित हुआ, ब्राह्मणों का सेवक है। इसने पूर्वजन्म में जहाँ कीचड़ में गौ रपट गई थी ॥ ५-६ ॥

न गतस्तत्र भो देवि तस्मात्पुत्रो न जायते ।
कन्या जाता पुरा देवि तस्या मृत्युश्च जायते ॥ ७ ॥

वहाँ नहीं गया था। हे देवि! इसलिए इसके पुत्र नहीं होता है, और कन्या हुई थी वह भी मर गई ॥ ७ ॥

तदर्थं वाटिकां कूपं पथिमध्ये च कारयेत् ।
कुर्याच्चैव तुलादानं पात्राणि विविधानि च ॥ ८ ॥

उस पाप शांति के लिए मार्ग में बावड़ी या कुआँ बनवावे और तुला तथा अनेक प्रकार के पात्रों का दान करे ॥ ८ ॥

गोयुग्मं घृतकुम्भं च ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
गायत्रीमन्त्रजाप्यं च लक्षमेकं तु कारयेत् ॥ ९ ॥

गोयुग्म (गौ का जोड़ा), घृत कलश का दान ब्राह्मण को देवे, और एक लाख "गायत्री" का जप करावे ॥ ९ ॥

होमं कुर्यात्ततो देवि तिलधान्यादितण्डुलैः ।
ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि शतसंख्यान्वरानने ॥ १० ॥

हे देवि ! तिल, जौ, चावलों से होम करे पीछे सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १० ॥

एवं कृत्वा वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा ।
वन्ध्यात्वं नाशमायाति व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम् ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य-तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३४॥

हे वरारोहे ! ऐसा करने से पुत्र होता है, वंध्या रोग दूर हो जाता है, संपूर्ण व्याधि का नाश होता है ॥ ११ ॥

चौंतीसवाँ अध्याय समाप्त ।

—-:०:-—

अथ पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगराद्देविपूर्वे क्रोशचतुर्दशे ।
तत्राप्येकोवसच्छाककारो वैडुम्बराभिधः ॥ १ ॥

हे देवि ! अयोध्या से पूर्व दिशा में चौदह कोस पर एक वैडुम्बर नाम का माली रहता था ॥ १ ॥

चिन्ता तस्याभवेत्पत्नी पतिसेवापरायणा ।
शाककारो महासाधुर्विष्णुभक्तिरतः सदा ॥ २ ॥

उसकी स्त्री चिंता पति की सेवा में लगी रहती थी, इस तरह शाककार हमेशा विष्णु की सेवा में लगा रहता था ॥ २ ॥

गुरुसेवारतो नित्यं प्रत्यहं शाकविक्रयी ।
एका मार्जारिका श्वेता पालिता तेन वै हता ॥ ३ ॥

रोज गुरु की सेवा करता प्रति दिन साग बेचता था । उसने एक पली सफेद बिल्ली को मार दी ॥ ३ ॥

प्राप्तो वै तमसातीरे तीर्थे मृत्युर्मम प्रिये ।
विष्णुभक्तिरतो यस्मात्तीर्थे मृत्युफलादपि ॥ ४ ॥

हे प्रिये ! नित्य विष्णुभक्ति करने से मेरे तीर्थ तमसा नदी पर मृत्यु हुई ॥ ४ ॥

न गतो यमलोकं तु भुक्त्वा स्वर्गं तु चाभवत् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि पुनः पुण्यक्षये यदा ॥ ५ ॥

वह यमलोक में नहीं गया । उसका स्वर्गवास हुआ और साठ हजार वर्ष स्वर्ग में रहने पर जब पुण्य नाश हुआ ॥ ५ ॥

तदा वृषभयोनिश्च मृत्युलोकेऽभवत्पुनः ।
मानुषत्वं ततो यातो धनधान्यसमन्वितः ॥ ६ ॥

तो मृत्युलोक में बैल की योनि में हुआ, फिर धनधान्य-सहित मनुष्य हुआ ॥ ६ ॥

सुन्दरो विष्णुभक्तित्वात्पुत्रेण रहितः शिवे ।
गर्भाणां पतनं यातं यतो मार्जारिका हता ॥ ७ ॥

हे शिवे ! वह माली विष्णुभक्त होने से पुत्ररहित हुआ । उसके गर्भ नष्ट हुये क्योंकि बिल्ली को मारा था ॥ ७ ॥

सगर्भा च तदा देवि ततो गर्भो विनश्यति ।
तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे वरे ॥ ८ ॥

हे पार्वति ! वह बिल्ली सगर्भा थी, इससे उसका गर्भ गिर गया । उसकी शांति कहता हूँ ॥ ८ ॥

गृहवित्तार्द्धभागं वै ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
तदा पापं क्षयं याति नात्र कार्या विचारणा ॥ ९ ॥

अपने घर के धन का आधा भाग ब्राह्मण को दान देवे, तब सब पाप दूर होता है ॥ ९ ॥

शिवार्चनं कारयित्वा रौप्यमार्जारिकां तथा ।
पलानां सप्तकैः कुर्यात्सगर्भां विमलां शुभाम् ॥ १० ॥

शिव का पूजन करके सौ पल चाँदी की गर्भसहित सुन्दर बिल्ली बनवावे ॥ १० ॥

पूजयित्वा ततो देवि ततो दद्याद् द्विजन्मने ।
लक्षजाप्यं ततो देवि त्र्यम्बकेण विशेषतः ॥ ११ ॥

हे देवि ! पूजन करके ब्राह्मण को दान दे फिर "त्र्यंबकं०" मंत्र का लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥

ततो भवति वै शुद्धः पूर्वपापान्न संशयः ।
पुत्रो भवति वै देवि रोगाणां संक्षयस्तथा ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥३५॥

तब सब पापों से शुद्ध होता है, इसमें संदेह नहीं। हे देवि ! पुत्र की प्राप्ति होती है, और संपूर्ण रोगों का नाश होता है ॥ १२ ॥

पैंतीसवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ।
जातस्य सर्पनक्षत्रे प्रथमे चरणे शुभे ॥ १ ॥

हे देवि ! अब आश्लेषा नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म होने का फल कहता हूँ सुनो ॥ १ ॥

पुरी काशी समाख्याता त्रैलोक्ये देवि पूजिता ।
तस्यास्तु पश्चिमे भागे क्रोशपञ्चदशे मिते ॥ २ ॥

हे देवि ! त्रिलोकपूजित काशी के पश्चिम में पन्द्रह कोस दूर ॥ २ ॥

माण्डव्यस्य पुरे शुभ्रे वसन्ति बहवो जनाः ।
तन्मध्ये शूद्र एको हि प्राकरोल्लवणं सदा ।। ३ ।।

माण्डव्यपुर है, उसमें बहुत मनुष्य रहते हैं । उसमें एक शूद्र लोनिया भी रहता था ।। ३ ।।

डिण्डिभेति समाख्यातो गौरी तस्य वरानना ।
बह्वर्थं संचितं तेन न दानमकरोत्क्वचित् ।। ४ ।।

डिंडिभ नाम से विख्यात था, उसकी स्त्री का नाम गौरी था । उसने बहुत धन इकट्ठा किया और कुछ भी दान नहीं किया ।। ४ ।।

एकदा दैवयोगेन ब्राह्मणानां निमन्त्रणम् ।
भोजनं प्रददौ कृत्वा दक्षिणां वै समर्पयेत् ।। ५ ।।

दैवयोग से एक बार ब्राह्मणों को निमंत्रण दिया और भोजन कराकर दक्षिणा दिया ।। ५ ।।

गामेकां कपिलां दत्त्वा भूषितां स्वपुरोधसे ।
ब्राह्मणोकथयत्कश्चित् शूद्रं प्रति तदा प्रिये ।। ६ ।।
अहं ग्रामस्य वै पूज्यो मदीया गौः कथं प्रभो ।
पुरोहिताय दत्तासि प्राणं ते च ददाम्यहम् ।। ७ ।।
इति श्रुत्वा वचस्तस्य सोवदद्ब्राह्मणं प्रति ।
क्रोधेन महता देवि ब्राह्मणाय तदाधमः ।। ८ ।।

हे प्रिये ! एक कपिला गौ को आभूषणसहित अपने पुरोहित को दिया । तब उस शूद्र से एक ब्राह्मण ने कहा कि मैं ग्राम का पूज्य हूँ, मेरी गौ इस पुरोहित को क्यों दी, इसलिए तेरे ऊपर अपने प्राण देता हूँ । शूद्र ने यह सुनकर बड़े क्रोध से ब्राह्मण से कहा ।। ६-८ ।।

तदा क्रोधेन महता स शूद्रोऽताडयद् द्विजम् ।
मरणं तस्य वै जातं तद्धस्ताद्वै वरानने ।। ९ ।।

शूद्र ने बड़े क्रोध से उस ब्राह्मण को मारा। हे वरानने! उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई ॥ ९ ॥

ततो बहुतिथे काले सस्त्रीकः प्रमतः खलः।
पातनं तस्य वै जातं कर्मपाके तदा खलु ॥ १० ॥

फिर बहुत दिनों के बाद स्त्रीसहित वह शूद्र मर गया तब उसको नरकवास हुआ ॥ १० ॥

निक्षिप्य यमदूतेन तत्रैव च यमाज्ञया।
पञ्चलक्षं ततो वर्षं कष्टं दत्तं मुहुर्मुहः ॥ ११ ॥

उस शूद्र को यमराज की आज्ञा से दूतों ने नरक में पटका। वहाँ पाँच लक्ष वर्ष तक नरक भोगता रहा ॥ ११ ॥

तत्र जाता महापीडा नरकान्निःसृतस्ततः।
सर्पयोनिं स वै यातो गृध्रयोनिस्ततोभवत् ॥ १२ ॥

नरक के अनेक दुःखों को भोग कर सर्प की योनि में पैदा हुआ, फिर गीध की योनि में गया ॥ १२ ॥

मानुषत्वं ततो लब्धं मध्यदेशे वरानने।
पूर्वपापाच्च भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते ॥ १३ ॥

हे वरानने! मध्यदेश में मनुष्य-योनि में हुआ। पहले पाप से उसके पुत्र नहीं हुए ॥ १३ ॥

शरीरे रोग उत्पन्नो विग्रहस्तु वरानने।
प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वकिल्विषशान्तये ॥ १४ ॥

हे वरानने! शरीर में रोग और दुःख को प्राप्त हुआ। उसके प्रथम पाप की शांति कहता हूँ ॥ १४ ॥

गायत्रीसूर्यमन्त्राभ्यां पञ्चलक्षजपं शिवे।
करोतु विधिवद्भक्त्या तदा वै वरवर्णिनि ॥ १५ ॥

हे शिवे! गायत्री मंत्र और सूर्य का मंत्र पाँच लाख जप करवावे ॥ १५ ॥

होमं कारयितुं त्वाज्यं कुण्डे चाष्टदले तथा ।
दशांशतर्पणं तस्य मार्जनं तद्दशांशतः ॥ १६ ॥

और अष्टदल कुंड बनवाके घी से होम करावे और दशांश तर्पण और मार्जन करवावे ॥ १६ ॥

प्रतिमां रुचिरां कृत्वा सुवर्णस्य महेश्वरि ।
पलषष्टचाः प्रयत्नेन पूजयित्वा यथाविधि ॥ १७ ॥

हे महेश्वरि ! साठ पल सोने की मूर्ति बनवाकर विधि से पूजन करवावे ॥ १७ ॥

मन्त्रेणानेन विधिना गन्धधूपादिभिस्तथा ।
दुर्गे देवि नमस्तुभ्यं सर्वसिद्धिप्रदेश्वरि ॥ १८ ॥
इमां पूजां गृहीत्वा तु मम कार्यं प्रसाधय ॥ १९ ॥

'दुर्गे देवि०' इस मंत्र से चंदन धूपादि से पूजन करे ॥ १८-१९ ॥

मन्त्रः । ॐ ह्रीं महेश्वर्यै नमः । ॐ दुर्गायै नमः ॥ ॐसर्वकामप्रदे नमः । ॐ ईश्वर्यै नमः । ॐ त्र्यम्बकाय नमः । ॐ ब्रह्मणे नमः । ॐ विष्णवे नमः । ॐ सर्वेश्वराय नमः । ॐ भैरवाय नमः । ॐ मार्त्तण्डाय नमः ॥

एतैश्च दशभिर्मन्त्रैः प्रतिमां पूजयेत्प्रिये ।
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ २० ॥

हे प्रिये ! इन १० मंत्रों से मूर्ति का पूजन करे, फिर ब्राह्मण को संकल्प देवे ॥ २० ॥

पञ्चपात्रं ततो दद्यात् तदुद्देशेन पार्वति ।
तिलदानं ततो दद्याद्वस्त्रदानं यथाविधि ॥ २१ ॥

फिर पाँच पात्रों का, तिल का, तथा वस्त्रों का विधिपूर्वक दान देवे ॥ २१ ॥

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापप्रणाशनम् ॥ २२ ॥
रोगात्प्रमुच्यते देवि वन्ध्यापि पुत्रमाप्नुयात् ॥ २३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे आश्लेषा-नक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥

एक कुम्हड़ा तथा नारियल को पंचरत्नसहित पूर्व पाप के दूर होने के लिये गङ्गा के मध्य में दान करे । हे देवि ! इस प्रकार करने से रोग से दूर हो और वंध्या के भी पुत्र हो ॥ २२-२३ ॥

छत्तीसवाँ अध्याय समाप्त ।

अथ सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अलर्कस्य पुरे देवि शूद्र एकोवसत्पुरा ।
शूद्राचाररतो नित्यं विक्रयं कुरुते सदा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! "अलर्का" पुरी में एक शूद्र रहता था और शूद्रकर्म में रत था और व्यापार करता था ॥ १ ॥

गोमहिष्यादिव्यापारैर्व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।
गोधनानि बहून्येव तेषां रक्षा न जायते ॥ २ ॥

और प्रति दिन गौ, भैंस बेचने का काम करता था और उसके गौ, महिषी बहुत थीं, उनकी रक्षा नहीं करता था ॥ २ ॥

दुर्लभ इति विख्यातो तत्राज्ञानी सदाभवत् ।
एकदा तस्य गोवृन्दे वने तिष्ठति भोऽनघे ॥ ३ ॥

वृष्टिस्तत्र महाजाता गावश्च पीडिता भृशम् ।
तासां मध्ये भूरि गावो वर्षणेन मृताः पुरा ॥ ४ ॥
रक्षां शूद्रो नाकरोत्स तृणैराच्छादनादिभिः ।
एवं बहुगते काले शूद्रः पापी मृतो यदा ॥ ५ ॥

एक दुर्लभ अज्ञानी वहाँ वास करता था । हे अनघे ! वन में गौवों का झुंड इकट्ठा था । वहाँ वन में महावर्षा होने से गौवों को बड़ी तकलीफ हुई, और बहुत सी गौवें वर्षा से मर गईं । तृण और छाया से वह गौवों की रक्षा नहीं करता था । ऐसे बहुत-सा काल होने से वह पापी शूद्र मर गया ॥ ३-५ ॥

नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया ।
बहुवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकजं फलम् ॥ ६ ॥
नरकान्निर्गतो देवि गजयोनिमवाप्तवान् ।
गजयोनिं ततो भुक्त्वा मानुषत्वं ततोगमत् ॥ ७ ॥

यम की आज्ञा से दूत उसको नरक में ले गये । वहाँ हजारों वर्ष नरक भोग कर हे देवि ! हस्ती की योनि में पैदा हुआ, फिर मनुष्य शरीर को प्राप्त हुआ ॥ ६-७ ॥

स्वकर्मणा परित्यागं यतोऽकार्षीद्गवां पुरा ।
ततः कर्मफलाद्देवि नैव पुत्रः प्रजायते ॥ ८ ॥

अपने कर्मों को छोड़कर गौवों की रक्षा नहीं की थी, इस कर्मफल से पुत्र नहीं हुआ ॥ ८ ॥

कृतं दानं पुरा देवि सर्वपर्वणि चाञ्जसा ।
तेन पुण्येन भो देवि धनधान्यगजादिकम् ॥ ९ ॥

हे देवि ! पहले इसने हरएक पर्व में दान किया था, उस पुण्यप्रभाव से धन-धान्य, हस्ती आदि से युक्त हुआ ॥ ९ ॥

गोसंग्रहः कृतः पूर्वं मृतस्तृणकणं विना ।
तेन पापेन भो देवि महाव्याधिः प्रजायते ॥ १० ॥

हे देवि ! पहले गौवों को चारा न देने से मर गई थीं । इस पाप से उसके शरीर में रोग हुआ ॥ १० ॥

तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ।
ब्राह्मणाय दशांशं च दानं दद्यात्सुरप्रिये ॥ ११ ॥

अब हे देवि ! उस पाप की शांति कहता हूँ । अपने धन का दशांश ब्राह्मण को दान करे ॥ ११ ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन जपं कुर्यात्प्रसन्नधीः ।
दशांशं हवनं देवि मार्जनं तर्पणं तथा ॥ १२ ॥

और सावधान होकर एक लाख गायत्री का जप करावे । हे देवि ! दशांश हवन तथा मार्जन-तर्पणादि करवावे ॥ १२ ॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणाय वरानने ।
एवंकृते न संदेहो वरः पुत्रः प्रजायते ॥ १३ ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥

हे वरानने ! दशवर्णवाली गौवों का दान ब्राह्मण को दे । ऐसा करने से अच्छे पुत्र की प्राप्ति होती है, इसमें संदेह नहीं और सब रोग नाश को प्राप्त होते हैं ॥ १३-१४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे आश्लेषा-नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

सैंतीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथाष्टत्रिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गङ्गाया उत्तरे कूले मालाकारोऽवसत्पुरा ।
डेलचन्द्रेति विख्यातो महाज्ञानी गुणाकरः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे प्रिये ! गंगा के उत्तर तट पर डेलचन्द्र नामक ज्ञानी अपने कर्म में दृढ़ ब्राह्मणों का सेवक एक माली रहता था ॥ १ ॥

स्वकर्मनिरतो नित्यं द्विजसेवासु तत्परः ।
तस्य पत्नी विशालाक्षि नाम्ना चन्द्रावती शुभा ॥ २ ॥

हे विशालाक्षि ! उसकी स्त्री चंद्रावती अपने कर्म में युक्त और ब्राह्मण सेवा में तत्पर रहती थी ॥ २ ॥

गुरुदास इति ख्यातो वैश्यवर्णेषु पूजितः ।
आसीत्तस्मै तदा तेन स्वर्णं दत्तं प्रियाय वै ॥ ३ ॥

वहाँ गुरुदास नाम का वैश्य सब वैश्यों में श्रेष्ठ रहता था, उसने माली के लिए बहुत सोना दिया ॥ ३ ॥

लक्षत्रयं स्थितं स्वर्णं तस्य वैश्यपतेः प्रिये ।
मालाकारेण तत्सर्वं भूमौ स्थाप्य तदा प्रिये ॥ ४ ॥

हे प्रिये ! तीन लक्ष रुपयों का सोना उस वैश्य के पास था, वह सब माली ने जमीन में गाड़ दिया ॥ ४ ॥

स्वयं गतः स वैश्येन सार्द्धं वेण्यां तदा प्रिये ।
माघे नियमतः स्नानं कृते ताभ्यां यथाविधि ॥ ५ ॥

और यह माली माघ महीने में उस वैश्य के साथ त्रिवेणी (प्रयाग) में स्नान करने को गया, उन दोनों ने नियम से स्नान किया ॥ ५ ॥

शूद्रस्तु स्वगृहं प्राप्तो वैश्यः काश्यां समागतः ।
तत्र काश्यां विशालाक्षि मरणं तस्य चाभवत् ॥ ६ ॥

हे विशालाक्षि ! फिर स्नान के बाद तो माली अपने घर आया और वह वैश्य काशी को गया, वहाँ उस वैश्य की मृत्यु हो गई ॥ ६ ॥

अविमुक्ते महातीर्थे देवदानवपूजिते ।
मम पार्श्वे समायातो धर्मक्षेत्रप्रभावतः ॥ ७ ॥

देवता और दानवों से पूजित मुक्ति को देनेवाले महातीर्थ धर्मक्षेत्र के प्रभाव से वह वैश्य मेरे लोक को आया ॥ ७ ॥

मालाकारस्तु तत्स्वर्णं भुक्त्वा पुत्रस्त्रिया युतः ।
बहुवर्षगते काले मरणं तस्य चाभवत् ॥ ८ ॥

माली पुत्र-स्त्री-सहित उस वैश्य के सुवर्ण को खर्च करता रहा । बहुत दिन के बाद उस शूद्र की भी मृत्यु होती भई ॥ ८ ॥

तदा गन्धर्वनगरे बहुवर्षसहस्रकम् ।
पत्न्या सह वरारोहे भुक्तं वै स्वर्गजं फलम् ॥ ९ ॥

फिर अपनी स्त्री के साथ गंधर्व लोक में स्वर्ग के फल को भोगता रहा ॥ ९ ॥

ततो बहुगते काले मानुषत्वमवाप्तवान् ।
धनाढ्यो गुणवान्भोक्ता देवब्राह्मणतत्परः ॥ १० ॥

बहुत दिन के बाद मनुष्य शरीर पाकर वह गुणवान्, धनवान् भोगयुक्त हो देव-ब्राह्मणों का पूजन करता रहा ॥१०॥

तस्य पत्नी विशालाक्षि पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ।
पुनर्विवाहिता देवि पतिसेवासु तत्परा ॥ ११ ॥

हे विशालाक्षि ! उसकी स्त्री पूर्वजन्म से वही हुई और पति की सेवा में लगी रही इसी के साथ फिर विवाह हुआ ॥ ११ ॥

पुष्पं च जायते देवि मासि मासि निरन्तरम् ।
पुत्रो न जायते देवि कन्यका खलु जायते ।
यतो वैश्यस्य वै स्वर्णं न दत्तं पूर्वजन्मनि ॥ १२ ॥

हे देवि ! वह हर महीने रजस्वला तो होती थी लेकिन पुत्र नहीं हुआ और पहले जन्म में वैश्य का सोना न देने से उसके लड़की ही होती रही ॥ १२ ॥

तत्कर्मणः फलाद्देवि पुत्रो नैव प्रजायते ।
तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथार्थतः ॥ १३ ॥

हे देवि ! कर्म फल से पुत्र नहीं हुआ अब उसकी शान्ति कहता हूँ ॥ १३ ॥

गृहद्रव्यषडंशेन पुण्यं कार्यं च कारयेत् ।
हेम्नो दशपलस्यापि वैश्यं कृत्वा प्रयत्नतः ॥ १४ ॥

अपने घर में जितना द्रव्य हो उसका छठा भाग पुण्य करे और दश पल सुवर्ण की वैश्य की मूर्ति बनवावे ॥ १४ ॥

पूजयित्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
षडङ्गजातवेदानां पाठं वै कारयेत्ततः ॥ १५ ॥

विधि से पूजन करके ब्राह्मण को संकल्प दे और षडंग वेद का पाठ करवावे ॥ १५ ॥

जीर्णोद्धारं ततो देवि वापिकां कूपमेव च ।
एवंकृते न संदेहः पुत्रो भवति नान्यथा ॥ १६ ॥
रोगस्तस्य निवर्तेत धनं च बहु जायते ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे आश्लेषा-नक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्ट-त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

हे देवि ! पुराने टूटे फूटे कुआँ, बावड़ी और बगीचा आदि का जीर्णोद्धार कराने से पुत्र की प्राप्ति होती है। यह मेरा वाक्य अन्यथा नहीं है ऐसा करने से रोग छूट जाता है और बहुत धन प्राप्त होता है ॥ १६-१७ ॥

अड़तीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगरी श्रेष्ठा सर्वदेवसुपूजिता ।
यस्याः प्रवेशमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—अयोध्या नगरी को सब देवताओं ने पूजा है। इसमें वास करने मात्र से मनुष्य सब पापों से छूट जाता है ॥ १ ॥

तस्यास्तु पश्चिमे देवि योजनानां दशोपरि ।
लक्ष्मणाख्यं पुरं यत्र वसन्ति बहवो जनाः ॥ २ ॥

हे देवि ! उसके पश्चिम भाग में दश योजन पर लक्ष्मण नामक पुर है। वहाँ बहुत मनुष्य रहते हैं ॥ २ ॥

तन्मध्ये शूद्र एको हि कैवर्तो धनधान्यवान् ।
डालेति नाम विख्यातस्तस्य पत्नी च केशवी ॥ ३ ॥

वहाँ एक शूद्र जाति का कहार डाल नाम से प्रसिद्ध धनी रहता था और उसकी स्त्री का नाम केशवी था ॥ ३ ॥

तेन व्यापारतो देवि धनं च बहु संस्थितम् ।
मांसं प्रभुज्यते नित्यं मांसं हि बहुधा प्रियम् ॥ ४ ॥

उसने व्यापार से बहुत सा धन इकट्ठा किया, वह नित्य मांस खाता था क्योंकि उसको बहुत अच्छा लगता था ॥ ४ ॥

निर्दयः सर्वजन्तूनां कच्छपानां विशेषतः ।
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ५ ॥

कच्छपादि सब जंतुओं को पकड़ लेता था। काल पाकर उसकी मृत्यु हो गई ॥ ५ ॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तश्च यमाज्ञया ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ६ ॥

फिर उसको यमराज की आज्ञा से दूतों ने नरक में डाला, वह साठ हजार वर्ष नरक के दुःख को भोगता रहा ॥ ६ ॥

नरकान्निःसृतो देवि दर्दुरत्वं तथा गतः ।
ऋक्षत्वं च ततो देवि मानुषत्वं ततोलभत् ॥ ७ ॥

फिर हे देवि ! नरक से निकल कर मेढक हुआ फिर रीछ की योनि में हो और बाद को मनुष्य हुआ ॥ ७ ॥

पाण्डुरोगेण संयुक्तो वंशो नैव तु जीवति ।
कन्याश्च बहवो जाता विधवा व्यभिचारिकाः ॥ ८ ॥

पांडुरोगी होने से पुत्र की संतान नहीं जीती हैं और बहुत कन्यायें उसके हुईं वे भी पाप से विधवा और व्यभिचारिणी हुईं ॥ ८ ॥

अपत्यानां निरोधश्च पुत्रत्वसमये सति ।
अस्य पुण्यं प्रवक्ष्यामि यथा पापात्प्रमुच्यते ॥ ९ ॥

और जवानी में ही संतान का होना बंद हो गया। अब पापमुक्त होने का उपाय सुनो ॥ ९ ॥

षडंशं ब्राह्मणे दानं श्रीविष्णोः पूजनं तथा ।
विष्णोरराटमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ १० ॥

धन का छठा भाग ब्राह्मण को दे, विष्णु का पूजन और "विष्णोरराट०" मंत्र का लक्ष जप करावे ॥ १० ॥

एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ।
रोगाश्च विलयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ।। ११ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे आश्लेषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथन्नामैकोनचत्वारिंशोध्यायः ।। ३९ ।।

ऐसा करने से निश्चय पुत्र हो और रोग नाश हो इसमें कुछ विचार नहीं करना ।। ११ ।।

उन्तालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ चत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुरा देवि शुभं ख्यातं पुरं मङ्गलनामकम् ।
तत्र वैश्यो वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ।। १ ।।

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! पहले एक मंगल नामक पुर में एक वैश्य बड़ा धनी रहता था ।। १ ।।

तस्य नाम समाख्यातं मङ्गलं देवि वै शुभम् ।
तस्य पत्नी विशालाक्षी सुन्दरी सुखदायिनी ।। २ ।।

हे देवि ! शुभ लक्षणोंवाला मंगल नाम था उसकी स्त्री बड़े नेत्रोंवाली बहुत सुंदर स्वरूपवाली तथा सुख देनेवाली थी ।। २ ।।

विष्णुभक्तिरतो नित्यं गुरुब्राह्मणसेवकः ।
आचारे नियतश्चैव क्रयविक्रयतत्परः ।। ३ ।।

वह वैश्य नित्य विष्णुभक्ति और गुरु ब्राह्मण की सेवा बड़े आचार विचार के साथ किया करता था ।। ३ ।।

एकदा तु गृहे देवि मित्रं तस्य समागतम् ।
आदरं बहुधा कृत्वा भोजयामास शास्त्रतः ।। ४ ।।

हे देवि ! एक दिन उसके घर में उसका मित्र आया, तब उसने बड़े आदर से उसको भोजन कराया ॥ ४ ॥

स्वर्णदानं ततो लक्षमुद्रादानं तु तत्प्रिये ।
दत्तं वैश्येन भो देवि ब्राह्मणाय स्वशान्तये ॥ ५ ॥

फिर हे प्रिये ! सुवर्ण और लाख रुपये का दान उसने अपनी शांति के लिए ब्राह्मण को दिया ॥ ५ ॥

ब्राह्मणेनापि तत्सर्वं स्थापितं तस्य वै गृहे ।
ततोऽगात्तीर्थयात्रार्थं वाराणस्यां वरानने ॥ ६ ॥

हे वरानने ! और उस ब्राह्मण ने सब धन उसी के घर में रख दिया, बाद ब्राह्मण तीर्थयात्रा के लिए काशी चला गया ॥ ६ ॥

तस्य मृत्युरभूद्देवि काश्यां चैव स्वकर्मतः ।
बहुकाले गते देवि वैश्यो दारिद्र्यपीडितः ॥ ७ ॥

हे देवि ! अपने कर्मानुसार काशी में उसकी मृत्यु हो गई । जब बहुत समय बीतने पर वैश्य दरिद्रता से दुःखी हुआ ॥ ७ ॥

पुत्रदारैश्च संयुक्तस्तस्य द्रव्यं तदा प्रिये ।
भुक्तं सर्वं तदा देवि स्वदत्तं चैव पुण्यदम् ॥ ८ ॥

तो स्त्री पुत्र सहित ब्राह्मण के सब धन को अपने कार्य में खर्च करता रहा ॥ ८ ॥

वृद्धत्वे च पुनर्जाते तस्य मृत्युरभूत्किल ।
अयोध्यामरणात्तस्य स्वर्गवासस्ततोऽभवत् ॥ ९ ॥

वृद्ध होने से उसकी मौत हो गई और अयोध्या में मरण होने से उसको स्वर्ग हुआ ॥ ९ ॥

बहुवर्षसहस्राणि विष्णुलोके वरानने ।
भुक्त्वा बहुविधं भोगं ततः पुण्यक्षयेऽनघे ॥ १० ॥

हे वरानने ! कई हजार वर्षों तक अनेक प्रकार के भोगों को भोग कर पुण्य क्षीण होने से ॥ १० ॥

मृत्युलोके भवेज्जन्म धनधान्यसमन्वितः ।
विष्णुपूजारतो नित्यं ब्राह्मणे भक्तिरुत्तमा ॥ ११ ॥

हे अनघे ! मृत्युलोक में धन धान्य से युक्त विष्णुपूजा तथा ब्राह्मणों की भक्ति में लगा है ॥ ११ ॥

मित्रद्रव्यं स्वयं दत्तं युक्तं तेन ततः प्रिये ।
पुत्रोत्पत्तिः प्रथमतस्तस्य वै मरणं भवेत् ॥ १२ ॥

अब मृत्युलोक में उसका जन्म हुआ और मित्र के दान दिये हुये द्रव्य को अपने आप भोगने से पुत्र का जन्म हुआ, और उसकी मृत्यु भी हो गई ॥ १२ ॥

पुनः पुत्रो न जायेत काकवन्ध्या ततः प्रिया ।
शरीरे कफवातादिरोगाश्च विविधास्तथा ॥ १३ ॥

फिर पुत्र न होने से उसकी स्त्री काकवंध्या हुई और उसका शरीर कफ, वातादि कई रोगों से दुःखी हुआ ॥ १३ ॥

वृद्धत्वं च तथा तस्य जायते नात्र संशयः ।
तत्पापशमनार्थं च पुण्यं शृणु वरानने ॥ १४ ॥

वृद्ध हो गया अब इस पाप के दूर होने के लिए पुण्य कहता हूँ सुनो ॥ १४ ॥

षडंशं च ततो दानं ब्राह्मणाय वरानने ।
गायत्रीमन्त्रजाप्यं च लक्षमेकं प्रयत्नतः ॥ १५ ॥

हे वरानने ! घर के धन का छठा भाग ब्राह्मण को दान दे और एक लाख गायत्री का जप करवावे ॥ १५ ॥

हवनं विधिवत्कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा ।
गामेकां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सहाम्बराम् ॥ १६ ॥

और विधि से हवन, दशांश तर्पण, दशांश मार्जन करावे और सोने के शृंग वस्त्र सहित एक कपिला गौ का दान देवे ॥ १६ ॥

दद्यात्प्रयत्नतो देवि ब्राह्मणाय महात्मने ।
तिलधेनुं ततो दद्यात्पात्रं वस्त्रं तथा प्रिये ॥ १७ ॥

हे देवि ! विधि से महात्मा ब्राह्मण को तिल धेनु का दान पात्र और वस्त्र विधि से देवे ॥ १७ ॥

हरिवंशश्रुतिर्ब्रह्मदम्पत्योः पूजनं चरेत् ।
एवं कृते ततो देवि पुनः पुत्रः प्रजायते ॥ १८ ॥

हे देवि ! ब्राह्मण और ब्राह्मणी का पूजन करे और हरिवंशपुराण सुने । ऐसा करने से पुत्र प्राप्ति हो ॥ १८ ॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मघानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

सब रोग दूर हो इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १९ ॥

चालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथैकचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगराद्देवि योजनोपरि वल्लभे ।
दक्षिणे नन्दिनि ग्रामे वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि ! अयोध्या से एक योजन दक्षिण दिशा में नन्दिग्राम में बहुत से नर वास करते थे ॥ १ ॥

द्विजस्तत्र वसत्येको मद्यवेश्यारतः सदा ।
परस्त्रीलम्पटो नित्यं मद्यमांसरतस्तथा ।। २ ।।

वहाँ एक ब्राह्मण मदिरापान, वेश्यासंग, मांसादि में प्रीति करनेवाला रहता था ।। २ ।।

नामतो मित्रशर्मेति तस्य पत्नी तु कर्कशा ।
प्रत्यहं द्यूतकरणे व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।। ३ ।।

उसका नाम मित्रशर्मा था, और उसकी स्त्री कर्कशा थी। वह प्रति दिन जुआ खेला करता था ।। ३ ।।

एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ।
पश्चान्मृता तु तत्पत्नी कर्कशा दुःखदायिनी ।। ४ ।।

ऐसे बहुत दिनों के बाद उसकी मृत्यु हुई, फिर उसकी स्त्री कर्कशा भी मर गई ।। ४ ।।

यमस्य किङ्करैरेव निक्षिप्तो नरकार्णवे ।
सप्ततिर्वै सहस्राणि वर्षाणि सुरवल्लभे ।। ५ ।।
भुक्तं दुःखं नरकजं दम्पतीभ्यां तदा शिवे ।
ततः पापक्षये देवि शुनो योनिरभूत्पुरा ।। ६ ।।

उसको यम की आज्ञा से दूतों ने नरक-समुद्र में छोड़ दिया, वहाँ सत्तर हजार वर्षों तक नरक में वास करके हे शिवे ! दोनों स्त्री पुरुष नरक का दुःख भोगके पापक्षय होने पर कुत्ते की योनि में पैदा हुए ।। ५-६ ।।

शुनो योनिं ततो भुक्त्वा शूकरो निर्जने वने ।
मानुषस्य पुनर्योनिं मध्यदेशे ततोऽलभत् ।। ७ ।।

फिर कुत्ते की योनि को भोगकर जंगल में सुअर की योनि को गया फिर मध्यदेश में मनुष्ययोनि को प्राप्त हुआ है ।। ७ ।।

नन्दिग्रामफलाद्देवि धनधान्यसमन्वितः ।
परस्त्रीलम्पटाद्देवि पादपीडा प्रजायते ॥ ८ ॥

फिर नंदिग्राम में मरा—परस्त्रीगमन करने से उसके पैरों में पीड़ा पैदा हो गई ॥ ८ ॥

मद्यपानफलाद्देवि गर्भपातः पनः पुनः ।
बह्वयः कन्याः प्रजाताश्च बहुस्त्रीगमनात्प्रिये ॥ ९ ॥

हे देवि ! मद्यपान करने से कई बार गर्भ नष्ट हो गये और कई स्त्रियों के साथ गमन करने से कई लड़कियाँ पैदा हुईं ॥ ९ ॥

पुत्रस्य मरणं देवि जातं वेश्याऽतिसङ्गमात् ।
पूर्वजन्मकृतं पापं पुण्यं च गिरिजे वरे ॥ १० ॥
मानुषैर्भुज्यते सर्वं मृत्युलोके सुरेश्वरि ।
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि यथार्थं शृणु भामिनि ॥ ११ ॥

हे देवि ! वेश्यागमन करने से पुत्र मरा, पूर्वजन्म का पाप और पुण्य सब मनुष्य मृत्युलोक में भोगते हैं, और हे सुरेश्वरि ! इस पाप की शांति पूरी तौर से कहता हूँ सुनो ॥ १०-११ ॥

गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १२ ॥

अपने घर के धन का आठवाँ भाग ब्राह्मण को दान करके दे ॥ १२ ॥

वापीकूपतडागेषु जीर्णोद्धारः प्रयत्नतः ।
माघकार्त्तिकवैशाखे श्रावणे च विशेषतः ॥ १३ ॥

और बावड़ी, कूप, तालाब इन फूटे टूटों की मरम्मत माघ, कार्त्तिक, वैशाख, और श्रावण में करावे ॥ १३ ॥

प्रत्यहं भोजयेद्विप्राञ्छ्रोत्रियान्वेद्पारगान् ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं जपमाचरेत् ॥ १४ ॥

वेदपारगामी पवित्र ब्राह्मणों को भोजन करवावे और 'गायत्री' तथा 'जातवेदसे०' इन मन्त्रों का दो-दो लाख जप करवावे ॥ १४ ॥

जपतो हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ।
महाभारतमाख्यानं श्रुत्वा पापं व्यपोहति ॥ १५ ॥

और दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करवावे, और नियम से महाभारत को सुनने से सब पाप दूर हो जाते हैं ॥ १५ ॥

दशवर्णाः प्रदातव्याः पूर्वपापविशुद्धये ।
एवं कृते वरारोहे सर्वरोगः प्रणश्यति ॥ १६ ॥

हे वरारोहे ! फिर दश वर्णोंवाली गौवों का दान पहले किये पाप की शुद्धि के लिए दे । ऐसा करने से सब रोग दूर होते हैं ॥ १६ ॥

पुत्रो भवति भो देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ।
काकवन्ध्या च या नारी पुनः पुत्रमवाप्नुयात् ॥ १७ ॥

हे देवि ! पुत्र की उत्पत्ति होती है, और वंध्यापन दूर हो जाता है, काकवंध्या नारी के पुत्र होता है ॥ १७ ॥

कन्यका नैव जायन्ते धनवृद्धिर्भवेत्किल ।
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न चान्यथा ॥ १८ ॥

कन्या नहीं होती, धन वृद्धि हो और पूर्वजन्म का सब पाप नष्ट हो ॥ १८ ॥

इहजन्मनि शं भुंक्ते पुनः पापं न बाधते ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मघानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामै-कचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

इस जन्म में सुख को भोगता है, फिर उसको पाप बाधा नहीं होती ॥ १९ ॥

इकतालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

---:o:---

अथ द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यायां विशालाक्षि कुलालो वसति प्रिये ।
मथुराग्राममध्ये वै स्वकर्मनिरतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे विशालाक्षि ! अयोध्या के मथुरा ग्राम में एक कुम्हार अपना कर्म करते हुए निवास करता था ॥ १ ॥

पात्रं वै मृन्मयं देवि प्रकरोति तदा प्रिये ।
तस्य मित्रं समायातो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ २ ॥

हे प्रिये ! वह मिट्टी के पात्र बनाता था और तिसका मित्र एक ब्राह्मण वेदपाठ करनेवाला आता भया ॥ २ ॥

तस्य स्त्री च महादुष्टा ब्राह्मणी व्यभिचारिणी ।
कुलालेनाभवत्प्रीतिर्मैथुनं प्रकरोति सा ॥ ३ ॥

वहाँ उस ब्राह्मण की स्त्री महादुष्टा व्यभिचारिणी कुम्हार के साथ प्रीति से मैथुन करती थी ॥ ३ ॥

ब्राह्मण्यां गमनं नित्ये बहुवर्षे निरन्तरम् ।
एवं बहुगते काले समतीते सुरेश्वरि ॥ ४ ॥

हे सुरेश्वरि ! ब्राह्मणी से गमन करते हुए बहुत से वर्ष उस कुम्हार को व्यतीत हो गए ॥ ४ ॥

कुलालस्य ततो मृत्युर्वृद्धे जाते सुरेश्वरि ।
पश्चात्तस्य मृता पत्नी या पुरा व्यभिचारिणी ॥ ५ ॥

फिर हे सुरेश्वरि ! बुढ़ापा होने से उस कुम्हार की मृत्यु हुई पीछे वह ब्राह्मणी उसकी स्त्री मर गई जो पहले व्यभिचारिणी थी ॥ ५ ॥

यमदूतैर्महाघोरैः कर्दमे नरके प्रिये ।
यमाज्ञया च निक्षिप्तो वर्षं लक्षत्रयं शुभे ॥ ६ ॥

फिर हे शुभे ! महाघोर यमराज के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर नरक के कीच में उस कुम्हार को पटका । वहाँ उसको तीन लाख वर्ष व्यतीत हो चुके ॥ ६ ॥

पतिव्रता समायाता लक्षत्रयगते सति ।
नरकाब्धेः समुद्धृत्य स्वपतिं च ततः प्रिये ॥ ७ ॥
सत्यलोके समायाता स्वपत्या सह भामिनी ।
भुक्त्वा लक्षत्रयं देवि भोगांश्च विविधानपि ॥ ८ ॥

फिर तीन लाख वर्ष व्यतीत होने पर उसकी वह पतिव्रता स्त्री भी वहाँ नरक में आई, फिर हे प्रिये ! हे भामिनी ! नरकाब्धि से दोनों का उद्धार हो सत्यलोक में गए । वहाँ तीन लाख वर्ष पर्यंत अनेक प्रकार से भोगों को भोगा ॥ ७-८ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते धवेन सह शोभने ।
मर्त्यलोके ततो जातो धनधान्ययुतस्तदा ॥ ९ ॥

फिर पुण्यक्षीण होने पर हे सुशोभने ! धनधान्य से युक्त मर्त्यलोक में दोनों का जन्म हुआ ॥ ९ ॥

पुत्रकन्याविहीनश्च मृतवत्सत्वमाप्तवान् ।
ब्राह्मण्यां गमनाद्देवि बहुरोगश्च जायते ॥ १० ॥

वहाँ पुत्र और कन्या से रहित हुआ और ब्राह्मणी के साथ गमन करने से शरीर में कई रोग हुए ॥ १० ॥

अथ शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे शुभे ।
सर्वस्वदानं कर्तव्यं रुद्रमंत्रजपं[1] तथा ॥ ११ ॥

हे गिरिजे ! अब शांति कहता हूँ सुनो—घर के संपूर्ण धन का दान तथा रुद्रमंत्र का जप करे ॥ ११ ॥

पूजा कार्या पार्थिवानां वाटिकारोपणं तथा ।
हरिवंशश्रुतिः कार्या भूमिदानं तथैव च ॥ १२ ॥

पार्थिवपूजन करे, फुलवाड़ी लगावे, हरिवंशपुराण सुने और भूमि दान करे ॥ १२ ॥

गायत्रीमूलमंत्रेण लक्षं जाप्यं तथा प्रिये ।
होमं च कारयेद्देवि तिलधान्यादितंडलैः ॥ १३ ॥

गायत्री मूलमंत्र का एक लाख जप करावे और हे देवि ! तिल, जौ, चावल, घृत इनका कुंड में हवन करे ॥ १३ ॥

कुण्डे कुर्याद् द्विजद्वारा चतुष्कोणे सुरेश्वरि ।
दशांशं हवनं देवि विधिवत्पापशुद्धये ॥ १४ ॥

हे सुरेश्वरि ! हे देवि ! चौकुंठे कुंड में दशांश हवन, दशांश तर्पण, दशांश मार्जन विधिवत् करावे ॥ १४ ॥

दशवर्णास्ततो दद्यात्स्वर्णनिष्कं चतुष्टयम् ।
ब्राह्मणान् भोजयेच्छुद्धान्षष्टिपायसलड्डुकैः ॥ १५ ॥

और दशवर्णवाली गौवों का दान, सोने की चार मोहरों का दान देवे, साठ ब्राह्मणों को खीर लड्डुओं का भोजन करावे ॥ १५ ॥

---

२ ३ १ २ ३ १ २ ३ १ १ २ ३ २ ३ १ २
१—ॐआ वो राजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्ययजं रोदस्योः ।
३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २
अग्निं पुरा तनयित्नो रचित्ताद्धिरण्यरूपमवसे कृणुध्वम् ॥ इति सामः ॥
यह रुद्र मंत्र है ॥

भूमिदानं ततः कुर्यात्तिलं दद्यात्प्रयत्नतः ।
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ॥ १६ ॥

विधि से भूमि और तिल का दान दे। ऐसा करने से वंशवृद्धि होती है, इसमें संदेह नहीं ॥ १६ ॥

सर्वरोगाः क्षयं यान्ति न च कन्यां प्रसूयते ।
काकवंध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मघानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४२॥

और सब रोग दूर होते हैं, कन्या संतान नहीं होती, काक-वंध्या और मृतवत्सा स्त्री भी पुत्र को पाती है ॥ १७ ॥

बयालींसवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ त्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

काञ्चीपुर्यां महादेवि वैश्य एको वसत्पुरा ।
मेदसिन्द इति ख्यातस्तस्य स्त्री पालिका शभा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! पहले कांचीपुरी में मेदसिन्द नामक एक वैश्य और पालिका नामवाली उसकी स्त्री रहती थी ॥ १ ॥

अश्वादिविक्रयं देवि छागपक्ष्यादिकं तथा ।
प्रत्यहं क्रियते देवि बहुद्रव्यस्य सञ्चयम् ॥ २ ॥

हे देवि ! वे घोड़ा, बकरी, पक्षी आदि को बेचकर धन इकट्ठा किया करते थे ॥ २ ॥

न देवान्मन्यते देवि पितन्नैव च मन्यते ।
बहुष्वहस्सु गच्छत्सु प्रमृतौ पितरौ ततः ॥ ३ ॥

हे देवि ! वे देवता तथा पितरों को नहीं मानते थे और बहुत दिन के बाद उसके माता-पिता मर गये ॥ ३ ॥

स तयोर्नाकरोच्छ्राद्धं यत्कर्तव्यं सुतैः प्रिये ।
ततो बहुदिने याते वृद्धे सति वरानने ॥ ४ ॥

हे प्रिये ! जो पुत्रों को कर्तव्य पिता का श्राद्ध है सो भी उसने नहीं किया, बहुत से दिन व्यतीत हो चुके तब बूढ़े हो गए ॥ ४ ॥

मरणं तस्य वै जातं वैश्यस्य कृपणस्य च ।
यमाज्ञया तु दूतेन कुम्भीपाके सुदारुणे ॥ ५ ॥

फिर उस कंजूस वैश्य की मृत्यु हुई, तब यम की आज्ञा से यमदूतों ने उसको कठोर नरक में छोड़ दिया ॥ ५ ॥

निक्षिप्तं श्रृङ्खलैर्बद्ध्वा युगपञ्चदशं समाः ।
भुक्त्वा नरकजं दुःखं महाकृमिसमाकुलम् ॥ ६ ॥
नरकान्निःसृतो देवि महिषत्वं ततोऽलभत् ।
पुनर्वै व्याघ्रयोनिश्च मूषयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

और वह शाँकलों में बाँधा हुआ कृमियों से पंद्रहयुग तक नरक के दुःख को भोगकर हे देवि ! भैंस की योनि में गया फिर बाघ तथा मूषक की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ६-७ ॥

काकयोनिं ततो भुक्त्वा गजयोनिस्ततोऽभवत् ।
शुभे देशे विशालाक्षि धनधान्यसमन्वितः ॥ ८ ॥

हे देवि ! फिर काकयोनि को भोगकर हस्तियोनि में गया, फिर शुभदेश में धनधान्य से युक्त मनुष्य हुआ ॥ ८ ॥

व्याधिग्रस्तोऽभवद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः ।
काकवन्ध्या भवेन्नारी मृतवत्सा ह्यपुत्रिणी ॥ ९ ॥

हे देवि ! व्याधि से दुःखी पुत्र और कन्या से रहित इसकी स्त्री काकवंध्या और मृत पुत्रोंवाली हुई ॥ ९ ॥

पूर्वजन्मकृतं पापं यतः शान्तिमवाप्नुयात् ।
तत्सर्वं शृणु मे देवि विस्तरेण समन्वितम् ॥ १० ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म के पाप की शांति विस्तारपूर्वक कहता हूँ सुनो ॥ १० ॥

प्रयागे नियतः स्नायी प्रतिमाघं भवेद्यदा ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां दशायुतजपं तथा ॥ ११ ॥

नियम से माघ में प्रयाग स्नान और 'गायत्री' मंत्र, तथा 'जातवेदसे०' इस मंत्र का लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥

भूमिदानं च वै कृत्वा ततः पुत्रः प्रजायते ।
वन्ध्यात्वं शमनं याति काकवन्ध्यात्वमप्यथ ॥ १२ ॥

और भूमि का दान कराने से पुत्र की प्राप्ति होती है तथा वंध्या और काकवंध्यापन भी दूर होते हैं ॥ १२ ॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मघानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम त्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥

मृतवत्सा चिरजीवी पुत्र प्राप्त करे और सर्वरोग नाश हो इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये ॥ १३ ॥

तेंतालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

सौराष्ट्रविषये देवि शोभनं नाम वै पुरम् ।
तत्र क्षत्री वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! सौराष्ट्र देश में शोभन नामक नगर था। वहाँ एक क्षत्रिय धनधान्य से युक्त रहता था ॥१॥

मोहनेति च विख्यातस्तस्य पत्नी सती शुभा।
वैश्यवृत्तिरतो नित्यं व्यापारं कुरुते सदा ॥ २ ॥

उसका नाम मोहन था, उसकी पतिव्रता स्त्री का नाम शुभा था, वे दोनों वैश्य वृत्ति का व्यापार करते थे ॥ २ ॥

व्यापारार्थं ततो देवि वृषभा बहुपालिताः।
द्वौ वृषौ योजितौ देवि कूपे वै पतितौ प्रिये ॥ ३ ॥

हे देवि ! व्यापार के लिए बहुत बैल पाले। वे बैल कूप से जल निकालते थे। और कुएँ में गिर गये ॥ ३ ॥

मृतौ तौ रात्रिकालेपि जगाम स तदा न च।
पापं च स न जानाति गर्वद्वारा वरानने ॥ ४ ॥

फिर हे देवि ! वे बैल रात को कुएँ में गिरके मर गए। तब वह क्षत्रिय वहाँ गया भी नहीं, और गर्व में उनके मरने का पाप नहीं माना ॥ ४ ॥

यत्किञ्चित्क्रियते कर्म शुभं तु कलुषं बहु।
गुणाः स्वल्पा बह्वगुणाः मोहनं नाम क्षत्रिणः ॥ ५ ॥

और उसमें शुभ कर्म तो थोड़ा है और पाप बहुत है। गुण थोड़े और अवगुण बहुत थे ॥ ५ ॥

ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत्।
पश्चान्मृता तस्य पत्नी महालुब्धा वरानने ॥ ६ ॥

बहुत काल बीतने पर उसकी मृत्यु हुई। हे वरानने ! बाद महालोभी उसकी स्त्री भी मर गई ॥ ६ ॥

निक्षिप्तो नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ७ ॥

फिर उस क्षत्रिय को यमदूतों ने आज्ञा पाकर साठहजार वर्ष संख्यावाले घोर नरक में पटक दिया ॥ ७ ॥

पुनः सरटयोनिश्च वृषयोनिस्ततोऽभवत् ।
मानुषत्वं ततो देवि मध्यदेशे वरानने ॥ ८ ॥

वहाँ गिरगिट की योनि में हुआ है, फिर बैल की योनि में। हे देवि ! फिर मध्यदेश में मनुष्ययोनि में पहुँचा ॥ ८ ॥

वृषयोश्च पुरा मृत्युर्न कृतं पापमोचनम् ।
तस्माद् व्याधिः समुत्पन्ना पूर्वकर्मप्रयत्नतः ॥ ९ ॥

पूर्व कर्म से बैलों की मृत्यु होने पर भी पापमोचन नहीं किया, इससे शरीर में कई तरह की व्याधि उत्पन्न हुईं ॥ ९ ॥

मुखरा याऽभवत्पत्नी पुरा च प्रबला प्रिये ।
पुनर्विवाहिता देवि तद्रूपा मुखरा तथा ॥ १० ॥

हे देवि ! उसकी स्त्री लड़ाई में तेज थी और प्रबला थी, वही पुनर्विवाहिता मिली ॥ १० ॥

तत्पापशमनार्थाय षडंशं दानमाचरेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं तथा ॥ ११ ॥

उस पापशांति के लिए अपने घर के द्रव्य का छठा भाग दान करे और पाँच लाख गायत्री का जप करावे ॥ ११ ॥

ततः पापं क्षयं याति शीघ्रं पुत्रो भवेत्प्रिये ।
अपुत्रा मृतवत्सा च काकवन्ध्या च या शिवे ॥ १२ ॥

पुत्रिण्यश्चैव ताः सर्वा नात्र कार्या विचारणा ।
रोगाः सर्वे विनश्यन्ति शीघ्रमेव न संशयः ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४४॥

तब हे प्रिये ! पाप दूर होकर शीघ्र पुत्रप्राप्ति होती है और मृतवत्सा और काकवंध्या भी पुत्रोंवाली होती हैं, इसमें कुछ विचार नहीं करना और सब रोग जल्दी अच्छे हो जाते हैं ॥ १२-१३ ॥

चवालींसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कर्णाटविषये देवि काष्ठकारोऽवसत् पुरा ।
छिनत्ति सर्वकाष्ठानि व्ययं कृत्वा दिने दिने ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! कर्णाट देश में एक लकड़हारा बसता था, वह लकड़ी काटकर बेचा करता था ॥ १ ॥

एका वै गोत्रजा कन्या तस्यां च मैथुनं कृतम् ।
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥ २ ॥

उसने अपने गोत्र की कन्या से मैथुन किया, बहुत दिन के बाद वह मर गया ॥ २ ॥

पश्चात्तस्य मृता नारी कुलटा व्यभिचारिणी ।
यमदूतैर्महाघोरैर्निक्षिप्तो नरकार्णवे ॥ ३ ॥

पीछे उसकी व्यभिचारिणी स्त्री भी मर गई, फिर उनको यम की आज्ञा से घोर दूतों ने नरकरूपी समुद्र में डाल दिया ॥ ३ ॥

यमाज्ञया महादेवि भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि नरके पच्यते च सः ॥ ४ ॥

हे देवि ! यमराज की आज्ञा से नरक के दुःखों को भोगकर साठ हजार वर्ष तक नरकों में रहकर ॥ ४ ॥

कुक्कुटत्वं ततो जातं चक्रवाकस्ततोऽभवत् ।
मानुषत्वं ततो जातं देशे पूज्यतमे तथा ।। ५ ।।

मुर्गे की योनि फिर चकवे की योनि और अच्छे देश में मनुष्ययोनि को प्राप्त हुआ ।। ५ ।।

शूद्रसेवारतो नित्यं शूद्रस्नेहेन यन्त्रितः ।
पितुर्मातुर्भवेद्वैरं महिष्याः क्रयविक्रये ।। ६ ।।

वहाँ शूद्रसेवा और उसमें सदा प्रीति किया करता था, और माता-पिता से वैर और भैंसे बेचने का व्यापार किया करता था ।। ६ ।।

पूर्वजन्मनि भो देवि कृतं वृक्षस्य छेदनम् ।
तस्माद्रोगः समुत्पन्नः कटिशूलं निरन्तरम् ।। ७ ।।

हे देवि ! पूर्वजन्म में उसने वृक्ष का छेदन किया, इस पाप से रोगी शरीर पैदा हुआ, और निरन्तर कटि में शूलरोग बना रहता है ।। ७ ।।

गोत्रकन्याभिगमनं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।
तेन पापेन भो देवि पुत्रस्य मरणं भवेत् ।। ८ ।।

हे देवि ! पहले जन्म में अपने गोत्र की कन्या से गमन करने से पुत्र होकर मर गया ।। ८ ।।

गर्भस्त्रावी ततो भार्या काकवन्ध्यात्वमाप्नुयात् ।
बह्वयः कन्यास्ततो जाताः कष्टं प्राप्नोत्यहर्निशम् ।। ९ ।।

फिर उसकी स्त्री का गर्भ खंडित हो गया, वह काकवन्ध्या हो गई, फिर बहुत सी कन्याएं हुईं, और कष्ट पाया ।। ९ ।।

अतः शांति प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।। १० ।।

अब पाप की शुद्धि करने के लिए शांति कहता हूँ, घर के धन का आठवाँ भाग ब्राह्मण को दान कर दे ॥ १० ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन गोदानेन विशेषतः ।
वाटिकारोपणेनापि गृहदानेन वै शिवे ॥ ११ ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ।
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न संशयः ॥ १२ ॥

हे शिवे ! गायत्री के लक्ष जप से तथा गोदान और धर्मशाला तथा घर का दान करने से सब रोग नाश होते हैं इसमें कुछ विचार नहीं करना । पूर्वजन्म के पाप नष्ट होते हैं, इसमें संशय नहीं है ॥ ११-१२ ॥

जायन्ते बहवः पुत्राः शूराः कीर्तिविवर्द्धनाः ।
कन्यका नैव जायन्ते काकवन्ध्या तु शाम्यति ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४५॥

और बड़े वीर कीर्ति के बढ़ानेवाले पुत्रों का जन्म होता है । कन्या का जन्म न हो, काकवन्ध्या की शांति हो ॥ १३ ॥

पैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

सिंहले वै महाद्वीपे तत्र सिंहं पुरं शिवे ।
कायस्थो वैष्णवोप्येकष्टीकारामेति नामतः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे शिवे ! सिंहलद्वीप में सिंह नामक पुर है उसमें एक कायस्थ विष्णुभक्त टीकाराम नामवाला रहता था ॥ १ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षी सूर्या नाम्नी शुभा सती ।
आतिथ्यकरणे शक्ता देवतात्यन्तपूजिका ॥ २ ॥

उसकी स्त्री सुंदर नेत्रवाली सूर्या थी। अभ्यागत के सत्कार में और देवता का पूजन करनेवाली थी ॥ २ ॥

कार्त्तिके माघवैशाखे दीपदानं करोति सा ।
कदाचिद्दैवयोगेन तीर्थयात्रार्थमागता ॥ ३ ॥

और वह कार्त्तिक, माघ, वैशाख इन महीनों में दीपदान किया करती थी, दैवयोग से वह तीर्थयात्रा के लिए तीर्थ गई ॥ ३ ॥

स्वर्णकारो महादेवि बहुस्वर्णेन संयुतः ।
आगतः सिंहनगरे तत्र वासमकारयत् ॥ ४ ॥

वहाँ हे देवि ! एक सुनार बहुत सा सोना लेकर 'सिंह' नामक पुर में आकर रहने लगा ॥ ४ ॥

प्रीतिः परस्परं चैव कायस्थस्वर्णकारयोः ।
स्वर्णकारस्य कन्यैका सुन्दरी कमलानना ॥ ५ ॥
कायस्थस्याभवद्भार्या दैवयोगात्तदा शिवे ।
स्वर्णकारस्य यत्सर्वं स्थितं तेन हृतं धनम् ॥ ६ ॥

वहाँ सुनार और कायस्थ की महाप्रीति हो गई और सुनार के एक सुंदर कमल के समान मुखवाली लड़की थी। हे शिवे ! वह दैवयोग से कायस्थ की स्त्री हुई। और सुनार के घर में जितना धन था सब कायस्थ के घर चला आया ॥ ५-६ ॥

द्रव्यक्षयमथो ज्ञात्वा स्वर्णकारो मृतः पुरा ।
पुत्रदारादिकं त्यक्त्वा कायस्थश्च तदा शिवे ॥ ७ ॥
तया सार्द्धं रमत्येको पापात्मा कमलानने ।
एवं बहुगते काले कायस्थोपि मृतः प्रिये ॥ ८ ॥

और वह सुनार धन का नाश जानकर दु:खी होकर मर गया। तब कायस्थ पुत्र और स्त्री को छोड़कर उस सुनार की कन्या से रमण करता था। बहुत दिन व्यतीत हो जाने पर हे कमलानने! कायस्थ भी मर गया ॥ ७-८ ॥

कुम्भीपाकेऽभवद्वासो वर्षलक्षत्रयं तथा।
पुनः कर्मवशाद्देवि मृगयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ९ ॥

हे देवि! उसका कुंभीपाक नरक में वास हुआ और तीन लक्ष वर्ष तक नरक को भोग के फिर मृग की योनि में हुआ है ॥ ९ ॥

मानुषत्वं वरारोहे पुनः प्राप्तो महीतले।
धनधान्यसमायुक्तो वंशो नैव प्रजायते ॥ १० ॥

हे वरारोहे! भूमि पर मनुष्यशरीर को प्राप्त हो धन-धान्य से युक्त पुत्रहीन हुआ ॥ १० ॥

बहुरोगसमायुक्तो ज्वरोतीव मृतेः समः।
पुत्राणां मरणं देवि शीतलाद्यैरुपद्रवैः ॥ ११ ॥

बहुत रोगी ज्वर से पीड़ित था, शीतला निकलने से उसका पुत्र भी मर गया ॥ ११ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि परस्त्रीगमनं कृतम्।
त्यक्ता विवाहिता नारी पुत्रकन्यासमन्विता ॥ १२ ॥
तत्पापेनैव भो देवि पुत्रादीनां विनाशनम्।
गर्भनाशो भवेद्देवि वन्ध्यात्वं जायते शिवे ॥ १३ ॥

हे देवि! पहले पूर्वजन्म में दूसरी स्त्री से गमन करने और पुत्र, कन्या सहित अपनी स्त्री को छोड़ देने से हे देवि! उस पाप के प्रभाव से पुत्रादिकों का मरण हुआ और गर्भ वारंवार नाश होते हैं, उसकी स्त्री वन्ध्या हुई ॥ १२-१३ ॥

काकवन्ध्या भवेन्नारी सुखं नैव प्रजायते ।
स्वल्पयोनिः कृशाङ्गश्च कथाश्रवणतत्परः ॥ १४ ॥

काकवन्ध्या होने से उसको सुख नहीं हुआ, फिर दुर्बल सूक्ष्म भोगवाला और कथा सुननेवाला हुआ ॥ १४ ॥

विद्यादानविहीनश्च स्वकुले बहुनिष्ठुरः ।
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि कृतं यत्पूर्वजन्मनि ॥ १५ ॥

विद्यादानरहित अपने कुल को कष्ट देनेवाला हुआ । अब पूर्वजन्म में जो कुछ बुरा कर्म किया उसकी शांति कहता हूँ ॥ १५ ॥

तत्सर्वं शृणु मे देवि यतः शुद्धिमवाप्नुयात् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ १६ ॥

हे देवि ! उसे सुनो जिससे संसार के प्राणी सिद्धि को प्राप्त हों । हे वरानने ! गायत्री के मूल मंत्र का लक्ष जप करावे ॥ १६ ॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
हरिवंशश्रुतिं कुर्यात् त्रिवारावृत्तिसंख्यया ॥ १७ ॥

उससे दशांश हवन, तर्पण, मार्जन करावे । और तीन बार हरिवंश पुराण सुने ॥ १७ ॥

दशवर्णां ततो दद्यात्स्वर्णदानं विशेषतः ।
निष्कत्रयं प्रदद्याच्च ततः पापक्षयो भवेत् ॥ १८ ॥
भोजयेद् ब्राह्मणान्षष्टिं तथा दद्याच्च दक्षिणाम् ।
एवं कृते विधाने च पुत्रो भवति नान्यथा ॥ १९ ॥

और दशवर्णवाली गौवों का दान करे, स्वर्ण का दान और स्वर्ण की तीन मोहरों का दान करने से सब पापों का नाश होता

है। और साठ ब्राह्मणों को भोजन कराकर उनको दक्षिणा दे। इस विधि से अवश्य पुत्र की उत्पत्ति होती है ॥ १८-१९ ॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा।
एवं यदा न कुर्यात्तु तदा रोगाः पुनः पुनः ॥ २० ॥
जायन्ते नात्र संदेहः पूर्वजन्मफलात्किल ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६॥

और सब रोग नाश होते हैं इसमें संदेह नहीं और जो ऐसा न करे तो बार बार शरीर में रोग हों इसमें संदेह नहीं करना, यह पूर्वजन्म का फल है ॥ २०-२१ ॥

छियालीसवाँ अध्याय समाप्त।

———:०:———

अथ सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः।

शिव उवाच।

नर्मदादक्षिणे कूले ब्राह्मणो वसति प्रिये।
ब्रह्मकर्मकरो नित्यं सदा वेदपरायणः ॥ १ ॥

हे प्रिये! नर्मदा नदी के दक्षिण तीर पर एक ब्राह्मण वास करता था। वह ब्रह्मकर्म में रत और सब काल वेद का पारायण किया करता था ॥ १ ॥

शंकरस्य पुरे देवि प्रत्यहं वेदपाठनम्।
अर्भकान्ब्रह्मजातीयान्पाठयामास वै तदा ॥ २ ॥

हे देवि! महादेवपुरी में नित्यप्रति वेद पढ़ता था और ब्राह्मणों के बालकों को पढ़ाया करता था ॥ २ ॥

तस्य भार्याद्वयं चासीदेका प्रीतिमती सदा।
विरोधिनी ततो ह्येका ज्येष्ठा भार्या तु तां त्यजेत् ॥ ३ ॥

उसके दो स्त्रियाँ थीं, उनमें पहली प्रेम करनेवाली और दूसरी विरोधी थी, इसलिए बड़ी स्त्री को उसने छोड़ दिया ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले ब्राह्मणस्य तदा शिवे ।
ततो मृत्युवशं यातस्तस्य भार्या गरीयसी ॥ ४ ॥

हे शिवे ! बहुत काल बीत जाने पर उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई और उसकी बड़ी स्त्री ॥ ४ ॥

चितां कृत्वा प्रयत्नेन भर्त्तुः खलु वरानने ।
भर्त्रा सह च भो देवि सती जाता महामतिः ॥ ५ ॥

हे देवि ! यत्न से चिता बनाकर वह पति के साथ सती हो गई ॥ ५ ॥

सत्यलोकस्त्वभूत्तस्य जायया सहितस्य वै ।
बहुवर्षसहस्त्राणि सत्यलोकेऽवसत्तदा ॥ ६ ॥

तब उसको स्त्रीसहित सत्यलोक की प्राप्ति हुई और हजारों वर्ष तक सत्यलोक में वास करता रहा ॥ ६ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोकेऽभवत्पुनः ।
मानुषत्वं शुभे जन्म कुले महति पूजिते ॥ ७ ॥

फिर पुण्य क्षीण होने पर मनुष्यलोक में सब जनों से पूजित, शुभ लक्षणों से युक्त उत्तम कुल में जन्म हुआ है ॥ ७ ॥

धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो विचक्षणः ।
पूर्वजन्मनि भो देवि भार्यात्यागः कृतस्तथा ॥ ८ ॥

हे देवि ! धनधान्य से युक्त बुद्धिमान् वह संतानरहित हुआ क्योंकि उसने पहले जन्म में अपनी स्त्री का त्याग किया था ॥ ८ ॥

तेन दोषेण भो देवि ततः पुत्रो न जीवति ।
दिने दिने कुक्षिपीडा तस्य चाभिनवा भवेत् ॥ ९ ॥

हे देवि ! उस दोष से इसके पुत्र नहीं हुआ और दिन दिन उसकी कुक्षि में पीड़ा होती रही है ।। ९ ।।

पुण्यं शृणु महादेवि यतः शान्तिर्भविष्यति ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।। १० ।।

हे देवि ! अब मैं उसकी शांति को कहता हूँ सुनो, घर के धन का छठा भाग पुण्य कर देवे ।। १० ।।

वापीकूपतडागांश्च पथिमध्ये च कारयेत् ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां जपं कुर्याद्विचक्षणः ।। ११ ।।

बावड़ी, कूप, तालाब को रास्ता में बनवावे तथा 'गायत्री' और 'जातवेद०' मंत्रों का जप करावे ।। ११ ।।

होमं च तद्दशांशेन तिलतण्डुलपायसैः ।
दशवर्णाः प्रदातव्या विप्राणां भोजनं शतम् ।। १२ ।।

और तिल, चावल, घृत तथा खीर का दशांश हवन करावे और दशवर्णवाली गौवों का दान दे, सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे ।। १२ ।।

एवं कृते न संदेहो वंशलाभो भवेदनु ।
व्याधेश्चैव प्रमुच्येत सत्यं सत्यं वरानने ।। १३ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ।।४७।।

ऐसा करने से निश्चय वंश का लाभ हो । और व्याधि से भी छूट जाता है, यह सत्य है ।। १३ ।।

सैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगरे देवि वैश्योऽवात्सीत्सुरेश्वरि ।
स्वकर्मनिरतो दक्षो विष्णुभक्तिपरायणः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे सुरेश्वरि ! अयोध्या में एक वैश्य रहा करता था। वह अपने कर्म में चतुर और विष्णु का भक्त था ॥ १ ॥

धनधान्यसमायुक्तो विप्रसेवासु तत्परः ।
पत्नी तस्य वरारोहे सुन्दरी च पतिव्रता ॥ २ ॥

धनधान्य से युक्त और ब्राह्मणों की सेवा में तत्पर था। हे वरारोहे ! उसकी स्त्री सुन्दर पतिव्रता धर्मात्मा थी ॥ २ ॥

कश्चिन्मित्रं प्रियस्तस्य ब्राह्मणो वेदपारगः ।
प्रत्यहं निकटे तस्य बहुस्वर्णमुपार्जयेत् ।
ब्राह्मणोप्यात्मनः स्वर्णं ददौ वैश्याय वै शिवे ॥ ३ ॥

और उस वैश्य के पास नित्यप्रति कोई वेदज्ञ ब्राह्मण स्वर्ण इकट्ठा किया करता था। हे शिवे ! उसने अपने सोने को वैश्य को दे दिया ॥ ३ ॥

तीर्थयात्राप्रसङ्गेन वाराणस्यां गतः स वै ।
गत्वा काश्यां वरारोहे शरीरं ब्राह्मणोऽत्यजत् ॥ ४ ॥

वह ब्राह्मण तीर्थयात्राप्रसङ्ग से काशी गया। काशी में जाकर अपने शरीर का त्याग कर दिया ॥ ४ ॥

सर्वं वैश्येन तद् द्रव्यं भुक्तं बहुदिनोपरि ।
शरीरत्याजनाद्देवि पुण्यतीर्थे स्त्रिया सह ॥ ५ ॥

हे देवि ! उस वैश्य ने सब द्रव्य भोग किया। पवित्र तीर्थ में शरीर त्याग करने से वह स्त्रीसहित ॥ ५ ॥

अयोध्यायां विशालाक्षि स्वर्गवासं तथाऽक्षयम् ।
दशपंचयुगं भुक्त्वा फलं चैव मनोहरम् ॥ ६ ॥

हे विशालाक्षि ! अयोध्या में मरने से अक्षय स्वर्ग को प्राप्त हुआ । और पंद्रह युग अच्छे फल भोग करता रहा ॥ ६ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि ।
कुले महति वै पूज्ये नरजन्म ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

हे सुरेश्वरि ! पुण्य क्षीण होने पर मृत्युलोक में उत्तम कुल में मनुष्यजन्म हुआ ॥ ७ ॥

धनधान्यसमायुक्तो विष्णुपूजासु तत्परः ।
ब्राह्मणस्यैव स्वर्णादि न दत्तं वै गृहीतवान् ॥ ८ ॥
तस्मात्खलु वरारोहे पुत्रस्तस्य न जायते ।
शरीरे च महाकष्टं मध्ये मध्ये प्रजायते ॥ ९ ॥

वह धनधान्य से युक्त विष्णुपूजा में तत्पर था । ब्राह्मण के धन को ले लिया और दिया नहीं इससे हे वरारोहे ! उसके पुत्र नहीं हुआ और शरीर में महाकष्ट की प्राप्ति होती रहती है ॥ ८-९ ॥

तस्य चोत्तरफाल्गुन्याः प्रथमे चरणे शुभे ।
जन्म वै चाप्यभूद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ १० ॥

हे देवि ! उसका उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हुआ इससे पुत्रकन्या से रहित हुआ ॥ १० ॥

अस्य पापस्य वै शान्ति पुण्यं श्रृणु वरानने ।
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्वारमेकं च तत्परः ॥ ११ ॥

हे वरानने ! इस पाप की पवित्र शांति को सुनो, एक बार नियमपूर्वक हरिवंश को सुने ॥ ११ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्रीमूलमंत्रेण दशायुतजपं तथा ॥ १२ ॥

होमं च तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
दशवर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः ॥ १३ ॥

अपने धन का छठा भाग ब्राह्मण को दान करे और गायत्री के मूल मंत्र का जप एक लाख करावे। और उसका दशांश हवन, तर्पण और मार्जन करावे। दशवर्णवाली गौवों का दान सुवर्ण और वस्त्रों के साथ देवे ॥ १२-१३ ॥

भूमिदानं ततो देवि विप्राय विदुषे प्रिये ।
व्रतं सूर्यस्य वै कुर्यात्पत्न्या सह वरानने ॥ १४ ॥

हे देवि ! पृथ्वी का दान वेदज्ञ ब्राह्मण को दे और हे वरानने ! स्त्रीसहित सूर्य का व्रत करे ॥ १४ ॥

कूष्मांडं नारिकेरं च पंचरत्नसमन्वितम् ।
गंगामध्ये प्रदातव्यं सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥ १५ ॥

कुम्हड़ा, नारियल को पंचरत्न तथा सुवर्ण दक्षिणा के सहित गङ्गा के मध्य में दान दे ॥ १५ ॥

शय्यादानं प्रयत्नेन प्रकुर्यान्नियतेन्द्रियः ।
एवं कृते न संदेहः सर्वरोगो विनश्यति ॥ १६ ॥

और शुद्धमन जितेन्द्रिय होकर शय्यादान दे, ऐसा करने से सब रोग नष्ट होते हैं, इसमें संदेह नहीं ॥ १६ ॥

अपुत्रो लभते पुत्रं काकवंध्या सुतं लभेत् ।
मृतवत्सा सुतं सूते चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे
उत्तरानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामा-
ष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

बिना पुत्रवाले के पुत्र होते हैं, काकवंध्या स्त्री के पुत्र की

प्राप्ति होती है, और मृतवत्सा स्त्री के भी चिरजीवि पुत्र होता है ॥ १७ ॥

अड़तालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुरुषोत्तमपुरे रम्ये स्वर्णकारोऽवसत् पुरा ।
स्वकर्मनिरतो नित्यं हेमकृत्ये विचक्षणः ॥ १ ॥

पुरुषोत्तमपुर में एक सुनार रहा करता था। वह अपने कर्म में और सोने के काम में चतुर था ॥ १ ॥

ब्राह्मणस्तस्य वै मित्रं धनाढ्यो वेदवर्जितः ।
तेन विप्रेण भो देवि स्वर्णं दत्तं शतं पलम् ॥ २ ॥

हे देवि ! उस सुनार के एक ब्राह्मण मित्र था। वह धनी था और वेद से रहित था। उस ब्राह्मण ने सौ पल सोना सुनार को दिया ॥ २ ॥

स्वर्णकाराय मित्राय माल्यार्थं च विचक्षणः ।
ब्राह्मणाय न दत्तं हि माल्यं दिव्यं वरेऽनघे ॥ ३ ॥

हे अनघे ! उस ब्राह्मण ने सुनार मित्र को माला बनाने के लिए सोना दिया था। लेकिन सुनार ने माला नहीं बना दिया ॥ ३ ॥

ब्राह्मणस्याभवन्मृत्युः किंचित्काले गते सति ।
स्वर्णं तत्स्वेच्छया भुक्तं पुत्रदारयुतेन च ॥ ४ ॥

तब कुछ दिनों के बाद उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई, तब सुनार अपने पुत्र स्त्रीसहित उसका भोग करता रहा ॥ ४ ॥

ततो बहुगते काले स्वर्णकारस्य वै शिवे ।
मरणं वै तदा जातं पुत्रदारायुतस्य च ॥ ५ ॥

हे शिवे ! फिर बहुत दिनों के बाद वह सुनार पुत्र स्त्रीसहित मर गया ॥ ५ ॥

महाकटाहनरके दूतैः क्षिप्तो यमाज्ञया ।
युगमेकं वरारोहे भुक्तं नरकजं फलम् ॥ ६ ॥

हे वरारोहे ! सुनार को यम की आज्ञा से दूतगण महाकटाह नरक में ले गये । वह एक युग तक नरकफल को भोगता रहा ॥ ६ ॥

नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ।
व्याघ्रयोनिं ततो भुक्त्वा शृगालत्वं ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

हे देवि ! नरक से निकलकर व्याघ्र की योनि में, फिर व्याघ्र से गीदड़ की योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ७ ॥

ततः काकस्य वै योनिं भुक्त्वा नरकमाप्नुयात् ।
देशे पुण्यतरे देवि मनुषत्वं सुरेश्वरि ॥ ८ ॥

हे देवि ! फिर कौआ की योनि को प्राप्त हुआ । फिर दुःखों को भोगकर पवित्र देश में मनुष्ययोनि में जन्म हुआ ॥८॥

पूर्वजन्मनि यत्स्वर्णं ब्राह्मणस्य हृतं प्रिये ।
तेन पापेन भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते ॥ ९ ॥

हे प्रिये ! पहले जन्म में ब्राह्मण का सोना भोग किया था इस पाप से इसके पुत्र नहीं हुआ ॥ ९ ॥

गर्भस्रावो भवेन्नार्याः काकवन्ध्या च जायते ।
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु देवि सुशोभने ॥ १० ॥

हे सुशोभने ! गर्भ गिरने से उसकी स्त्री काकवन्ध्या हुई, इस पाप की शांति कहता हूँ सुनो ॥ १० ॥

षडंशं च ततो देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
दशायुतजपं कुर्याद्गायत्र्या नियमेन च ॥ ११ ॥

धन का छठा भाग ब्राह्मण को दे। दशहजार गायत्री का जप नियम से करावे ॥ ११ ॥

हरिवंशश्रुतिं देवि संकल्प्य श्रद्धया युतः ।
होमं वै कारयेद्देवि स्वर्णदानं शतं पलम् ॥ १२ ॥

हे देवि ! हरिवंश का श्रवण करे और श्रद्धा से होम करावे, सौ पल सोने का दान दे ॥ १२ ॥

गोदानं विधिवत्कुर्याच्छिवपूजनमेव च ।
एवं कृते न संदेहः शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥ १३ ॥

विधि से गौ का दान करे, शिवपूजन करे, ऐसा करने से शीघ्र पुत्र की प्राप्ति हो ॥ १३ ॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ।
काकवन्ध्या प्रसूयेत सत्यमेव न संशयः ॥ १४ ॥

मृतवत्सा के चिरजीवी उत्तम पुत्र हो। काकवन्ध्या के भी पुत्र हो यह सत्य कहता हूँ, इसमें संदेह नहीं करना ॥ १४ ॥

रोगात्प्रमुच्यते शीघ्रं ज्वरं सर्वं क्षयं व्रजेत् ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥

सब रोगों से छूट जाय सब ज्वर नाश हो जाय ॥ १५ ॥

उनचासवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुरे वै गहने देवि तैलकारोऽवसत्पुरा ।
महाधनाढ्यो वै देवि कोटिद्रव्येण संयुतः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि ! पहले गहन नामक पुर में तेली बसता था । और वह बड़ा धनी था ॥ १ ॥

तस्य च स्त्रीद्वयं चासीज्ज्येष्ठायां वै विषं ददौ ।
कनिष्ठा च गृहे तस्य गृहिणी धर्मचारिणी ॥ २ ॥

और उसके दो स्त्रियाँ थीं। उसने बड़ी स्त्री को जहर दे दिया और छोटी स्त्री धर्म में रत घर में रहती थी ॥ २ ॥

एवं बहुगते काले तैलकारस्य वै शिवे ।
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ३ ॥
महाकटाहे नरके निक्षिप्तश्च सुदारुणे ।
तत्र च बहुधा पीडा नानानरकयातना ॥ ४ ॥

हे शिवे ! इस प्रकार तेली के बहुत दिन बीत चुकने पर उसकी मृत्यु हो गई । तब यमदूतों ने यम की आज्ञा से महा-कटाह घोर नरक में छोड़ा, वहाँ कई तरह के नरकों का भोग करता रहा ॥ ३-४ ॥

त्रिंशत्सहस्रं वै वर्षं तीव्रदुःखं च जायते ।
भुक्तं नरकजं दुःखं योनिं सर्पस्य वै शिवे ॥ ५ ॥

तीस हजार वर्षों तक बड़ा दुःखी रहा । फिर हे शिवे ! नरकों के दुःखों को भोगके सर्प की योनि में हुआ ॥ ५ ॥

गृध्रत्वं कुक्कुटत्वं वै द्वे योनी च तदागतः ।
मानुषस्य च वै योन्यां जातः खलु वरानने ॥ ६ ॥

हे वरानने ! गृध्र पक्षी की और मुर्गे की योनि प्राप्त होकर फिर मनुष्ययोनि में पैदा हुआ ॥ ६ ॥

धनधान्यसमायुक्तो गुणज्ञो ज्ञानवानपि ।

ततो वै तस्य मरणं गङ्गायां देव्यभूत्पुरा ॥ ७ ॥

तत्पुण्येन महादेवि मानुषो धनवानभूत् ।

हे देवि ! धनधान्य से युक्त, गुणी ज्ञानी हुआ । और उसकी गंगा में मृत्यु हो गई हे देवि ! उस पुण्य प्रताप से धनी हुआ ॥ ७ ॥

तैलकारो यतः पूर्वं ज्येष्ठायै च विषं ददौ ॥ ८ ॥

तत्पापेन च भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते ।

बहुरोगेण संयुक्तो भार्या कष्टयुता सदा ॥ ९ ॥

तेली ने पहले अपनी बड़ी स्त्री को जहर दिया था । हे देवि ! इस पाप के प्रभाव से पुत्र नहीं होते हैं और बहुत रोगी रहता है । उसकी स्त्री भी दुःखी रहती है ॥ ८-९ ॥

अथ शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सविस्तरम् ।

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं करोतु सः ॥ १० ॥

हे देवि ! अब उसकी शांति कहता हूँ, सुनो । अपने घर के धन का आठवाँ भाग पुण्य करे ॥ १० ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।

हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥ ११ ॥

और गायत्री के मूल मंत्र का लक्ष जप करावे और उसका दशांश होम, मार्जन और तर्पण करावे ॥ ११ ॥

त्र्यम्बकेति च मन्त्रेण दशायुतजपं पुनः ।

दशवर्णां ततो दद्यात्कूष्माण्डं रत्नसंयुतम् ॥ १२ ॥

'त्र्यम्बकं०' मंत्र का दश हजार जप करवावे, दश वर्णोंवाली गौवों का दान दे और रत्नोंसहित कुम्हड़ा का दान दे ॥ १२ ॥

काश्यां वै ग्रहणे दद्यात्पत्न्या सार्द्धं महद्धनम् ।
कार्त्तिके माघवैशाखे प्रातःस्नानं समाचरेत् ॥ १३ ॥

काशी में ग्रहण के समय स्त्रीसहित द्रव्यदान दे और कार्त्तिक, माघ, वैशाख इन महीनों में प्रातःकाल स्नान करे ॥ १३ ॥

तिलधेनुं ततो दत्त्वा सद्यः पापात्प्रमुच्यते ।
एवं कृते न संदेहो वंशलाभो भवेद् ध्रुवम् ॥ १४ ॥

और तिल की गौ का दान देने से तत्काल पाप से छूट जाता है ऐसा करने से वंश का लाभ हो इसमें संदेह नहीं ॥१४॥

कन्यकाजननी यापि सापि पुत्रवती भवेत् ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १५ ॥

इस प्रकार जिसके कन्या होती है वह भी पुत्रवाली हो और मृतवत्सा स्त्री चिरजीवी पुत्रों को प्राप्त करे ॥ १५ ॥

रोगात्प्रमुच्यते शीघ्रं ज्वरो नैव प्रजायते ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

और रोग से जल्दी छूट जाय और उसे ज्वर की पीड़ा न हो ॥ १६ ॥

पचासवाँ अध्याय समाप्त ।

---:o:---

अथैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गयापुर्यां पुरा देवि ब्राह्मणोऽध्यवसत्प्रिये ।
वेदकर्मपरिभ्रष्टो मद्यपानरतः सदा ॥ १ ॥

स्तेयवेश्यासु संगामी स प्रतिग्रहवानपि ।
वयः सर्वं गतं चेत्थं वृद्ध जाते मृतः स वै ॥ २ ॥

शिवजी कहते हैं हे प्रिये ! गयापुरी में एक ब्राह्मण वास करता था । वह वेदकर्म से भ्रष्ट, मदिरा पीने, चोरी करने और वेश्याप्रसंग करने तथा प्रतिग्रह को लेनेवाला था । इसी तरह सब आयु बिताकर वृद्धावस्था में मर गया ॥ १-२ ॥

यमदूतो महाघोरे कटाहनरकेऽक्षिपत् ।
लक्षत्रयमितं देवि भुक्तं नरकजं फलम् ॥ ३ ॥

हे देवि ! उसे यम की आज्ञा से दूतों ने महाघोर नरक में डाला । तीन लक्ष वर्षों तक नरक के दुःखों को भोगता रहा ॥ ३ ॥

चाणूरस्य कुले जन्म ततः प्रेतोऽगमत्पुरा ।
बिडालत्वं ततो यातः फल्गुतीर्थे मृतः स वै ॥ ४ ॥

फिर चाणूरकुल में जन्म होकर वहाँ से फिर प्रेतयोनि को प्राप्त हो, फिर बिलाव हुआ और फल्गु नामक तीर्थ में उसकी मृत्यु हुई ॥ ४ ॥

पुनर्मानुषयोनित्वं मध्यदेशे सुरेश्वरि ।
कन्यकाजननी भार्या शरीरे सततं ज्वरः ॥ ५ ॥

मध्यदेश में मनुष्ययोनि में हुआ । उसके कन्या पैदा हुई और शरीर में निरन्तर ज्वर की पीड़ा उत्पन्न हुई ॥ ५ ॥

चिन्तोद्विग्नः सदा देवि बहुदुःखेन पीडितः ।
अस्य शान्तिं शृणुष्वादौ यतः पापक्षयो भवेत् ॥ ६ ॥

हे देवि ! वह चिन्ता से उद्विग्न और दुःखी रहता था । अब इसके पाप की शांति कहता हूँ जिससे पाप का नाश हो जाय ॥ ६ ॥

केशवस्यार्चनं चादौ साधूनां सेवनं सदा ।
ब्राह्मणे दृढभक्तिश्च दाने वै भोजने तथा ॥ ७ ॥

विष्णुपूजा करे और हमेशा श्रेष्ठ पुरुषों का सेवन, ब्राह्मणों में भक्ति और दान, भोजन कराना ॥ ७ ॥

गां सवत्सां ततो दद्याद्विप्राय प्रतिवत्सरम् ।
श्रवणं विष्णुशास्त्रस्य हरिवंशश्रुतिं तथा ॥ ८ ॥

और बछड़ासहित गौ का दान ब्राह्मण को प्रतिवर्ष दे । विष्णुपुराण और हरिवंश को सुने ॥ ८ ॥

एवं कृते न संदेहो बहुपुत्रः प्रजायते ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति काकवन्ध्या च पुत्रिणी ॥ ९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

ऐसा करने से बहुत पुत्र हों, सब रोग नाश हों, काकवंध्या स्त्री के पुत्र हो ॥ ९ ॥

इक्यावनवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

स्वर्णकारोऽवसद्देवि पुरे भोजकटे तथा ।
स्त्री तस्यासीन्महादुष्टा परपुंसि रता सदा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि ! एक स्वर्णकार भोजकटपुर में वास करता था और उसकी स्त्री महादुष्टा हमेशा दूसरों के साथ गमन करनेवाली थी ॥ १ ॥

तद्गृहे वैश्य एकोपि ह्यागतो धनसंयुतः ।
तयोः प्रीतिरभूद्देवि स्वर्णकारकवैश्ययोः ।। २ ।।

हे देवि ! उस सुनार के घर में एक धनी वैश्य आया और उन दोनों की आपस में प्रीति हो गई ।। २ ।।

व्यापारार्थं गृहीतं तु वैश्यस्वर्णं तदा प्रिये ।
पलं शतमितं देवि विक्रयं चाकरोत्किल ।। ३ ।।

तब हे प्रिये ! उस सुनार ने सौ पल सोना व्यापार के वास्ते वैश्य से उधार लिया ।। ३ ।।

स्वर्णकारस्य या पत्नी सुन्दरी कुलटापरा ।
प्रीत्या तदाऽभजत्पत्नी वैश्याय धनिकाय वै ।। ४ ।।

और जो सुनार की स्त्री कुलटा सुन्दरी नामवाली बड़ी चतुर थी, वह प्रेम से उस धनी वैश्य से सम्बन्ध रखने लगी ।। ४ ।।

एवं बहुगते काले वैश्यस्य मरणे सति ।
पश्चान्मृतस्तदा सोपि स्वर्णकारो वरानने ।। ५ ।।

हे वरानने ! बहुत समय बीत जाने पर उस वैश्य की मृत्यु हो गई । बाद में वह सुनार भी मर गया ।। ५ ।।

उभौ च नरके प्राप्तौ बहुकालं तु दोषतः ।
युगैकसम्मितं देवि भुक्त्वा नरकयातनाम् ।। ६ ।।

फिर वे दोनों नरक में गये । हे देवि ! पाप के प्रभाव से एक युग नरक के दुःख को भोगते रहे ।। ६ ।।

नरकान्निःसृतौ तौ तु शुनो योनिं तदा गतौ ।
पुनर्वृषभयोनिं च नरयोनिस्ततोऽभवत् ।। ७ ।।

फिर नरक से निकलकर दोनों कुत्ते की योनि में प्राप्त हुए फिर बैलयोनि को प्राप्त होकर मनुष्ययोनि में जन्म लिया ।।७।।

हे प्रिये ! विशेष विधि से गौ, शय्या का दान दे और सोने की मूर्त्ति बनावे। हे शिवे ! ग्यारह पल सोने की मूर्त्ति का आभूषण वस्त्रसहित विधिवत् इन मंत्रों से पूजन करे ॥ १३-१४ ॥

श्रीविष्णो पुण्डरीकाक्ष भुवनानां च पालक ।
चंदनैः प्रतिमां दिव्यां पूजयामि गृहाण भोः ॥ १५ ॥
नरसिंहाय नमः पादयोः । गोविन्दाय नमः उदरे ।
विश्वजिते नमः कट्याम् । अनिरुद्धाय नमः उरसि ।
शितिकण्ठाय नमः कण्ठे । वैनतेयाय नमः शिरसि ।
असुरध्वंसनाय नमः चक्रे । तोयात्मने नमः शङ्खे ।
वैकुण्ठाय नमः गदायाम् । सर्वात्मने नमः पद्मे ।
भो किरीटिन्महादेव शंखचक्रगदाधर ।
पापं मया कृतं पूर्वं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥ १६ ॥
ततः प्रदक्षिणां कुर्यात्पत्न्या सह वरानने ।
प्रतिमां पूजितां चैव ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १७ ॥

हे वरानने ! फिर मूर्ति की स्त्रीसहित परिक्रमा करके मूर्ति को पूजकर ब्राह्मण को देवे ॥ १७ ॥

एवं कृते तदा देवि पुत्रो भवति नान्यथा ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे हस्तनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५२॥

हे देवि ! ऐसा करे तो पुत्र हो और सब रोग दूर हों इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १८ ॥

बावनवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

वंगदेशे महादेवि केशवं नाम वै पुरम् ।
खङ्गनामेति विख्यातो नापितो वसति प्रिये ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! वंगदेश में केशवपुर है वहाँ खङ्ग नामक एक नाई रहता था ॥ १ ॥

महाधनसमायुक्तो भाग्यवान् देवपूजकः ।
तस्य पत्नी विशालाक्षी लीलानाम्नीति विश्रुता ॥ २ ॥

वह बड़ा धनी, भाग्यवान्, देवता का पूजन करनेवाला था । उसकी स्त्री के बड़े नेत्र थे उसका नाम लीला था ॥ २ ॥

तस्यां पुत्रद्वयं जातं नापितस्य तदा प्रिये ।
एको द्यूतपरः पुत्रो द्वितीयश्चौरसम्मतः ॥ ३ ॥

हे प्रिये ! उस नापित के दो पुत्र हुए । पहला पुत्र जुआरी दूसरा चोरी करनेवाला हुआ ॥ ३ ॥

परस्त्रीलम्पटो देवि नापितस्य च वै सुतः ।
ज्येष्ठपुत्रस्य या भार्या पुंश्चली चातिसुंदरी ॥ ४ ॥

हे देवि ! नाई का पुत्र दूसरी स्त्री में फँसा था और बड़े पुत्र की स्त्री व्यभिचारिणी और अत्यन्त सुन्दरी थी ॥ ४ ॥

नापितं प्राभजत्सा तु श्वशुरं खङ्गनामकम् ।
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्तदा ॥ ५ ॥

वह खङ्ग नामक अपने ससुर के साथ भी अनुचित कर्म करती थी । बहुत समय के बाद उस नाई की मृत्यु हो गई ॥ ५ ॥

तदा पत्नी सती जाता नापितस्य चिताग्निना ।
तस्यलोकमभूद्देवि भार्यया सहितस्य वै ॥ ६ ॥

हे देवि ! नाई की स्त्री उसकी चिता में सती हो गई, इससे उन दोनों को सत्यलोक हुआ ॥ ६ ॥

युगमेकायुतं देवि सत्यलोकेऽवसत्तदा ।
ततः पुण्यक्षये जाते पुनर्मानुषतां गतः ॥ ७ ॥

हे देवि ! एक युग सत्यलोक में रहकर पुण्यक्षीण होने पर फिर मनुष्यलोक में जन्म हुआ ॥ ७ ॥

धनधान्यसमायुक्तो ह्यपुत्रश्च सुशोभने ।
पंच कन्याः प्रजायंते व्याधिस्तस्य प्रजायते ॥ ८ ॥

हे सुशोभने ! धनधान्य से युक्त, पुत्र से रहित उसके पाँच कन्याएँ हुईं । वह शरीर से पीड़ित रहता है ॥ ८ ॥

अस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापक्षयं यतः ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ ९ ॥

अब उस पाप की शांति कहता हूँ जिससे पूर्व दोष नष्ट हो । अपने घर के द्रव्य का आठवाँ भाग ब्राह्मण को दान दे ॥ ९ ॥

गायत्रीमूलमंत्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १० ॥

गायत्री के मूल मंत्र का लक्ष जप, दशांश हवन तथा तर्पण और मार्जन करावे ॥ १० ॥

वाटिकाकूपमार्गांश्च तडागं चैव कारयेत् ।
तुलसीसेवनं नित्यमेकादश्यां व्रतं ततः ॥ ११ ॥

बगीचा, कुआँ, तालाब, रास्ते के बीच में बनवावे । रोज तुलसी का सेवन तथा एकादशी का व्रत करे ॥ ११ ॥

वृन्ताकं मूलिकां चैव न भोक्तव्यं कदाचन ।
दशवर्णां ततो दद्याद्धरिवंशश्रुतिं तथा ॥ १२ ॥

बैगन (भाँटा) तथा मूली का कभी भोजन न करे और दश वर्णोंवाली गौओं का दान दे और हरिवंश सुने ॥ १२ ॥

एवं कृते न संदेहः पुत्रो भवति तस्य वै ।
कन्यका नैव जायन्ते वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ॥ १३ ॥

ऐसा करने से उसके निश्चय पुत्र हो कन्या की उत्पत्ति नहीं होवे, और वंध्यापना भी दूर हो ॥ १३ ॥

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति काकवंध्या लभेत्सुतम् ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे हस्तनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

सब रोग नाश को प्राप्त होवे, तथा काकवंध्या स्त्री भी पुत्र प्राप्त करे ॥ १४ ॥

तिरपनवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ चतुःपंचाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कौशिक्या दक्षिणे कूले कारुको न्यवसत्प्रिये ।
विष्णुभक्तिरतो नित्यं कृषिकर्मसु तत्परः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे प्रिये ! कौशिकी नदी के दाहने किनारे पर एक चटाई बनानेवाला रहता था । वह विष्णुभक्ति और कृषिकर्म में लगा रहता था ॥ १ ॥

धनं तु संचितं देवि कार्पण्यं पुण्यवर्जितम् ।
एकस्मिन्समये रात्रौ क्षेत्रे व्याघ्रेण वै हतः ॥ २ ॥

हे देवि ! उसने धन इकट्ठा किया, लेकिन कंजूसी से दान नहीं किया । उसको एक दिन रात को खेत में बाघ ने मार डाला ॥ २ ॥

यमदूतैर्महाघोरे रौरवे पातितस्तदा ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ३ ॥
ततः कर्मवशाद्देवि बिडालत्वं ततो गतः ।
पुनः कुक्कुटयोनिर्वै शृगालत्वं ततोऽभवत् ॥ ४ ॥

तब यमदूतों ने आज्ञा पाकर उसे रौरव नरक में डाला, वहाँ साठ हजार वर्षों तक महादुःखों को भोगकर हे देवि ! कर्मवश बिलाव की योनि को प्राप्त हुआ फिर मुर्गे की योनि में होकर सियार की योनि में उत्पन्न हुआ ॥ ३-४ ॥

पुनर्मानुषयोनिश्च मध्यदेशे वरानने ।
पुत्रकन्याविहीनश्च अर्शोरोगेण पीडितः ॥ ५ ॥

हे वरानने ! फिर मध्यदेश में मनुष्ययोनि में पैदा हुआ पुत्र और कन्या संतान से रहित बवासीर रोग से पीड़ित है ॥ ५ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ।
सूर्यमाराधयेन्नित्यं व्रतं सूर्यस्य वासरे ॥ ६ ॥

अब पाप शुद्धि के लिये शांति कहता हूँ । नित्यप्रति सूर्य की पूजा करना और रविवार के दिन व्रत करना ॥ ६ ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं तथा ।
प्रयागे नियतः स्नानं माघवैशाखकार्त्तिके ॥ ७ ॥

गायत्री मंत्र का एक लाख जप करे और माघ, वैशाख, कार्त्तिक इन महीनों में प्रयाग स्नान नियम से करे ॥ ७ ॥

भूमिदानं ततो देवि वित्तशाठ्यं न कारयेत् ।
गोमिथुनं ततो दद्यात्सर्वालंकारभूषितम् ॥ ८ ॥

हे देवि ! फिर भूमि का दान करे और श्रद्धाहीन कर्म न करे, और सब गहनों के साथ गौवों का दान करे ॥ ८ ॥

कूष्मांडं नारिकेरञ्च पंचरत्नसमन्वितम् ।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं तुलसीपत्रसंयुतम् ।
माल्यस्य रचना कार्या स्वर्णदशपलैः शुभा ॥ ९ ॥
विधिपूर्वं विशेषेण विविधं गंधर्चचितम् ।
आचार्याय ततो दद्यात् सर्वपापविशुद्धये ॥ १० ॥

कुम्हड़ा और नारियल को पंचरत्न तथा तुलसी पत्र के साथ गंगा में दान करे, और दश पल सुवर्ण की सुन्दर माला बनवावे फिर विधि से गंधादि पूजन करके सर्व पाप शुद्धि के लिए संकल्प कर आचार्य को दे ॥ ९-१० ॥

पुत्रश्च जायते देवि कन्यका नैव जायते ।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति वंध्यात्वं च प्रणश्यति ।
काकवंध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥ ११ ॥

ऐसा करने से हे देवि ! पुत्र हो, कन्या का जन्म न हो और सब रोग और वंध्यापन नष्ट हो । काकवन्ध्या और मृतवत्सा भी पुत्रों को उत्पन्न करे ॥ ११ ॥

अधनो धनमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे हस्तनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥

निर्धन मनुष्य धन प्राप्त करे इसमें कुछ संदेह नहीं हैं ॥ १२ ॥

चौवनवाँ अध्याय समाप्त ।

———:o:———

अथ पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

हस्तिनानगरे कश्चित्कायस्थो वसति प्रिये ।
केवलेति समाख्यातस्तस्य स्त्री कमला शुभे ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे प्रिये ! हस्तिनापुर में केवल नाम का कायस्थ वास करता था, उसकी स्त्री का नाम कमला था ॥ १ ॥

महाधनसमायुक्तो मद्यपानरतः सदा ।
वेश्यासुरतसंतृप्तो ब्राह्मणस्य विदूषकः ॥ २ ॥

वह बहुत धनी था, मदिरा पान तथा वेश्या प्रसंग करता और ब्राह्मण की निंदा करता था ॥ २ ॥

एकस्मिन्समये देवि कश्चिद्विप्रः समागतः ।
गङ्गाजलसमायुक्तं याचितं तेन भोजनम् ॥ ३ ॥

हे देवि ! एक समय उसके पास एक ब्राह्मण आया उसने गंगाजल सहित भोजन माँगा ॥ ३ ॥

तच्छ्रुत्वा देहजक्रोधाद् ब्राह्मणं निरभर्त्सयत् ।
ताडितो भर्त्सितस्तेन विषं पीत्वा द्विजो मृतः ॥ ४ ॥

यह सुनकर कायस्थ ने क्रोध से ब्राह्मण को फटकारा । जब ब्राह्मण अपमानित हुआ तो उसने जहर पी लिया और मर गया ॥ ४ ॥

ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत् ।
तस्य पत्नी सती जाता तद्दिने च वरानने ॥ ५ ॥

हे वरानने ! बहुत दिनों के बाद उस कायस्थ की मृत्यु हो गई । उसी दिन उसकी स्त्री भी सती हो गई ॥ ५ ॥

बहून्यब्दसहस्राणि सत्यलोकेऽवसत्तदा ।
सौख्यानि बहुदा तत्र प्रभुक्तानि वरानने ॥ ६ ॥

हे वरानने ! कई हजार वर्षों तक सत्यलोक में वासकर अनेक प्रकार के सुखों का भोग करता रहा ॥ ६ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं पुनर्गतः ।
धनधान्यसमायुक्तो विप्रवंशे प्रजायते ॥ ७ ॥

फिर पुण्यक्षीण होने पर धनधान्य के सहित ब्राह्मण-वंश में पैदा हुआ है ॥ ७ ॥

जातश्च बहवः पुत्रा गौराङ्गप्रियदर्शनाः ।
गुणज्ञा रूपसंपन्ना म्रियन्ते प्रीतिवर्द्धनाः ॥ ८ ॥

उसके कई पुत्र सुन्दर और गुणी सब लोगों से प्रेम करनेवाले होकर मर गए ॥ ८ ॥

द्वौ पुत्रौ शीलसंपन्नो चोद्वाहेन समायुतौ ।
पितुः कर्मवशाद्देवि ब्रह्महत्या पुरा यतः ॥ ९ ॥
राजरोगसमायुक्तौ जायागर्भो विनश्यति ।
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि पतिव्रते ॥ १० ॥

उसके दो शीलसंपन्न विवाहित पुत्र पिता के ब्रह्महत्या के प्रभाव से क्षय रोगी हो गए । और इसकी स्त्री के संतान गर्भ में ही नष्ट हो गए अब शांति कहता हूँ सुनो ॥ ९-१० ॥

विष्णोरराटमंत्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
दशांशं हवनं कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा ॥ ११ ॥

'विष्णोरराट०' मंत्र का लक्ष जप करावे दशांश हवन, तर्पण, मार्जन करावे ॥ ११ ॥

वित्तस्य च षडंशं च ब्राह्मणे दानमाचरेत् ।
वापीकूपतडागानि पथि मध्ये च कारयेत् ॥ १२ ॥

अपने घर के द्रव्य का छटा भाग ब्राह्मण को दान करे और बावड़ी, कूप, तालाब ये रास्ते में बनवावे ॥ १२ ॥

गामेकां कपिलां दद्यात्सवत्सां वस्त्रभूषिताम् ।
सुवर्णस्य कृतं विप्रं पलपञ्चदशस्य तु ॥ १३ ॥

वस्त्रादि आभूषणों के साथ वत्ससहित एक कपिला गौ का दान अच्छी तरह से दे और पन्द्रह पल सुवर्ण का ब्राह्मण बनवावे ॥ १३ ॥

दद्याद्विप्राय विदुषे सर्वप्राणिरताय वै ।
हरिवंशश्रुतिं देवि विधिपूर्वं च कारयेत् ॥ १४ ॥

फिर सब प्राणियों में श्रेष्ठ वेद पढ़े हुये ब्राह्मण को मूर्ति दे। हे देवि ! विधि से हरिवंश सुने ॥ १४ ॥

पुत्रश्च जायते देवि गर्भपातश्च शाम्यति ।
काकवंध्या लभेत्पुत्रं निश्चयो नात्र संशयः ॥ १५ ॥

हे देवि ! इससे पुत्र होता है, गर्भपात की शांति होती है तथा काकवंध्या अवश्य पुत्र प्राप्त करती है ॥ १५ ॥

पुत्राणां मरणं देवि पूर्वपापप्रसंगतः ।
प्रायश्चित्तं विना देवि कुतः शान्तिमवाप्नुयात् ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे हस्तनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥

हे देवि ! पूर्वपाप से इसके पुत्रों का मरण हुआ था। बिना प्रायश्चित्त के कैसे शांति होगी ? इसलिए पाप-शान्ति के लिए प्रायश्चित्त करे ॥ १६ ॥

पचपनवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गयापुर्यां महादेवि क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा ।
कुकर्मणि रतो नित्यं धनाढ्यः कृपणः शठ ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि ! पहले गया में एक क्षत्रिय रहा— वह सदा बुरे कर्म किया करता था । धनी होकर भी बड़ा कंजूस था ॥ १ ॥

स्त्री भवेच्चञ्चला तस्य द्वौ पुत्रौ च वरानने ।
कन्या चैका विशालाक्षी जाता तस्यां वरानने ॥ २ ॥
उद्वाहिता तदा देवि कन्यका व्यभिचारिणी ।

हे वरानने ! उसकी स्त्री चंचल थी उसके दो पुत्र हुए । और एक कन्या सुन्दर नेत्रोंवाली हुई । हे प्रिये ! कन्या का विवाह होते ही वह व्यभिचारिणी हुई ॥ २ ॥

महिषीपुत्रघातं च प्रत्यब्दमकरोत्प्रिये ॥ ३ ॥
अनेनैव प्रकारेण वयः सर्वं क्षयं गतम् ।
ततः सर्पेण वै दष्टस्तस्य मृत्युरभूत्तदा ॥ ४ ॥

वह हर वर्ष भैंसे का शिर काटता था, इसी तरह सब उम्र बीत गई, फिर सर्प के काटने से उसकी मृत्यु हो गई ॥ ३-४ ॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तो नरकार्णवे ।
त्रिसप्ततिसहस्राणि वर्षाणि च वरानने ॥ ५ ॥

हे वरानने ! वह यमराज के दूतों से महाघोर नरक में डाला गया और तिहत्तर हजार वर्ष तक नरक भोगता रहा ॥५॥

भुक्त्वा कष्टं विशालाक्षि गर्भत्वं च ततो गतः ।
मध्यदेशे विशालाक्षि नरजन्मा च क्षत्रियः ॥ ६ ॥

पुत्रो न जायते देवि पूर्वपापानुसारतः ।
कन्यका रजसा युक्ता विधवा जायते प्रिये ॥ ७ ॥

हे विशालाक्षि ! फिर कष्ट भोगकर मध्यदेश में क्षत्रिय जाति में जन्म हुआ । हे देवि ! पूर्वजन्म के पाप के अनुसार पुत्र नहीं होते हैं और उसकी जवान कन्या युवा अवस्था में विधवा हो गई है ॥ ६-७ ॥

महिषीपुत्रघातेन रोगोत्पत्तिश्च जायते ।
अस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुण्यं शृणु वरानने ॥ ८ ॥

हे वरानने ! भैंसा को मारने से शरीर में रोग पैदा हुए । अब इस पापशांति के लिए पुण्य कहता हूँ सुनो ॥ ८ ॥

स्ववित्तस्याष्टमं भागं ब्राह्मणाय ददेत वै ।
एकां कृष्णां च गां देवि स्वर्णशृङ्गीं सवत्सकाम् ॥ ९ ॥

अपने धन का आठवाँ भाग ब्राह्मण को दान दे और एक काली गौ स्वर्ण के शृंग मढ़ाकर बछड़े सहित तथा वस्त्रों सहित ॥ ९ ॥

सर्वलक्षणसपन्नां वस्त्रमुक्तादिभूषिताम् ।
ब्राह्मणाय तदा दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ॥ १० ॥

सब लक्षणवाली वस्त्र-भूषणादि के साथ ब्राह्मण को दान दे इसी प्रकार सब सामानसहित शय्यादान दे ॥ १० ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यामयुतं जपमाचरेत् ।
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं ततः ॥ ११ ॥

"गायत्री, जातवेद०" इन मंत्रों का दश हजार जप करे और उसका दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करे ॥ ११ ॥

पथिमध्ये वरारोहे पञ्चवृक्षस्य वाटिकाम् ।
कारयेद्विभवेनैव विष्णुवृक्षादिभिर्वृताम् ॥ १२ ॥

हे वरारोहे ! रास्ते में विष्णुवृक्ष पीपल आदि से युक्त पाँच पेड़ों की वाटिका लगवावे ।। १२ ।।

भोजयेद्देवि षट्षष्टिब्राह्मणान्वेदपारगान् ।
निष्कत्रयसुवर्णस्य प्रतिमां वस्त्रभूषिताम् ।। १३ ।।
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्विष्णुभक्ताय सुंदरि ।
एवं कृत्वां विशालाक्षि पूर्वजन्मकृतं च यत् ।। १४ ।।
पापं प्रणाशयेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ।
काकवन्ध्या च या नारी लभते पुत्रमुत्तमम् ।। १५ ।।

हे देवि ! वेद पढ़े हुए ६६ ब्राह्मणों को भोजन करावे और तीन निष्क सोने की मूर्ति बनाकर आभूषण वस्त्र के सहित विष्णु के भक्त ब्राह्मण को दे। हे सुंदरि ! ऐसा करने से पूर्वजन्म का पाप सब नष्ट हो जाता है, इसमें कुछ संदेह नहीं करना और काकवन्ध्या स्त्री के उत्तम पुत्र प्राप्त हो ।।१३-१५।।

पुत्रश्च जायते देवि सुरूपेण समन्वितः ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ।। १६ ।।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ।। १७ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे चित्रानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामषट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।। ५६ ।।

हे देवि ! पुत्र रूपवान् उत्पन्न होते हैं और सब रोग नाश हो जाते हैं इसमें कुछ विचार न करना ।। १६-१७ ।।

छप्पनवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पुण्येन जायते पुत्रः पुण्येन लभते श्रियम् ।
पुण्येन रोगनाशः स्यात् सर्वशास्त्रेण संमतः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं पुण्य से पुत्र, लक्ष्मी, पुण्य से ही रोग नाश होता है यह सब शास्त्रों का मत है ॥ १ ॥

मध्यदेशे वरारोहे ब्राह्मणो न्यवसत्प्रिये ।
सरय्वा दक्षिणे कूले कालिकापुरशोभने ॥ २ ॥

हे वरारोहे ! मध्यदेश में सरयू के दक्षिण किनारे पर कालिकापुर में एक ब्राह्मण बसता था ॥ २ ॥

तत्र कालीपुरे शुभ्रे द्विजोऽतिष्ठन्महाशनः ।
तेन वेश्यापरस्त्रीणां रतिसंसर्गतत्परः ॥ ३ ॥

उस कालीपुर में ठहरकर वह ब्राह्मण चोरी तथा वेश्या और परस्त्रीगमन करने लगा ॥ ३ ॥

मद्यपानं विना देवि निद्रा तस्य न जायते ।
तस्य स्त्री सुभवानाम्नी पतिसेवापरायणा ॥ ४ ॥

हे देवि ! मदिरापान किये बिना उसके नींद नहीं आती थी, उसकी स्त्री सुभवा पतिसेवा करती थी ॥ ४ ॥

प्रत्यहं पूजयेद्देवि स्वपतिं पापकारिणम् ।
ततो बहुगते काले मरणं व्याघ्रतोभवत् ॥ ५ ॥

हे देवि ! वह अपने पापकारी पति का नित्य पूजन करती थी, बहुत दिनों के बाद व्याघ्र के द्वारा उसकी मृत्यु हुई ॥ ५ ॥

तस्य पत्नी सती जाता चिताग्नौ च तदा हिता ।
सत्यलोके ततो देवि कल्पमेकं बुभोज सा ॥ ६ ॥

हे देवि ! उसकी स्त्री चिता में उसी के साथ सती हो गई। उसके प्रभाव से एक कल्प तक सत्यलोक में सुख भोगती रही ॥ ६ ॥

पत्या सह वरारोहे ततः पुण्यक्षये सति ।
मृत्युलोकेभवज्जन्म कुले महति पूजिते ॥ ७ ॥

हे वरारोहे ! पति के साथ वह स्वर्गलोक से पुण्यक्षीण होने पर बड़े कुल में जन्मी ॥ ७ ॥

धनधान्यसमायुक्तो बाल्यतो रोगवानपि ।
पुण्यसम्बन्धयोगेन पुण्यस्त्री या च संस्थिता ॥ ८ ॥

और वह धन धान्य से युक्त छोटी अवस्था से ही रोगी है, पवित्र और पुण्य योग से पहले जो स्त्री थी ॥ ८ ॥

पुनर्विवाहिता सैव यायात्पुत्रविवर्जिता ।
अस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुण्यं शृणु वरानने ॥ ९ ॥

हे देवि ! वही स्त्री फिर विवाही है। इस प्रकार वह पुत्रहीन रही। हे वरानने ! इस पाप की शांति कहता हूँ सुनो ॥ ९ ॥

गृहवित्तषडंशस्य पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण त्रिलक्षं जपमाचरेत् ॥ १० ॥
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
दशवर्णास्ततो दानं भूमिदानं विशेषतः ॥ ११ ॥

अपने घर के धन का छठा भाग पुण्य करे, और गायत्री मंत्र का तीन लक्ष जप करे। उसका दशांश होम, तर्पण तथा मार्जन करे और दश वर्णवाली गौओं का और विशेषकर भूमि का दान दे ॥ १०-११ ॥

गोविन्देति[1] ततो नाम जपेन्नित्यं वरानने ।
प्रातःस्नानं सदा कुर्यान्माघवैशाखकार्त्तिके ॥ १२ ॥

---

१ 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' यह द्वादशाक्षर मन्त्र है।

हे वरानने ! माघ, वैशाख, कार्त्तिक इन महीनों में सुबह स्नान करे, फिर गोविन्द नाम का नित्य जप करे ॥ १२ ॥

कृष्णस्य शतकं देवि भूर्जपत्रेण संयुतम् ।
लेखयित्वा विधानेन स्थापयेत्स्वगृहं प्रति ॥ १३ ॥

हे देवि ! कृष्ण के सौ नामों को भोजपत्र पर लिख करके अपने घर में स्थापन कर पूजन करे ॥ १३ ॥

हरिवंशश्रुतिं कुर्यादेकादश्यां व्रतं चरेत् ।
एवं कृत्वा वरारोहे सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥ १४ ॥
पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे चित्रा-नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम सप्तपञ्चा शत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

हे वरारोहे ! हरिवंश सुने और एकादशी का व्रत करने से सब रोग दूर होते हैं। और हे देवि ! पुत्र उत्पन्न होता है, इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १४–१५ ॥

सत्तावनवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथाष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यापुरतो देवि योजनत्रयदक्षिणे ।
सुधर्मपुरविख्यातो न्यवसन्बहवो जनः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! अयोध्या से तीन योजन दक्षिण दिशा में एक सुधर्मपुर नगर है वहाँ बहुत मनुष्य निवास करते थे ॥ १ ॥

रतिदासेति विख्यातो बभूव वस्तुविक्रयी।
दलाक्षीति समाख्याता तस्य पत्नी च स्वैरिणी ॥ २ ॥

रतिदास नाम का चीज (वस्तु) बेचनेवाला वैश्य रहता था और मनमानी विचरनेवाली दलाक्षी उसकी स्त्री थी ॥ २ ॥

पतिं न पूजयेद्देवि रूपगर्ववशात्तथा।
महिष्यो बहुला आसन्गावो विक्रयकारणात् ॥ ३ ॥

हे देवि ! वह अपने रूप के गर्व से अपने पति का पूजन नहीं करती थी, और उसके लेन देन के व्यापार से भैंसें और गौ बहुत हो गईं ॥ ३ ॥

महिषीपुत्रघातं च प्रत्यहं खलु जायते।
छागस्य विक्रयो नित्यं छागानां वध एव च ॥ ४ ॥

वह भैंसा का घात प्रति दिन करता था और बकरियों को बेचा करता था। तथा बकरों का भी वध किया करता था ॥ ४ ॥

गोप एको महाप्राज्ञो धनार्थी स्वर्णसंयुतः।
तत्र जातो महादेवि वैश्यमित्रं हि बाल्यतः ॥ ५ ॥

हे महादेवि ! एक अहिर बड़ा बुद्धिमान् धनी था, और छोटी उमर से ही वह वैश्य का मित्र था ॥ ५ ॥

तस्य गेहे स्थितो देवि धनधान्यसमन्वितः।
वैश्यपत्नी तदा देवि गोपं प्रति तदाऽभजत् ॥ ६ ॥

हे देवि ! उस वैश्य के घर में धन-धान्य सहित रहता था। उस वैश्य की स्त्री उस गोप से प्रेम करती थी ॥ ६ ॥

एवं बहुगते काले तस्य गोपस्य वै मृतिः।
वैश्यगेहे महादेवि धनं गोपस्य वै खलु ॥ ७ ॥

हे देवि ! इस प्रकार बहुत दिन के बाद उस अहिर की मृत्यु हो गई, और उस गोप का धन ॥ ७ ॥

वैश्येनैव तु तत्सर्वं धनं तस्य व्ययं कृतम् ।
ततः सर्वं वयो यातं वैश्यमृत्युरभूत्तदा ॥ ८ ॥

उस वैश्य ने संपूर्ण धन खर्च कर डाला फिर समय पाकर वैश्य की मृत्यु हो गई ॥ ८ ॥

गङ्गायां च विशालाक्षि पत्नी तस्य तथा मृता ।
वैश्यास्याभूत्तथा स्वर्गो वर्षषष्टिसहस्रकम् ॥ ९ ॥

हे विशालाक्षि ! उसकी स्त्री गंगा तट पर मर गई, फिर वैश्य को साठ हजार वर्ष का स्वर्गवास हुआ ॥ ९ ॥

वैश्यपत्नी ततो देवि कर्दमे नरके गता ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ १० ॥
नरकान्निःसृता सा तु सर्पयोनिं तथा गता ।
सर्पयोनिं ततो भुक्त्वा गङ्गायां मरणं खलु ॥ ११ ॥

हे देवि ! वैश्य की स्त्री ने साठहजार वर्ष तक कर्दम नरक में वास किया । नरक भोग पूरा होने पर नरक से निकलकर वह स्त्री सर्पयोनि में हुई, फिर सर्पयोनि को भोगकर गंगा पर उसकी मृत्यु हो गई ॥ १०-११ ॥

शूद्रं प्रति पुरा स्नेहस्ततः शूद्रः स चाभवत् ।
वैश्यः स्वर्गफलं भुक्त्वा मानुषत्वं ततोगमत् ॥ १२ ॥

पहले उस वैश्य ने शूद्र से प्रेम किया था, इसलिए शूद्र जाति में पैदा हुआ था और फिर स्वर्ग-फल भोगकर अपनी जाति में पैदा हुआ ॥ १२ ॥

धनधान्यसमायुक्तो रूपवानतिथेर्हितः ।
बहुधनी गुणी ज्ञानी पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ १३ ॥

वह वैश्य बहुत धनी, रूपवान्, अभ्यागत का स्वागत करनेवाला, गुणवान् और पुत्र कन्या से रहित हुआ ॥ १३ ॥

वैश्यस्य शूद्रजातित्वं पूर्वस्नेहफलं यतः ।
पत्नी सा च समायाता पूर्वसंबन्धकारणात् ॥ १४ ॥

क्योंकि पहिले शूद्र स्नेह करने से तथा शूद्रता में लीन होने के कारण उसकी स्त्री भी अपने कर्मवश मिली ॥ १४ ॥

यतो द्रव्यं समाभुक्तं सर्वं शूद्रस्य पापिना ।
ततश्चैव समुत्पन्नाः कन्या बह्व्यः सुरेश्वरि ॥ १५ ॥

हे सुरेश्वरि ! उसने शूद्र का धन शूद्र होकर भोगा था इस पाप से उसके कई कन्याएं हुईं ॥ १५ ॥

महिषीपुत्रघातित्वाद्वायुरोगादयस्तथा ।
स्वपतेर्वञ्चनं कृत्वा परपुंसि रता यतः ॥ १६ ॥

और महिषीपुत्र के मारने से वायुरोग शरीर में हुआ और उसकी स्त्री अपने पति को छोड़ परपुरुष से रमण करती थी ॥ १६ ॥

तस्मात्पुत्रस्य मरणं गर्भपातः पुनः पुनः ।
अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि वरेऽनघे ॥ १७ ॥

हे देवि ! हे वरे ! हे अनघे ! इसलिए इसके पुत्र का वारंवार मरण व गर्भपात होता है, अब इसकी शांति कहता हूँ, उसको सुनो ॥ १७ ॥

गृहवित्तषडंशेषु पुण्यं कार्यं च यत्नतः ।
वापीकूपतडागादि पथिमध्ये च कारयेत् ॥ १८ ॥

अपने धन का छठा भाग पुण्य करे और रास्ता में बावड़ी, कूप, तालाब इत्यादि बनवावे ॥ १८ ॥

शिवस्य पूजनं चैव शिवभक्तिमहर्निशम् ।
नमःशिवाय मन्त्रं च पञ्चलक्षं च जापयेत् ॥ १९ ॥

शिव का पूजन करे और शिव में रातदिन भक्ति रक्खे "ॐ नमः शिवाय" इस मंत्र का पाँच लक्ष जप करावे ॥ १९ ॥

पार्थिवाँल्लक्षसंख्याकान्पूजयेच्च यथाविधि ।

ॐ नमःशिवाय मन्त्रस्तु सर्वपापप्रणाशनः ॥ २० ॥

देहान्ते मुक्तिदश्चैव मर्त्यलोके च कामदः ।

और विधि से एक लक्ष पार्थियों का पूजन करावे । "ॐ नमः शिवाय" यह मंत्र सब पापों का नाश करनेवाला है । हे देवि ! देह के अन्त में मुक्ति देनेवाला है, और मृत्युलोक का मनोरथ सिद्ध होता है ॥ २० ॥

हवनं कारयेद्देवि कुण्डे चैव तु शोभने ॥ २१ ॥

चतुरस्त्रे विशालाक्षि तिलधान्यादितण्डुलैः ।

ताम्रवर्णां ततो देवि गां दद्याद्विदुषे प्रिये ॥ २२ ॥

हे प्रिये ! चौकुंठे सुन्दर कुंड में तिल, जौ, तंडुल आदि से होम करे, और लाल वर्णवाली गौ ब्राह्मण को दान दे ॥२१-२२॥

निष्कमात्रं तथा स्वर्णं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।

एवं कृते न संदेहो व्याधिनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥ २३ ॥

और निष्क (एक तोला) सोना ब्राह्मण को दे । ऐसा करने से अवश्य दुःख दूर होता है ॥ २३ ॥

पुत्रश्च जायते देवि पुनर्गर्भो न नश्यति ।

काकवन्ध्या पुनः पुत्रं प्रसूयेत न संशयः ॥ २४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे चित्रानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५८॥

हे देवि ! पुत्र की प्राप्ति हो, फिर गर्भ नष्ट नहीं होता और काकवन्ध्या स्त्री के भी पुत्र होता है ॥ २४ ॥

अट्ठावनवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथैकोनषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

देशे पुण्यतमे देवि प्रतिष्ठानपुरे तथा ।
ब्राह्मणो वेदविभ्रष्टस्तत्र वासमकारयत् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! 'प्रतिष्ठान' नामक पवित्र पुर में एक वेद से पतित ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

सुरामांसस्य वै भोक्ता नित्यमत्स्यामिषस्य च ।
पापकार्ये विशालाक्षि व्ययकर्ता दिने दिने ॥ २ ॥

हे विशालाक्षि ! वह प्रतिदिन मद्य पीता तथा मत्स्य-मांसादि खाता और इनको बेचता था ॥ २ ॥

तस्य स्त्री परमा नाम्नी भ्रष्टा चातीव सुन्दरी ।
परपुंसि रता नित्यं निर्भया पतिवञ्चिका ॥ ३ ॥

उसकी स्त्री का नाम परमा था, वह भी भ्रष्टा थी, और पति का कहना नहीं मानती थी, दूसरे पुरुषों से रमण किया करती थी ॥ ३ ॥

एवं सर्वं वयो यातं तयोर्मृत्युरभूत्किल ।
पुण्यक्षेत्रे च गङ्गायां देवगन्धर्वपूजिते ॥ ४ ॥

जिस देव गन्धर्वों से पूजित पवित्र क्षेत्र में गंगाजी थीं वहाँ स्त्री-पुरुष दोनों की मृत्यु हुई ॥ ४ ॥

तस्य विप्रस्य वै स्वर्गं कल्पमेकं वरानने ।
भुक्त्वा च विविधं सौख्यं देवकन्याभिरावृतः ॥ ५ ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि ।
महाढ्यकुलसंपन्ने तस्य जन्माभवत्तदा ॥ ६ ॥

हे वरानने ! उस ब्राह्मण को एक कल्प तक स्वर्गवास रहा । वहाँ अनेक भोगों को भोग देवकन्याओं से युक्त रहा, फिर

जब पुण्य नष्ट हो गया तो बड़े कुल में उसका जन्म हुआ ॥ ५-६ ॥

जन्माभवत्तस्य नरस्य शुद्धे
महत्कुले पुण्यजने धनाढ्ये ।
कान्ता तु सैव प्रबभूव या पुरा
स्थिता तदीया व्यभिचारचित्ता ॥ ७ ॥

फिर उस मनुष्य का धनी और उत्तम कुल में जन्म हुआ और वही पहलेवाली व्यभिचारिणी स्त्री फिर उसकी स्त्री हुई ॥ ७ ॥

मद्यपानादिकं पापं पूर्वजन्मनि यत्कृतम् ।
तत्फलेन महादेवि व्याधिग्रस्तस्ततोभवत् ॥ ८ ॥

हे देवि ! उसने पूर्वजन्म में जो मद्य पान आदि पाप किए थे उसका फल शरीर में रोग हुआ ॥ ८ ॥

अथ शान्ति प्रवक्ष्यामि यतः पापक्षयो भवेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ ९ ॥

हे वरानने ! अब शांति कहता हूँ जिससे पापों का क्षय हो, गायत्री के मूल मंत्र का लक्ष जप करावे ॥ ९ ॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
देवस्याराधनं नित्यं सूर्य्यस्य व्रतमाचरेत् ॥ १० ॥

और दशांश हवन, तर्पण, मार्जन और देवता का पूजन करे और सूर्य का व्रत करे ॥ १० ॥

प्रयागे नियतः स्नानं माघे मासि यथाविधि ।
पत्न्या सह विशालाक्षि ततः पापं प्रणश्यति ॥ ११ ॥

हे विशालाक्षि ! प्रयाग में विधि से नियमपूर्वक माघ महीने में स्त्रीसहित स्नान करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ ११ ॥

षडंशं च ततो देवि विप्रेभ्यो दानमाचरेत् ।
ततो वर्षेण महतीं गां च दद्यात्पयस्विनीम् ॥ १२ ॥

हे देवि ! घर के द्रव्य का छठा भाग ब्राह्मण को दान करे। और दूधवाली उत्तम गौ का भी दान दे ॥ १२ ॥

भूमिं वृत्तिकरीं दद्यात्पुत्रपौत्रानुजीविनीम् ।
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ॥ १३ ॥

ब्राह्मण को भूमि का दान दे जिससे ब्राह्मण और उसके वंश का हमेशा निर्वाह हो, ऐसा करने से वंश की वृद्धि होती है, यह सत्य है ॥ १३ ॥

रोगार्तो मुच्यते रोगात्काकवन्ध्या सुतं लभेत् ।
गर्भभ्रष्टा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे चित्रानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥५९॥

ऐसा करे तो रोगी रोग से छूटे, काकवंध्या के पुत्र हो और मृतवत्सा के भी चिरंजीवी पुत्र हो ॥ १४ ॥

उनसठवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ षष्टिमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कान्यकुब्जे महादेवि राजाप्येकोऽवसत्पुरा ।
राजधर्मरतः शान्तः प्रजापालनतत्परः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! कान्यकुब्ज देश में एक राजा बसता था। वह राजधर्म में दृढ़, शांतरूप और प्रजापालक था ॥ १ ॥

रुद्रधर्मेति विख्यातो भार्या तस्य प्रभावती ।
एकस्मिन्दिवसे देवि ब्राह्मणो भयपीडितः ॥ २ ॥
शरणं श्रावयामास शरणार्थी द्विजोत्तमः ।
तस्य भार्या महादेवि सुरूपाप्यतिसुन्दरी ॥ ३ ॥

हे देवि ! रुद्रधर्म नामक ब्राह्मण और उसकी स्त्री प्रभावती थी। वह अति सुंदरी थी । उस ब्राह्मण ने एक दिन भय से अपनी रक्षा के लिए किसी राजा से शरण के लिए प्रार्थना की ॥२-३॥

राजपुत्रेण तस्यां तु गमनं मोहतः कृतम् ।
शरणं दत्तवान् राजा पुत्रस्नेहेन यन्त्रितः ॥ ४ ॥

फिर उस स्त्री के संग राजपुत्र ने मूढ़ता से गमन किया और उस राजा ने पुत्र के स्नेह से बँधकर शरण दान किया ॥ ४ ॥

एवं बहुगते काले नृपस्य मरणं यदा ।
तदा यमाज्ञया दूतैः क्षिप्तो नरककर्दमे ॥ ५ ॥

इस प्रकार बहुत काल व्यतीत होने पर राजा का मरण हुआ तब यमराज की आज्ञा से दूतों ने उसको कर्दमसंज्ञक नरक में डाला ॥ ५ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि नरके परिपच्यते ।
नरकान्निःसृतो देवि शूकरत्वं ततोऽलभत् ॥ ६ ॥

साठ हजार वर्ष पर्यन्त नरक में दुःखों को भोग कर फिर नरक से निकल कर शूकर की योनि में हुआ ॥ ६ ॥

पुनः शृगालयोनिं च मानुषत्वं ततोऽगमत् ।
धनधान्यसमायुक्तो बहुशो गुणवानपि ॥ ७ ॥

फिर गीदड़ की योनि को प्राप्त होकर मनुष्ययोनि में जन्म लिया और धनधान्य एवं अनेक गुणों से युक्त हुआ ॥ ७ ॥

पुनर्विवाहिता जाता पत्नी तस्य प्रभावती ।
पूर्वकर्मफलाद्देवि तस्य पुत्रो न जायते ॥ ८ ॥

हे देवि ! उसका फिर उसी प्रभावती के साथ विवाह हुआ, पर पूर्वजन्म के कुकर्मों से पुत्र नहीं पैदा होता ॥ ८ ॥

शरीरं सततं देवि ज्वरेणैव प्रपीडितम् ।
वातपित्तकफानां च सम्भवः स्याद्वयोगते ॥ ९ ॥

हे देवि ! उसका शरीर निरंतर ज्वर से पीड़ित रहता है और अवस्था बीतने पर वात, पित्त और कफादि रोगों से भी पीड़ित होगा ॥ ९ ॥

अस्य दानं शृणु त्वं हि यथा पापक्षयस्तथा ।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १० ॥

जिस प्रकार पाप नष्ट हो उस प्रकार इसका दान कहता हूँ सुनो । अपने घर के द्रव्य में से आठवाँ भाग पुण्य कर दे ॥ १० ॥

वापीकूपतडागानां जीर्णोद्धारं यदा भवेत् ।
तदा पापं क्षयं याति पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥ ११ ॥

और बावड़ी, कूप, तालाब इत्यादि फूटे टूटों को बनवावे, तब पहले जन्म के किये हुये पाप का नाश होता है ॥ ११ ॥

विष्णोरराटमन्त्रेण जपं कुर्याद्विचक्षणः ।
दद्याद्गां वेदविदुषे सवत्सां चैव शोभने ॥ १२ ॥

हे शोभने ! बुद्धिमान् मनुष्य "विष्णोरराट०" इस मंत्र का जप करवावे तथा वेद पढ़े हुये ब्राह्मण को बछड़ा युक्त गौ का दान दे ॥ १२ ॥

वस्त्ररत्नसमायुक्तां घण्टाचामरभूषिताम् ।
ग्रहणेर्कहिमांश्वोश्च काश्यां स्नानं समाचरेत् ॥ १३ ॥

और उस गौ को वस्त्र तथा घंटा चमर आदि भूषणों के सहित चंद्रमा और सूर्य के ग्रहण में दे और काशीजी में स्नान करे ॥ १३ ॥

निष्कत्रयसुवर्णस्य कमलं कारयेत्ततः ।
ब्राह्मणाय वरारोहे प्रदद्यात्कमलं शुभम् ॥ १४ ॥

हे वरारोहे ! तीन निष्क (तीन तोला) प्रमाण सुवर्ण का एक कमल बनवाकर ब्राह्मण को दे ॥ १४ ॥

एवं कृते वरारोहे सर्वपापक्षयो भवेत् ।
अपि वन्ध्या लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे स्वाति-नक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥

हे वरारोहे ! ऐसा करने से सर्वपाप नाश होते हैं और वंध्या के भी उत्तम चिरंजीवी पुत्र होता है और सब रोग दूर होते हैं इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १५ ॥

साठवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथैकषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गङ्गाया दक्षिणे कूले विन्ध्ये च नगरोत्तमे ।
द्विजोप्येकोऽवसद्देवि ब्रह्मकर्मविवर्जितः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! गंगाजी के दक्षिण किनारे पर विन्ध्य पर्वत के पास एक उत्तम नगर था, वहाँ ब्रह्मकर्म से रहित एक ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

अनाचाररतो नित्यं परस्त्रीलम्पटः शठः ।
व्यापारं कुरुते नित्यं गोहिरण्यगजादिकम् ॥ २ ॥

वह आचार से रहित, परस्त्रीगामी तथा महामूर्ख था और गौ, सोना, हाथी आदि का व्यापार करता था ॥ २ ॥

बहुद्रव्यमभूत्तस्य त्रिंशत्कोटिप्रमाणकम् ।
द्रव्यस्य संग्रहं नित्यं न च किञ्चिद्ददाति सः ॥ ३ ॥

उसने तीन करोड़ से भी अधिक द्रव्य का संग्रह किया पर किसी को कुछ भी दान न देता था ॥ ३ ॥

स्वभार्यां च परित्यज्य परभार्यरतो द्विजः ।
धनेश्वर इति ख्यातं तस्य नाम पुराभवत् ॥ ४ ॥

वह अपनी स्त्री को छोड़कर पराई स्त्री से स्नेह और रमण करता था और धनेश्वर नाम से प्रसिद्ध हो गया था ॥ ४ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ।
यमदूतेन वै बद्ध्वा निक्षिप्तो नरकार्णवे ॥ ५ ॥

इस प्रकार बहुत सा काल व्यतीत होने पर उसकी मृत्यु हुई, और यमराज के दूतों ने उसको बाँधकर नरकरूपी समुद्र में डाल दिया ॥ ५ ॥

महाघोरे सुरश्रेष्ठे कल्पमेकं तदाऽवसत् ।
पुनर्व्याघ्रस्य योनिं च वृषयोनिं ततोऽलभत् ॥ ६ ॥

हे सुरश्रेष्ठे ! वह महाघोर नरक में एक कल्पपर्यन्त वास करता रहा, फिर व्याघ्र की योनि को प्राप्त होकर वहाँ से निकल बैल की योनि में प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

पुनर्मानुषयोनिं च मृतवत्सत्वमाप्तवान् ।
महारोगसमायुक्तो न सुखं लभते क्वचित् ॥ ७ ॥

फिर मनुष्य की योनि को प्राप्त हुआ है और बच्चों की मृत्यु देखता हुआ महारोगों से घिरा सदा सुख से वंचित रहता है ॥ ७ ॥

अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण दशलक्षजपं यदा ॥ ८ ॥

हे देवि ! हे वरानने ! इसकी शांति कहता हूँ सुनो, गायत्री मूल मंत्र का दशलक्ष जप करावे ॥ ८ ॥

दशांशहवनं चैव तदा पापक्षयो भवेत् ।
गोविन्दस्य सदा ध्यानं सदा गोविन्दकीर्तनम् ॥ ९ ॥
नित्यं तु पूजयेद्देवं शङ्खचक्रगदाधरम् ।
पीताम्बरधरं श्यामं श्रीवत्सेन विराजितम् ॥ १० ॥

और दशांश होम करवावे, तब पाप क्षय होता है । और प्रति दिन गोविंद का ध्यान तथा कीर्तन करे । शंख, चक्र, गदा, पद्म और पीताम्बर को धारण करनेवाले श्यामरूप लक्ष्मीसहित विष्णुदेव का पूजन करे ॥ ९-१० ॥

प्रत्यब्दं कार्त्तिके मासि तुलसीं विष्णुरूपिणीम् ।
पूजयेद्दीपदानं च दद्याद्भार्यासमन्वितः ॥ ११ ॥

और प्रतिवर्ष कार्त्तिक महीने में विष्णुरूपी तुलसी का पूजन करे, और स्त्रीसहित दीप दान करे ॥ ११ ॥

गोदानं शास्त्ररीत्या च गोदानाच्च वसुन्धराम् ।
यथाशक्ति च भो देवि ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥ १२ ॥

हे देवि ! शास्त्र की रीति से गौ तथा भूमि का दान शिव-भक्त ब्राह्मण को यथाशक्ति दे ॥ १२ ॥

एवं कृते न संदेहः पूर्वजन्मकृतं च यत् ।
तत्पापं नाशमायाति सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥ १३ ॥

ऐसा करने से पूर्वजन्म का पाप दूर होता है, और सब पाप नष्ट होकर सब रोगों का नाश हो जाता है इसमें संदेह नहीं है ॥ १३ ॥

वन्ध्यात्वं प्रशमं याति पुत्रलाभो भवेद् ध्रुवम् ।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे स्वातिनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

और वंध्यापन किंवा काकवन्ध्या दोष नष्ट होकर अवश्य पुत्र प्राप्त होता है, इसमें संदेह नहीं ॥ १४ ॥

इकसठवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ द्विषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कुरुक्षेत्रे महातीर्थे वल्लवो न्यवसत्प्रिये ।
कृषिकर्मरतो नित्यं क्रयविक्रयतत्परः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! कुरुक्षेत्र तीर्थ में एक गोप रहता था, और वह कृषिकर्म तथा पशुओं को बेचने और लेन-देन का काम करता था ॥ १ ॥

महिषीगोवृषाणां च सङ्ग्रहं चाकरोद्बहु ।
तस्य भार्या वरारोहे परपुंसि रता सदा ॥ २ ॥

हे वरारोहे ! वह भैंस, गौ, बैल इनका बहुत संग्रह किया करता, और उसकी स्त्री दूसरे में रमण किया करती थी ॥ २ ॥

स्वपतिं तर्जयेन्नित्य सदा निष्ठुरभाषणात् ।
सङ्ग्रहो बहुद्रव्याणां दानं न दत्तवान् क्वचित् ॥ ३ ॥

वह नित्य अपने पति को फटकारती और सदा कठोर वचन कहती थी। और उसके बड़ा धन था लेकिन कभी उसने दान नहीं किया ॥ ३ ॥

एकस्मिन् दिवसे देवि चन्द्रपर्वणि शोभने ।
दशसंख्यं च गोदानं कृतं क्षेत्रे तदा किल ॥ ४ ॥

हे शोभने ! एक दिन चन्द्रग्रहण में उसने महाक्षेत्र में दश गौवों का दान किया ॥ ४ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ।
यमदूतेन भो देवि निक्षिप्तो नरके किल ॥ ५ ॥

हे देवि ! बहुत समय बीत चुकने के बाद उसकी मृत्यु हो गई तब यमराज के दूतों ने नरक में डाल दिया ॥ ५ ॥

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
पुनर्माहिषयोन्यां च जातः खलु वरानने ॥ ६ ॥

हे वरानने ! तब तीस हजार वर्षों तक नरक के दुःखों को भोगकर फिर भैंस की योनि में हुआ ॥ ६ ॥

नरयोनिं पुनर्लेभे धनधान्यसमन्वितः ।
जातः खलु वरारोहे पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ७ ॥

हे वरारोहे ! फिर धन आदि से पूर्ण मनुष्ययोनि में पैदा हुआ। परन्तु इसके पुत्र और कन्या नहीं थी ॥ ७ ॥

रोगवान्नात्र संदेहो जङ्घापीडा ततोधिका ।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं च यथायथम् ॥ ८ ॥

वह रोगी था, और जंघों में अधिक दर्द रहती थी। अब इसकी शांति कहता हूँ, ध्यान से सुनो ॥ ८ ॥

षडंशं च ततो दानं विप्राय विदुषे तथा ।
गायत्रीलक्षजाप्यं च ततो होमं प्रकल्पयेत् ॥ ९ ॥

अपने घर के धन का छठा भाग विद्वान् ब्राह्मण को दे, और एक लक्ष गायत्री का जप तथा दशांश हवन करावे ॥ ९ ॥

दशांशं तर्पणं कुर्यात्तद्दशांशं च मार्जनम् ।
गामेकां कपिलां दद्यात् स्वर्णशृङ्गीं सहाम्बराम् ॥ १० ॥

दशांश तर्पण तथा मार्जन करे और एक कपिला गौ का सुवर्ण शृङ्ग और वस्त्रादिसहित दान दे ॥ १० ॥

ब्राह्मणान्पञ्चपञ्चाशत् पक्वान्नेन च भोजयेत् ।
पञ्चपात्राणि दद्याद्वै शय्यादानं यथाविधि ॥ ११ ॥
दशवर्णाः प्रदातव्या ब्राह्मणेभ्यो यथाविधि ॥ १२ ॥

५५ ब्राह्मणों को पक्वान्न भोजन करावे । विधि से शय्यादान तथा पाँच पात्रों का दान दे, और यथाविधि दशवर्णोंवाली गौ का दान ब्राह्मणों को दे ॥ ११-१२ ॥

एवं कृते न सन्देहः शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे स्वातिनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥

ऐसा करने से जल्दी पुत्र की प्राप्ति होती है और सब रोगों का नाश होता है, इसमें विचार नहीं करना चाहिये ॥ १३ ॥

बासठवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ त्रयष्षष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

हस्तिना नगरं ख्यातमासीज्जन्तुमनोहरम् ।
अवसंस्तत्र भो देवि ! नराः सर्वे विचक्षणाः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! हस्तिनापुर नगर प्रसिद्ध था, उसमें सभ्य-सुन्दर मनुष्य अति चतुर निवास करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये शूद्र एको हि धर्मात्मा ज्ञानवानपि ।
स्वधर्मकर्मणः कृत्वा व्ययकर्त्ता दिने दिने ॥ २ ॥

उस नगर में धर्मात्मा, ज्ञानी एक शूद्र वास करता था और अपना धन धर्म-कर्म में खर्च किया करता था ॥ २ ॥

तस्य पुत्रद्वयं जातं शठं पापयुतं सदा ।
प्रत्यहं जीवघातेन मद्यवेश्यारतौ च तौ ॥ ३ ॥

उसके पापी दो पुत्र हुए वे प्रतिदिन जीवहिंसा तथा मद्यपान और वेश्यासंग में मस्त रहते थे ॥ ३ ॥

द्यूतेनैव महादेवि राजा वह्निश्च जक्षतः ।
न च वारयितुं शक्यौ शूद्रेणैतौ तदा शिवे ॥ ४ ॥

हे देवि ! उसके दोनों पुत्र रात-दिन जुआ खेला करते थे। अपने दोनों पुत्रों की आदत को शूद्र भी नहीं हटा सका ॥ ४ ॥

ततस्तु दैवयोगेन प्रयागे शूद्र आगतः ।
मासमेकं ततः स्थित्वा तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ५ ॥

तब दैवयोग से वह शूद्र प्रयाग में आया, वहाँ एक महीने के बाद उसकी मौत हो गई ॥ ५ ॥

विष्णुदासांस्तदा लब्ध्वा मृत्युलोके वरानने ।
विमानवरमारूढो गतः स्वर्गं वरानने ॥ ६ ॥

वह मृत्युलोक में विष्णुभक्तों के साथ श्रेष्ठ विमानों में बैठकर स्वर्ग में चला गया ॥ ६ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षि मृत्युलोके सुरेश्वरि ।
सा जाता विधवा नारी किञ्चित्काले गते सति ॥ ७ ॥

परपुंसि रता जारे प्रत्यहं व्यभिचारिणी ।
ततो बहुगते काले तस्या मृत्युरभूत्किल ॥ ८ ॥

हे विशालाक्षि ! उसकी स्त्री सुन्दर नेत्रोंवाली विधवा हो गई, कुछ दिन बीतने के बाद, वह स्त्री जारकर्म में परपुरुषों से व्यभिचार करती रही । इस तरह बहुत दिनों के बाद उसकी भी मृत्यु हो गई ॥ ७-८ ॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्ता नरके तदा ।
विंशत्यब्दसहस्राणि नरके संप्रपीडिता ॥ ९ ॥

तब यम के दूतों ने महाघोर नरक समुद्र में डाल दिया और उसने बीसहजार वर्षपर्यंत नरक में दुःख भोगा ॥ ९ ॥

शूद्रः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि ।
जन्म संप्राप्तवान्देवि मध्यदेशे सुरेश्वरि ॥ १० ॥

हे सुरेश्वरि ! पुण्यक्षीण होने पर मृत्युलोक में शूद्र का जन्म मध्यदेश में हुआ ॥ १० ॥

तदा सा तु भवेन्नारी या पुरा व्यभिचारिणी ।
पूर्वजन्मप्रसङ्गाच्च वंशच्छेदो हि जायते ॥ ११ ॥

इसकी स्त्री पहले व्यभिचारिणी थी इसलिए पूर्वजन्म के प्रभाव से संतानहीन हुई ॥ ११ ॥

रोगश्च जायते देवि कष्टं चैव दिने दिने ।
अस्य पापस्य वै शान्तिं तत्समासेन मे शृणु ॥ १२ ॥

हे देवि ! इसलिए प्रतिदिन शरीर में दुःख तथा रोग हुआ है, अब इसके पाप की शांति को कहता हूँ सुनो ॥ १२ ॥

स्वर्णवृक्षवरं कृत्वा स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम् ।
फलपुष्पसमायुक्तं पलपञ्चदशस्य तु ॥ १३ ॥
तस्य वृक्षस्य वै मूले शालग्रामशिलां शुभाम् ।
पूजयित्वा विधानेन विष्णुरूपं वरानने ॥ १४ ॥

ब्राह्मणाय ततो दद्याद् गां च दद्यात्पयस्विनीम् ।
गायत्रीमन्त्रजाप्यं तु लक्षमेकं तु कारयेत् ॥ १५ ॥

हे वरानने ! पंद्रह पल अपने अँगूठे के प्रमाण का उत्तम सुवर्ण वृक्ष बनवाकर और फल तथा पुष्पों के साथ उस वृक्ष के जड़ में विष्णुरूपी शालग्राम की मूर्ति का विधान से पूजन करके उस वृक्ष को दूधवाली गौ के सहित ब्राह्मण को दान दे और गायत्री-मंत्र का एक लक्ष जप करावे ॥ १३-१५ ॥

ततः पापविशुद्धिः स्यात्पुत्रो भवति नान्यथा ।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां स्वातिनक्षत्रस्य चतुर्थचरण-प्रायश्चित्तकथनन्नाम त्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

तब पाप से शुद्ध हो करके पुत्र संतान हो और सब रोग दूर हों, और काकवंध्या भी पुत्र प्राप्त करे ॥ १६ ॥

तिरसठवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ चतुःषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कपिले नगरे देवि क्षत्री वै न्यवसत्पुरा ।
क्षत्रधर्मविहीनश्च वैश्यकर्मरतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! पहले कपिल नगर में एक क्षत्रिय वास करता था। वह क्षत्रिय धर्म से रहित था और वैश्य कर्म अर्थात् व्यापार करता था ॥ १ ॥

प्रत्यहं वैश्यवृत्या तु व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।
बहु द्रव्यं तदा तेन सञ्चितं त्यक्तधर्मणा ॥ २ ॥

उसने अपना धर्म त्यागकर वैश्यवृत्ति में व्यापार द्वारा बहुत सा धन इकट्ठा किया ।। २ ।।

महालोभेन संयुक्तो धर्मचर्चा न कुत्रचित् ।
पत्नीपुत्राय भोगार्थं नादात्कृपणकेसरी ।। ३ ।।

वह महालोभी था इसलिए कभी भी धर्म की चर्चा नहीं की, और अपनी स्त्री व पुत्र को भी खर्च के लिए कुछ नहीं देता था—ऐसा कंजूस था ।। ३ ।।

एवं बहुगते काले मरणं सर्पतस्तदा ।। ४ ।।

बहुत दिनों के बाद साँप काटने से उसकी मौत हो गई ।।४।।

आसीत्तदीयप्रमदापि तादृक्
यतो जनो योग्यमुपैति सर्वम् ।
यथार्थतः क्षिप्तमतीवदुःखे
यमस्य दूतैः कृतपादश्शृङ्खलः ।। ५ ।।

और उसकी स्त्री भी वैसी ही थी क्योंकि जो जिस धर्म में रहता है उसको वैसा ही होता है । यमराज के दूतों ने पैरों में बेड़ी डालकर वैश्य को महाघोर नरकसमुद्र में डाला ।। ५ ।।

युगमेकं वरारोहे कष्टं भुक्त्वा सुदारुणम् ।
ततोऽभूत्स ततो देवि महिषी वृषभो हयः ।। ६ ।।

हे वरारोहे ! उसने एक युग तक नरक के दुःखों को भोगा फिर भैंस की योनि में फिर बैल की योनि प्राप्त होकर बाद में घोड़े की योनि में पैदा हुआ ।। ६ ।।

पुनश्च मानुषो भूत्वा तस्य भार्या च या पुरा ।
विवाहिता च सा देवि तस्य पुत्रो न जायते ।। ७ ।।

हे देवि ! फिर मनुष्ययोनि में पैदा हुआ और पहलेवाली स्त्री फिर विवाही गई, लेकिन पुत्र संतान न हुई ।। ७ ।।

पुरा ह्येकाभवत्कन्या पुनः सूतिविवर्जिता ।
रोगो भवति देहे च मध्ये मध्ये ज्वरो भवेत् ॥ ८ ॥

पहले एक कन्या संतान हुई थी फिर गर्भ न रहा, और देह में रोग तथा बीच-बीच में ज्वर की पीड़ा होती रही ॥ ८ ॥

अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ।
कल्पवृक्षवरं कुर्यात् स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम् ॥ ९ ॥
सुवर्णस्य महादेवि पलपञ्चदशस्य तु ।
वेदीं रौप्यमयीं कुर्यात् पलपञ्चदशस्य तु ॥ १० ॥

हे देवि ! अब इसकी शांति कहता हूँ सुनो । एक अंगुष्ठ के बराबर पन्द्रह पल सोने का कल्पवृक्ष बनावे और पंद्रह पल चाँदी की वेदी बनवावे ॥ ९-१० ॥

तत्र वृक्षं समारोप्य फलपुष्पेण संयुतम् ।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां च सुरेश्वरि ॥ ११ ॥
तस्य वृक्षस्य वै मूले वृषकेतुं सुरेश्वरि ।
सगणं देवमीशानमर्चयित्वा यथाविधि ॥ १२ ॥

हे सुरेश्वरि ! फल पुष्प सहित उस वृक्ष को स्थापनकर अष्टमी, चतुर्दशी तथा नवमी के दिन वृक्ष के मूल में यथाविधि गणों सहित महादेव का पूजन करे ॥ ११-१२ ॥

यथाशक्ति वरारोहे गन्धधूपादिभिस्तथा ।
साष्टाङ्गदण्डवत्तत्र देवदेवं समापयेत् ॥ १३ ॥

हे वरारोहे ! यथाशक्ति गंधधूपादिक से पूजन करे और महादेव को साष्टांग प्रणामकर पूजन समाप्त करे ॥ १३ ॥

मन्त्रेणानेन भो देवि विसर्जनमथाचरेत् ।
ॐ नमः शिवाय देवाय शिवायै सततं नमः ॥ १४ ॥

हे देवि ! "ॐ नमः शिवाय देवाय शिवायै सततं नमः" इस मंत्र से पार्वती और महादेव का विसर्जन करे ॥ १४ ॥

मम पूर्वकृतं पापं जन्मजन्मसमुद्भवम् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव देव्या सह महेश्वर ॥ १५ ॥

हे देव ! हे महेश्वर ! देवि सहित आप मेरे जन्म-जन्म के पापों को दूर करो ॥ १५ ॥

ततौ वै पूजयेद्विप्रं वेदब्रह्मस्वरूपिणम् ।
पट्टवस्त्राद्यलङ्कारैर्विविधैर्मोदकैरपि ॥ १६ ॥

फिर वेदज्ञ ब्रह्मरूप ब्राह्मण का अनेक प्रकार के पट्ट वस्त्रादि अलंकार तथा नाना प्रकार के मोदकों से पूजन करे ॥ १६ ॥

ततो वृक्षं च वेदीं च कपिलां गां सवत्सकाम् ।
ब्राह्मणाय ततो दद्यात् पूर्वपापविशुद्धये ॥ १७ ॥

फिर पूर्व पाप की शुद्धि के लिये वेदी सहित वृक्ष और बछड़े सहित कपिला गौ ब्राह्मण को दे ॥ १७ ॥

भक्त्या मम महादेवि शिवरात्र्यां विशेषतः ।
आजन्ममरणाद्देवि व्रतं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ १८ ॥

हे महादेवि ! भक्ति से शिवरात्रि के दिन विशेषतौर से जन्म से मरणपर्यन्त मेरा व्रत करे ॥ १८ ॥

एवं कृते महादेवि शीघ्रम्पुत्रः प्रजायते ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति वन्ध्या च लभते सुतम् ॥ १९ ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ २० ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे विशाखा-नक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चतुष्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

हे देवि ! ऐसा करने से जल्दी पुत्र की प्राप्ति होती है और सब रोग नाश होते हैं और वंध्या भी पुत्र को प्राप्त होती है । मृतवत्सा के चिरंजीवी पुत्र होता है ॥ १९-२० ॥

चौंसठवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

विष्णुकांच्यां महादेवि ब्राह्मणो वेदपारगः ।
अत्याचाररतः शान्तो विष्णुभक्तिपरायणः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे महादेवि ! विष्णुकांचीपुरी में एक वेदपाठी ब्राह्मण अपने आचार में रत, शांतस्वभाव, विष्णुभक्ति में परायण उत्पन्न हुआ ॥ १ ॥

लक्षितो विष्णुचक्रेण विप्रो विद्याविवर्जितः ।
न वेदः पाठ्यते तेन न विप्रः स्पृश्यते क्वचित् ॥ २ ॥

और वह ब्राह्मण विष्णुचक्र से चक्राङ्कित और ब्रह्मविद्या से रहित, वेद न पढ़ानेवाले ब्राह्मण को कभी नहीं छूता था ॥ २ ॥

द्विजानां स्मार्तवृत्तीनां विद्वेषं च करोति सः ।
शिवशक्तिरतानां च नाभिवादनमाचरेत् ॥ ३ ॥

वह ब्राह्मण स्मार्त वृत्तिवाले ब्राह्मणों से वैरभाव रखता था, और शिवभक्तिवालों को नमस्कार भी नहीं करता था ॥ ३ ॥

एवं वयोगते देवि वृद्धे जाते वरानने ।
मरणं तस्य वै जातं ब्राह्मणस्य वरानने ॥ ४ ॥

हे देवि ! इस प्रकार सारी अवस्था व्यतीत होने पर उसकी मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितस्तदा ।
रौरवे च तदा देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥

और उसको यमदूतों ने साठहजार वर्षों तक महाघोर नरक तथा रौरव नरक में पटक दिया ॥ ५ ॥

भुक्त्वा नरककष्टं च पुनर्जातः सरीसृपः ।
मानुषत्वं पुनर्जातः कष्टानि विविधानि च ॥ ६ ॥

तब वह नरक के दुःखों को भोगकर बिच्छू की योनि को प्राप्त हुआ, फिर अनेक कष्टों से मनुष्ययोनि में हुआ है ॥ ६ ॥

पुत्रस्य मरणं कान्ते प्रतिवर्षं महाव्यथा ।
पुनः स्त्री काकवन्ध्या स्यात्पूर्वजन्मप्रसंगतः ॥ ७ ॥

हे कान्ते ! इस प्रकार ब्राह्मण के प्रतिवर्ष पुत्र का मरण तथा दुःख होता रहा । और उसकी स्त्री पूर्वजन्म के प्रसंग से काकवंध्या हुई ॥ ७ ॥

धनधान्यसमायुक्तोप्येवं दुःखं महद्भवेत् ।
अथ वक्ष्ये महादेवि पूर्वपापस्य निष्कृतिम् ॥ ८ ॥

हे देवि ! धनधान्य से युक्त हो करके भी दुःखों को प्राप्त हुआ अब इसके पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि को कहता हूँ, सुनो ॥ ८ ॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये ।
निष्कत्रयसुवर्णस्य कमलं निर्मितं शुभम् ॥ ९ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म पाप की शुद्धि के लिए तीन निष्कप्रमाण सुवर्ण का कमल बनाकर ब्राह्मण को दान कर दे ॥ ९ ॥

दद्याद्वेदविदे देवि ब्राह्मणाय शुभार्थिने ।
अष्टांशं विभवं देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १० ॥

हे देवि ! शुभार्थी वेदवेत्ता ब्राह्मण को अपने घर के द्रव्य का आठवाँ भाग दान कर दे ॥ १० ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां दशायुतजपं तथा ।
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥ ११ ॥

"गायत्री" तथा "जातवेद सुनवाम०" इस मंत्र का एकलक्ष जप करावे और कुम्हड़ा वा नारियल को पंचरत्न सहित गंगाजी में दान करे ॥ ११ ॥

एवं कृते भवेद्देवि पूर्वपापविशुद्धता ।
पुत्रं चैव लभेद्देवि चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १२ ॥

हे देवि ! ऐसा करने से पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि होती है और उत्तम चिरंजीवी पुत्र होता है ॥ १२ ॥

व्याधयः प्रशमं यान्ति ज्वराः सर्वे तथाविधाः ।
काकवंध्या लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे विशाखानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५॥

इस प्रकार सब व्याधियों का नाश तथा सब ज्वरों का क्षय होता है, और काकवंध्या स्त्री के भी चिरंजीवी पुत्र होता है ॥ १३ ॥

पैंसठवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ षट्षष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

विदर्भनगरे देवि क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा ।
तेजवर्मेति विख्यातो द्विजानां वृत्तिहारकः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! पहले विदर्भपुर में एक क्षत्रिय वास करता था । उसका नाम तेजवर्मा था, वह ब्राह्मणों की जीविका हरनेवाला था ॥ १ ॥

प्रजानां दुःखदो नित्यं वेदानां चैव निन्दकः ।
तस्य त्रासवशात्सर्वाः प्रजा ग्रामात्पलायिताः ॥ २ ॥

प्रजा को नित्य दुःख देनेवाला, और देवों की निन्दा करनेवाला था । उसके त्रास से सब प्रजा दुःखी होकर ग्राम से बाहर चली गई ॥ २ ॥

एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ।
यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तो नरके ततः ॥ ३ ॥

इस तरह बहुत दिन बीत जाने पर उस क्षत्रिय की मृत्यु हो गई फिर उसको यमराज के दूतों ने महाघोर नरकसमुद्र में डाल दिया ॥ ३ ॥

द्विसप्ततिसहस्राणि घोरे नरककर्दमे ।
भुक्तं नरककष्टं च सूचीमुखसमुद्भवम् ॥ ४ ॥
नरकान्निर्गतो देवि गर्दभत्वं ततोऽगमत् ।
रासभत्वात्ततो देवि मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ५ ॥

हे देवि ! वह बहत्तर हजार वर्षों तक नरक में रहा, वहाँ सूचीमुख नरक को भोगा । फिर नरक से निकल कर गदहे की योनि में हुआ, और वहाँ से फिर मनुष्ययोनि में हुआ है ॥४-५॥

तस्य भार्याभवद् वंध्या पूर्वजन्मफलाच्छिवे ।
तस्माद्गात्रे भवेद्रोगो दद्रुरर्शादयस्तथा ॥ ६ ॥

और उसकी स्त्री पहले जन्म के प्रसंग से वंध्या हुई । तथा उसके शरीर में दाद बवासीर इत्यादि रोग हुए ॥ ६ ॥

न सुखं लभते देवि चिन्तया व्याकुलेन्द्रियः ।
शृणु सर्वं वरारोहे पूर्वपापस्य निग्रहे ॥ ७ ॥

हे देवि ! वह चिंता से व्याकुल रहता था, उसको कुछ भी सुख नहीं मिला । अब उस पाप की शांति कहता हूँ सुनो ॥ ७ ॥

दशांशं विभवं देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
वापीकूपतडागादि पथिमध्ये च कारयेत् ॥ ८ ॥

हे देवि ! अपने घर के धन का दशांश ब्राह्मण को दे और रास्ता के मध्य में बावड़ी, कूप और तालाब आदि बनवाये ॥ ८ ॥

गृहदानं ततो देवि सर्ववस्तुसमन्वितम् ।
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय वराय च ॥ ९ ॥

हे देवि ! सब वस्तुओं के सहित घर का संकल्प करके वेदपाठी ब्राह्मण को घर का दान दे ॥ ९ ॥

आकृष्णेति जपं देवि लक्षमेकं च कारयेत् ।
होमं कुर्यादद्रिसुते तिलाज्यमधुतण्डुलैः ॥ १० ॥

हे देवि ! "आकृष्णेन०" इस मंत्र का एक लक्ष जप करवावे, और तिल, घृत, चावल का होम करवावे ॥ १० ॥

ततो गां कपिलां देवि ब्राह्मणाय प्रपूजिताम् ।
प्रदद्याद्विधिवच्चैव सर्वालङ्कारभूषिताम् ॥ ११ ॥

हे देवि ! फिर वस्त्रादि अलंकार सहित कपिला गौ का विधि से पूजन करके ब्राह्मण को दान दे ॥ ११ ॥

सुवर्णनिष्कमात्रं तु ब्राह्मणाय ततो ददेत् ।
एवं कृते वरारोहे रोगनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥ १२ ॥

हे वरारोहे ! एक निष्क सुवर्ण का दान ब्राह्मण को दे, ऐसा करने से निश्चय रोगों का नाश होता है ॥ १२ ॥

पुत्रश्च जायते देवि वंध्यात्वं च प्रणश्यति ।
काकवंध्या लभेत्पुत्रं नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे विशाखानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६॥

हे देवि ! पुत्र होता है, वंध्यापन दूर होता है, काकवंध्या भी पुत्र को प्राप्त होती है, इसमें कुछ संदेह नहीं करना चाहिये ॥ १३ ॥

छाछठवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ सप्तषष्ठितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मायापुर्यां महादेवि क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा ।
स शूरश्च धनी मानी देवताऽतिथिपूजकः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि ! मायापुरी में पहिले एक क्षत्रिय बसता था वह शूरवीर, धनी-मानी देवता और अतिथियों का पूजन करनेवाला था ॥ १ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षी शतानाम्नी वराङ्गना ।
ब्राह्मणातिथिदेवानां पूजने चातितत्परा ॥ २ ॥

उसकी स्त्री सुन्दर नेत्रोंवाली शता नामक थी, वह अच्छे अंगवाली, ब्राह्मण, अतिथि, देवता का पूजन करनेवाली थी ॥ २ ॥

एकस्मिन् समये देवि हेमकारः समागतः ।
धनाढ्यः स्वर्णसंयुक्तो गृहे तस्यावसत्स च ॥ ३ ॥

हे देवि ! एक दिन वहाँ सुनार आया और अपने धन सोने सहित उसने क्षत्रिय के घर में वास किया ॥ ३ ॥

क्षत्रियाय स्वमित्राय शतं स्वर्णस्य वै पलम् ।
प्रदत्तं हेमकारेण चान्यत्स्वर्णं सर्मापितम् ॥ ४ ॥

उस सुनार ने अपने मित्र क्षत्रिय को सौ पल सोना तथा और भी अपना सारा सुवर्ण दे दिया ॥ ४ ॥

अत्रान्तरे महादेवि स्वर्णकारस्ततो मृतः ।
दष्टः सर्पेण तीव्रेण पुत्रहीनः सुवर्णकृत् ॥ ५ ॥
स्वर्णं सर्वं गृहीत्वा तु प्रभुक्तं क्षत्रियेण तत् ।
पुत्रदारयुते जाते न दत्तं तद्द्विजाय च ॥ ६ ॥

हे देवि ! इतने ही में वह सुनार साँप काटने से मर गया । वह सुनार पुत्रादि से हीन था, और वह क्षत्रिय सारा

सुनार का सोना लेकर पुत्र स्त्री सहित उसका भोग करता था। उसने ब्राह्मण को कुछ भी दान नहीं दिया ॥ ५-६ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल।
क्षत्रियस्य महादेवि सुरलोकस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

हे देवि ! तब बहुत काल व्यतीत होने पर उस क्षत्रिय की मृत्यु हो गई और उसको सुरलोक का वास मिला ॥ ७ ॥

सौख्यं सुराङ्गनासार्द्धं षष्टिवर्षप्रमाणकम्।
ततः पुण्यक्षये जाते बभूव मनुजः क्षितौ ॥ ८ ॥

और वहाँ देवांगनाओं के साथ साठ हजार वर्षों तक सुख को भोगकर पुण्यक्षीण होने पर पृथ्वी पर मनुष्य शरीर में पैदा हुआ ॥ ८ ॥

धनधान्ययुतस्तस्य भूयो भार्याऽभवत् किल।
कन्यका चैव पुत्रौ च जातौ तस्यां वरानने ॥ ९ ॥

हे वरानने ! धनधान्य सहित उस क्षत्रिय के फिर वही स्त्री हुई, उसकी स्त्री के एक कन्या तथा दो पुत्र हुए ॥ ९ ॥

गर्भश्च जायते देवि तद्गर्भपतनं भवेत्।
रोगमुग्रं भवेद्देवि न सुखं जायते खलु ॥ १० ॥

हे देवि ! उसकी स्त्री के गर्भ होकर उस गर्भ का पात हो जाता है और बड़ा उग्र रोग उसके हुआ, सुख बिलकुल नहीं हुआ ॥ १० ॥

शान्ति शृणु वरारोहे यतः पापक्षयो भवेत्।
षडंशं च ततो देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ ११ ॥

हे वरारोहे ! उसकी शांति सुनो, जिससे पाप की शांति हो। अपने घर के धन का छठा भाग ब्राह्मण को पुण्य कर दे ॥ ११ ॥

दशवर्णां ततो दद्याद्विप्राय ज्ञानिने प्रिये ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ १२ ॥

हे प्रिये ! दशवर्णोंवाली गौवों का दान ज्ञानवान् ब्राह्मण को दे और गायत्री के मूलमंत्र का एक लक्ष जप करावे ॥ १२ ॥

पक्वान्नेनैव भो देवि ब्राह्मण न् भोजयेच्छतम् ।
वृक्षस्वर्णस्य वै देवि फलपुष्पसमन्वितम् ॥ १३ ॥

हे देवि ! पक्वान्न का सौ ब्राह्मणों को भोजन करवावे और सुवर्ण वृक्ष का फल पुष्प सहित ॥ १३ ॥

दद्याद्विप्राय विदुषे पलं दशप्रमाणकम् ।
सूर्यस्य पूजनं चैव रविवारे विशेषतः ॥ १४ ॥

दशपल सुवर्ण के साथ वेद पढ़े हुए ब्राह्मण को दान दे । और विशेष करके रविवार के दिन भगवान् सूर्य का पूजन करे ॥ १४ ॥

एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रश्च जायते ।
ज्वरस्य वै भवेन्मुक्तिः काकवन्ध्या सुतं लभेत् ॥ १५ ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे विशाखानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

हे वरारोहे ! ऐसा करने से शीघ्र पुत्र पैदा होता है, और ज्वर से शांति होती है, काकवंध्या, स्त्री और मृतवत्सा भी चिरंजीवी उत्तम पुत्र को प्राप्त होती है ॥ १५-१६ ॥

सड़सठवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथाष्टषष्टितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

कल्याणनगरे गौरि मायापुर्याः समीपतः ।
वणिग्जनोवसत्तत्र धनाढ्यो धनगर्वितः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे गौरि ! कल्याण नगर में मायापुरी के पास एक बनियाँ धन के अभिमान से वहाँ वास करता था ॥ १ ॥

क्रयकृत्सर्ववस्तूनां विक्रयं च सदाकरोत् ।
महालोभवशाद्देवि न दत्तं पापिना क्वचित् ॥ २ ॥

हे देवि ! वह लेने, देने की वस्तुओं का व्यापार सदा किया करता और महालोभ के कारण उस पापी ने कुछ भी दान नहीं किया ॥ २ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षी पुंश्चली कुलटाधमा ।
यमौ पुत्रौ वरारोहे पुंश्चल्यां जज्ञिरे तदा ॥ ३ ॥

हे वरारोहे ! उसकी स्त्री सुन्दर नेत्रोंवाली पुंश्चली तथा कुलटा और अधम वृत्तिवाली थी, उसने दो पुत्रों को पैदा किया ॥ ३ ॥

एको द्यूतरतः पुत्रो द्वितीयो ब्राह्मणीरतः ।
वैश्येनैव विशालाक्षि धनं च बहु सञ्चितम् ॥ ४ ॥

हे विशालाक्षि ! उस वैश्य ने बहुत सा धन संचित किया था, उसके दोनों पुत्रों में से एक तो जुवारी और दूसरा ब्राह्मणी से रमण करने वाला पैदा हुआ ॥ ४ ॥

प्रत्यहं भुज्यते छागविक्रयं कुरुते सदा ।
वृद्धे सति महादेवि वैश्यस्य मरणं ह्यभूत् ॥ ५ ॥

हे महादेवि ! हमेशा उस धन का भोग किया करते थे और बकरों का क्रय विक्रय भी करते थे, इस तरह वैश्य की वृद्ध होने पर मृत्यु हो गई ॥ ५ ॥

यमदूतैस्तदा बद्ध्वा निक्षिप्तो नरकार्णवे ।
स्वरूपं दर्शयामास तस्मै वैश्याय सूर्यजः ॥ ६ ॥
नवत्यब्दसहस्राणि घोरे नरकदारुणे ।
महाकष्टं तदा दत्तं कृमिभिर्घोररूपिभिः ॥ ७ ॥

तब सूर्य पुत्र यमराज ने अपना स्वरूप दिखाया और दूतों ने वैश्य को जंजीरों से बाँधकर नरक समुद्र में डाल दिया । वहाँ घोररूप कृमियों ने महादुःख दिए ॥ ६–७ ॥

ततो व्याघ्रस्य वै योनिं काककुक्कुटयोः पुनः ।
मानुषत्वं ततो यातः पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ८ ॥

फिर नरक से निकलकर व्याघ्र की योनि, फिर काकयोनि और मुरगे की योनि में प्राप्त होकर फिर मनुष्ययोनि में पुत्र और कन्या से रहित पैदा हुआ ॥ ८ ॥

पुनर्विवाहिता सा तु या पत्नी पूर्वजन्मनि ।
रोगवान् सापि रोगार्त्ता मृतवत्सा पुनः पुनः ॥ ९ ॥

उसको पूर्वजन्म की स्त्री फिर विवाही गई, वह भी रोगी तथा स्त्री भी रोग से पीड़ित होके वारंवार मृतवत्सापने को भोगती रही ॥ ९ ॥

एकापत्या भवेद् दुष्टा न स्यादन्यसुतः प्रिये ।
यदा सर्वस्वदानं वै सूर्यस्याराधनं तदा ॥ १० ॥
हरिवंशश्रुतिश्चैव दुर्गास्तोत्रजपस्तदा ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं यदा भवेत् ॥ ११ ॥
तदा पुत्रो भवेद्देवि व्याधिनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे अनुराधानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६८ ॥

हे प्रिये ! उसके एक दुष्ट कन्या पैदा होकर फिर पुत्रादि नहीं हुए, अब उसकी शांति कहता हूँ। सूर्य की पूजा, सर्वस्वदान, हरिवंश का श्रवण, दुर्गास्तोत्र का पाठ तथा गायत्री का लक्ष जप इतने कर्म करने से पुत्र की प्राप्ति हो और निश्चय व्याधि का नाश हो ॥ १०–१२ ॥

अड़सठवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथैकोनसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मगधे वै शुभे देशे काष्ठकारोऽवसत्प्रिये ।
पुत्रपौत्रसमायुक्तो धनाढ्यो गुणवानपि ॥ १ ॥
यदा चार्द्धं वयो यातं दरिद्रत्वं तदागमत् ।
गृहीतं यतिनो द्रव्यं शतपञ्चपलं तथा ॥ २ ॥
व्ययं कृत्वा तदा तेन न दत्तं यतिने शिवे ।
ततस्तस्य ह्यभून्मृत्युः काष्ठकारस्य मागधे ॥ ३ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे प्रिये ! मगधदेश में एक काष्ठकार पुत्र पौत्रादि से युक्त, धनाढच, बहुत गुणवान् वास करता था। जब उसकी आधी उम्र बीत गई, तब वह दरिद्री हो गया। उसने सौ पल धन साधु का ले लिया था। हे शिवे ! उसने सब धन खर्च कर दिया उस साधु को कुछ धन नहीं दिया। फिर मगध देश में ही उस काष्ठकार की मृत्यु हो गई ॥ १–३ ॥

द्वे दत्त्वा कपिले गावौ स्वर्णरौप्यविभूषिते ।
पुत्रेणापि कृतं श्राद्धं शास्त्ररीत्या गयादिकम् ॥ ४ ॥

तब उसके पुत्र ने शास्त्र रीति से श्राद्ध करके सुवर्ण तथा चाँदी के साथ दो कपिला गौवों का दान दिया, और अपने माता-पिता का गयादिकर्म किया ॥ ४ ॥

यक्षलोकं तदा यातो वर्षं शतसहस्रकम् ।
पुनः पुण्यक्षये जाते कपियोनिं ततोलभत् ।। ५ ।।

तब वह काष्ठकार यक्षलोक को गया वहाँ हजारवर्ष तक वास कर फिर पुण्य क्षीण होने पर वानर की योनि में पैदा हुआ ।। ५ ।।

ऋक्षस्यैव पुनर्योनिं मानुषत्वं ततोगमत् ।
धनधान्यसमायुक्तो गुणज्ञोप्यतिसुन्दरः ।। ६ ।।

फिर रीछ की योनि में जाकर मनुष्य शरीर को पाया । वह धनधान्य से युक्त, गुणज्ञ और सुन्दर रूपवाला हुआ ।। ६ ।।

पूर्वजन्मनि भो देवि काष्ठच्छेदः कृतः सदा ।
तेन पापेन भो देवि शरीरे महती व्यथा ।। ७ ।।

हे देवि ! पहले जन्म में उसने काष्ठ छेदन किया था, उस पाप से उसके शरीर में नाना प्रकार की पीड़ा हुईं ।। ७ ।।

यतिद्रव्यं गृहीतं च न दत्तं यतिने तदा ।
तेन जातः सुतो देवि ऋणसम्बन्धकारणात् ।। ८ ।।

हे देवि ! साधु का द्रव्य ग्रहण करके फिर साधु को नहीं देने से तथा ऋण संबन्ध के कारण से वह साधु उसका पुत्र हुआ है ।। ८ ।।

द्यूतवेश्यारतो नित्यं पितृमात्रोर्विरोधकृत् ।
युवारूपो यदा जातस्तदा मृत्युर्भवेद् ध्रुवम् ।। ९ ।।

वह जुआ तथा वेश्या संग में रत, माता-पिता से विरोध करनेवाला था । जिस समय जवान हुआ, उस समय मर गया ।। ९ ।।

पुनः पुत्रस्य संदेहः काकवन्ध्यात्वमाप्नुयात् ।
पत्नी तस्य वरारोहे मृतवत्सा पुनः पुनः ।। १० ।।

हे वरारोहे ! इस पाप के कारण से पुत्र के न होने से काकवंध्या हुई, फिर वारंवार मृतवत्सा हुई ॥ १० ॥

अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि प्रयत्नतः ।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ११ ॥

हे देवि ! अब इसके पाप की शांति को कहता हूँ सुनो । अपने घर के धन का आठवाँ भाग ब्राह्मण को पुण्य कर दे ॥ ११ ॥

सूर्यमन्त्रस्य वै जाप्यं वैदिकस्य वरानने ।
आकृष्णेति महामन्त्रः सर्वव्याधिविनाशनः ॥ १२ ॥

हे वरानने ! सूर्य के वैदिक मंत्र का जप तथा सर्वव्याधि का नाश करनेवाला "आकृष्णेति०" मंत्र का जप करे ॥ १२ ॥

सर्वकामप्रदो देवि मोक्षदो मुक्तिकारणम् ।
सूर्यदेवस्य यो भक्तिं कुरुते नियतो नरः ॥ १३ ॥
न किंचिद्दुर्लभन्तस्य पुत्रश्चैव धनं बहु ।
ममातीव प्रियो नित्यं सूर्यदेवे ह्युपासिते ॥ १४ ॥

हे देवि ! मोक्षदाता, सर्वकामना को देनेवाला, मुक्ति रूप इस मंत्र का जप करने से और नित्यप्रति सूर्य देवता की भक्ति करने से संसार में ऐसी क्या वस्तु है जो न मिल सके, पुत्र द्रव्यादि की तो बात ही क्या है । महादेवजी कहते हैं कि जो सूर्य की पूजा करते हैं, वे मेरे बड़े प्रिय हैं ॥ १३-१४ ॥

मद्गणास्तं हि रक्षन्ति यतश्च मत्कला रविः ।
कमलं सूज्ज्वलं देवि वंशपात्रं सुशोभनम् ॥ १५ ॥

हे देवि ! जो सूर्य की पूजा करते हैं उनकी मेरे गण रक्षा करते हैं, क्योंकि सूर्य में मेरी कला है । उज्ज्वल कमल बनवा के उसको बाँस के सुंदर पात्र पर धरे ॥ १५ ॥

तस्योपरि सुवर्णस्य सूर्यं रत्नविभूषितम् ।
पलपञ्चमितं देवि मन्त्रेणानेन पूजयेत् ॥ १६ ॥

हे देवि ! उसके ऊपर पाँच पल सुवर्ण की मूर्ति बनाकर रत्नों से भूषितकर इस मंत्र करके पूजन करे ॥ १६ ॥

ॐ नमः सूर्याय देवाय भद्राय भद्ररूपिणे ।
पूर्वजन्मकृतं सर्वं मम पापं व्यपोहतु ॥ १७ ॥
प्रतिमां पात्रसंयुक्तां ब्राह्मणाय च दापयेत् ।
ततो गां कपिलां शुभ्रां सवत्सां स्वर्णभूषिताम् ॥ १८ ॥

पत्र-पुष्पादिसहित उस मूर्ति को बनवाकर दे और कपिला शुद्धा सवत्सा गौ को स्वर्ण से भूषितकर ब्राह्मण को दे ॥ १८ ॥

ब्राह्मणाय ततो दद्यात् पट्टवस्त्रेण संयुताम् ।
सप्तमीरविसंयुक्तो पोष्टव्याङ्गनया सह ॥ १९ ॥

वस्त्र से युक्त करके रविवार से युक्त सप्तमी तिथि के दिन स्त्रीसहित उपवास करके ब्राह्मण को देवे ॥ १९ ॥

पूर्वजन्मकृतं पापं नश्यत्येवं कृते प्रिये ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति पुत्रलाभो भवेद् ध्रुवम् ॥ २० ॥

हे प्रिये ! इस प्रकार करने से सर्वरोग क्षय हों और निश्चय पुत्र लाभ हो ॥ २० ॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे अनुराधानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥

काकवंध्या तथा मृतवत्सा स्त्री पुत्र को प्राप्त होती है ॥ २१ ॥

उनहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ सप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

सुकर्मनगरं ख्यातं सौराष्ट्रविषये शुभे ।
तत्रातिष्ठत्खलो विप्रो ब्रह्मकर्मविवर्जितः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! सौराष्ट्रनाम देश में सुकर्म नामक पुर था। वहाँ ब्रह्मकर्म से रहित एक दुष्ट ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

विक्रेता सर्ववस्तूनां गोवाजिकरिणां तथा ।
राजमृत्युं समालोक्य ग्रामदाहस्तथा कृतः ॥ २ ॥

वह सर्व वस्तुओं को बेचा करता था, तथा गौ, घोड़ा, हाथी इनको भी बेचा करता था । उसने राजा की मृत्यु देखकर ग्राम को जला दिया ॥ २ ॥

ब्राह्मणा बहवस्तत्र ब्राह्मण्यश्च तथा शिवे ।
मृता ग्रामस्य वै दाहे बह्व्यो गावो मृताः खलु ॥ ३ ॥

हे शिवे ! वहाँ बहुत-से ब्राह्मण और ब्राह्मणी उस ग्राम में दाह होने से मर गए, और बहुत-सी गौवें भी मर गईं ॥ ३ ॥

ततो बहुतिथे काले मृतः सोपि द्विजाधमः ।
ततस्तु यमदूतेन नरके घोरकर्दमे ॥ ४ ॥
यमाज्ञया च निक्षिप्तः कष्टं भुक्तं मुहुर्मुहुः ।
नरकान्निर्गतो देवि गजयोनिं ततोऽलभत् ॥ ५ ॥

फिर बहुत काल व्यतीत होने पर उस नीच ब्राह्मण की भी मृत्यु हुई, फिर यमराज के दूतों ने घोरकर्दम नरक में यम की आज्ञा से डाल दिया, वहाँ वारंवार कष्ट भोगकर नरक से निकल हाथी की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ४-५ ॥

कच्छपत्वं ततो यातः काकयोनिस्ततोऽभवत् ।
मानुषत्वं ततो यातः कुले महति शोभने ॥ ६ ॥

हे शोभने! फिर कछुआ की योनि को प्राप्त हुआ, और फिर काक की योनि, फिर उत्तमकुल में मनुष्ययोनि को प्राप्त हुआ ॥६॥

सर्वसंपत्तिसंयुक्तो वंशस्तस्य न जायते ।
बहुकन्यासमायुक्तो रोगयुक्तो भवेन्नरः ॥ ७ ॥

और सब संपत्ति से युक्त था, वंशहीन हुआ और बहुत-सी कन्याएं हुईं और रोग से दुःखी था ॥ ७ ॥

भार्या तस्य ज्वरग्रस्ता मासे वर्षे भवेज्ज्वरः ।
अतः शान्ति प्रवक्ष्यामि यतः खलु सुखी भवेत् ॥ ८ ॥

और स्त्री ज्वर से हर महीने और वर्ष में ज्वरपीड़ा को प्राप्त होती है, अब इस पाप की शांति कहता हूँ, जिससे निश्चय सुख की प्राप्ति हो ॥ ८ ॥

चतुर्भागं गृहद्रव्यं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
प्रयागे मकरे मासि पत्न्या सह वरानने ॥ ९ ॥

हे वरानने ! अपने घर के धन का चौथा भाग ब्राह्मण को दे और माघ में मकर-संक्रान्ति भर प्रयाग में स्त्रीसहित स्नान करे ॥ ९ ॥

स्नानं तु नियतः कुर्य्यात्सप्ताहं च ततः शिवे ।
हेमदानं ततः कुर्य्याद्भूमिदानं च पार्वति ॥ १० ॥

हे पार्वति ! सात दिन तक नियम से वहाँ स्नान करे और सुवर्ण तथा भूमि का दान करे ॥ १० ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण तदा जपम् ।
दशायुतप्रमाणेन हवनं मार्जनं तथा ॥ ११ ॥

गायत्री तथा 'जातवेद०' और 'त्र्यम्बकं०' इन मंत्रों का

एक लक्ष जप करावे, और दशांश हवन, तर्पण व मार्जन करावे ॥ ११ ॥

ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या पक्वान्नैः पायसेन च ।
विप्रेभ्यो दक्षिणां दद्याद्वस्त्ररत्नविभूषिताम् ॥ १२ ॥

ब्राह्मणों को भक्ति से खीर-पकवान आदि का भोजन करावे । रत्न, आभूषण और वस्त्रादि सहित दक्षिणा दे ॥ १२ ॥

दशवर्णास्तथा दद्याद्धरिवंशश्रुतिस्तथा ।
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥ १३ ॥

हे वरारोहे ! दशवर्णोंवाली गौवों का दान करे, हरिवंश को सुने, ऐसा करने से जल्दी पुत्र की प्राप्ति हो ॥ १३ ॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं पुनर्देवि न संशयः ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति मृतवत्सा लभेत् सुतम् ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे अनुराधानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम-सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

हे देवि ! काकवंध्या के भी पुत्र हो इसमें संशय नहीं और सब रोग नाश हों, मृतवत्सा भी पुत्र को प्राप्त करे ॥ १४ ॥

सत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथैकसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

बन्दीजनोऽवसच्चैकः सौराष्ट्रविषये शुभे ।
स कविर्भाग्यवान्देवि स्वधर्मनिरतः सदा ॥ १ ॥

सौराष्ट्रदेश में एक बंदीजन कवीश्वर रहता था, वह बड़ा भाग्यवान् और अपने धर्म में हमेशा दृढ़ रहता था ॥ १ ॥

तस्य स्त्री सुन्दरी देवि पतिसेवासु तत्परा ।
एकस्मिन् दिवसे देवि ब्रह्मचारी समागतः ॥ २ ॥
आतिथ्यकरणे तस्य चासमर्थस्तथा शिवे ।
उपोषणं कृतं तेन द्वारे बन्दिजनस्य च ॥ ३ ॥

हे देवि ! उसकी सुन्दरी स्त्री पतिसेवा मन लगाकर करती थी । एक दिन वहाँ एक ब्रह्मचारी आया । हे शिवे ! वह ब्रह्मचारी के सत्कार करने में असमर्थ रहे, फिर वह ब्रह्मचारी उस बंदीजन के घर में उपवासकर रात्रि भर रहा ॥ २-३ ॥

प्रभाते स वरारोहे शापं दत्त्वा गतस्तु वै ।
ततस्तु देवयोगेन मार्जारी तत्र सूतिका ॥ ४ ॥

हे वरारोहे ! वहाँ से प्रातःकाल उठकर ब्रह्मचारी उनको शाप देकर चला गया । बन्दीजन के घर में एक बिल्ली ब्याई थी ॥ ४ ॥

पञ्चपुत्रा वरारोहे घातितास्तस्य च स्त्रिया ।
मार्जारी च तदा देवि क्षुधार्ता च तदा मृता ॥ ५ ॥

हे वरारोहे ! उसके पाँच बच्चे थे । उस बंदीजन की स्त्री ने उस बिल्ली के पाँचों पुत्रों को मार डाला, और वह बिल्ली भूख से दुखी होकर मर गई ॥ ५ ॥

ततो बहुतिथे काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ।
पत्नी पतिव्रता तस्य सती जाता च तत्क्षणात् ॥ ६ ॥

फिर बहुत काल बीत जाने पर उस बंदीजन की मृत्यु हो गई और उसकी पतिव्रता स्त्री पति के साथ सती हो गई ॥ ६ ॥

सत्यलोके वरारोहे युगमेकमुवास सः ।
पत्न्या सह वरारोहे सौख्यं हि मानसेप्सितम् ॥ ७ ॥

हे वरारोहे ! तब वह एक युग पर्यंत सत्यलोक में वास करता रहा और स्त्री के साथ वहाँ मनोवाञ्छित सुख का भोग करता रहा ॥ ७ ॥

भुक्तं देवाङ्गना सार्द्धं पुनः पुण्यक्षये सति ।
मानुषत्वं ततो लेभे सह पत्न्या वरानने ॥ ८ ॥

हे वरानने ! देवांगनाओं के साथ सुख को भोगकर फिर पुण्य क्षीण होने पर स्त्रीसहित मृत्युलोक में मनुष्ययोनि में पैदा हुए ॥ ८ ॥

धनधान्यसमायुक्तो वरा भार्य्या विवाहिता ।
पुत्राश्च बहवो जातास्तेषां मृत्युरभूत्किल ॥ ९ ॥

धनधान्य से युक्त होकर अच्छी स्त्री विवाही और उसके बहुत-से पुत्र हुए, उनकी मृत्यु होती गई ॥ ९ ॥

सा ज्वरेण समुद्विग्ना मध्ये तापयुता पुनः ।
तस्य पापस्य वै शान्ति शृणु त्वं गिरिजे वरे ॥ १० ॥

हे गिरिजे ! उसकी स्त्री ज्वर से अति पीड़ित होती रही और बीच-बीच में ताप से दुःखी रही । अब जिस पाप से दुःखी थी उसकी शांति कहता हूँ सुनो ॥ १० ॥

जातवेदस्य मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
बिडाली प्रतिमां कृत्वा पञ्चबालेन संयुताम् ॥ ११ ॥

"जातवेदसे०" इस मंत्र का लक्ष जप और पाँच पुत्रोंसहित बिल्ली की मूर्ति बनावे ॥ ११ ॥

स्वर्णस्याथ च रौप्यस्य पलपञ्चदशस्य तु ।
सवस्त्रां वै तदा दद्याद्ब्राह्मणाय वरानने ॥ १२ ॥

हे देवि ! सुवर्ण या चाँदी की पन्द्रह पल प्रमाण मूर्ति बनवाकर वस्त्रादिसहित ब्राह्मण को दे ॥ १२ ॥

ग्रामेकां रक्तवर्णां च तां विप्राय प्रदापयेत् ।
अमायां पिण्डदानं च सोमवारे तथा गुरौ ।। १३ ।।

एक गौ लाल रंग की ब्राह्मण को दे तथा सोमवार के दिन या गुरुवार से युक्त अमावस्या के दिन पिण्डदान करे, कुछ ब्राह्मणों को भोजन दे ।। १३ ।।

व्रतं च रविसप्तम्यां कुर्य्याद्वै भार्यया सह ।
ततः पुत्रो भवेद्देवि चिरंजीवी तथोत्तमः ।। १४ ।।

हे देवि ! सप्तमीयुक्त रविवार के दिन व्रत करे। ऐसा करने से चिरंजीवी उत्तम पुत्र को प्राप्त करे ।। १४ ।।

व्याधिनाशो भवेद्देवि वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ।। १५ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे अनुराधा-नक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकसप्तति-तमोऽध्यायः ।। ७१ ।।

हे देवि ! संपूर्ण व्याधियों का नाश हो और वन्ध्यापने की शांति हो ।। १५ ।।

इकहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ द्विसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

ब्राह्मणो न्यवसच्चैको महाराष्ट्रपुरे शुभे ।
स वेदपाठतत्त्वज्ञो वेदपाठं सदाऽकरोत् ।। १ ।।

शिवजी कहते हैं, हे शुभे ! महाराष्ट्रदेश में एक ब्राह्मण वेदपाठ के तत्त्व को जानने वाला व सदा वेद का पाठ करनेवाला वास करता था ।। १ ।।

तडागं खानयामास तत्र द्रव्यं च लब्धवान् ।
द्रव्यस्यार्थं तदा देवि विग्रहो भ्रातरं प्रति ॥ २ ॥

हे देवि ! उस ब्राह्मण ने एक तालाब खुदवाया । वहाँ खोदने से उसको बहुत धन की प्राप्ति हुई और उस धन के लिए भाई से लड़ाई हो गई ॥ २ ॥

भ्रात्रा तस्य महादेवि द्रव्यार्थं भक्षितं विषम् ।
बहुकाले तदा देवि व्ययं सर्वधनं कृतम् ॥ ३ ॥

हे महादेवि ! उसके भाई ने धन के लिए जहर खा लिया । फिर इसने बहुत दिनों तक उस धन को खर्च किया ॥ ३ ॥

ततश्च पञ्चतां यातो ब्राह्मणश्च सुरेश्वरि ।
यमदूतैर्महाघोरे नरके देवि कर्दमे ॥ ४ ॥

हे सुरेश्वरि ! जब वह ब्राह्मण मर गया तो यमराज के दूतों ने उसको महाघोर नरक में डाला ॥ ४ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि निक्षिप्तश्च यमाज्ञया ।
भुक्त्वा नरकजं दुःखं काकयोनिरभूत्पुनः ॥ ५ ॥

और साठ हजार वर्षों तक नरक में यम की आज्ञा से दुःखों को भोगा, फिर काकयोनि में कौआ हुआ ॥ ५ ॥

पुनर्मानुषयोनिं च पुत्रकन्याविवर्जितः ।
पूर्वजन्मनि भो देवि भ्रात्र्यंशं नैव दत्तवान् ॥ ६ ॥

हे देवि ! मनुष्ययोनि को प्राप्त हुआ और पुत्र कन्या से रहित हुआ । क्योंकि इसने पहले जन्म में अपने भाई को हिस्सा नहीं दिया था ॥ ६ ॥

तेन पापेन भो देवि महारोगसमुद्भवः ।
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे वरे ॥ ७ ॥

हे देवि ! उस पाप से महारोग से पीड़ित रहा । अब उसकी शांति को कहता हूँ सुनो ॥ ७ ॥

गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत्।
वापीकूपतडागादिजीर्णोद्धारं प्रयत्नतः ॥ ८ ॥

अपने घर के धन का आठवाँ भाग पुण्य करे, और बावड़ी, कुआँ, तालाब इन फूटे-टूटों को बनवा दे ॥ ८ ॥

प्रतिमां कारयेद्देवि स्वर्णं पलदशस्य तु।
भ्रातुश्चित्रं तदा देवि पूजयित्वा यथाविधि ॥ ९ ॥

हे देवि ! भाई की दशपल प्रमाण सोने की मूर्ति बनवाकर उसका यथाविधि पूजन करे ॥ ९ ॥

गन्धधूपादिभिर्देवि भूषणैर्विविधैरपि।
गायत्रीलक्षजाप्येन दशांशहवनेन तु ॥ १० ॥

हे देवि ! गंध धूपादि भूषणों से अनेक प्रकार से पूजन करके ब्राह्मण को दे और गायत्री का एकलक्ष जप, फिर दशांश हवनादि करावे ॥ १० ॥

प्रयागे मकरे स्नानं सर्वपापक्षयो भवेत्।
ब्राह्मणाय ततो दद्यात्मूर्तिं गां च पयस्विनीम् ॥ ११ ॥

मकर संक्रांति में प्रयाग का स्नान करने से सर्वपाप छूट जाते हैं, फिर ब्राह्मण को दूधवाली गौ और उस मूर्ति का दान दे ॥ ११ ॥

भूमिं वृत्तिकरीं दद्यात् पुत्रपौत्रानुयायिनीम्।
अश्वदानं ततो दद्याद् ब्राह्मणान् भोजयत्ततः ॥ १२ ॥

जीविका करनेवाली, पुत्र, पौत्रादिक की रक्षा करनेवाली पृथ्वी का दान और घोड़े का दान दे। ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १२ ॥

एवं कृते वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा।
व्याधिस्तस्य निवर्तेत काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥ १३ ॥

हे वरारोहे ! ऐसा करने से पुत्र होता है। यह सत्य है और व्याधि दूर होती है, काकवंध्या भी पुत्रवती होती है ॥१३॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७२ ॥

और मृतवत्सा भी उत्तम चिरजीवी पुत्र को प्राप्त करती है ॥ १४ ॥

बहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पट्टने वै पुरे शुभ्रे लोहकारोऽवसत्पुरा ।
गोवर्द्धनाभिधः पत्नीयुक्तोभूत्परमेश्वरि ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे परमेश्वरि ! पट्टना नामक अच्छे नगर में एक लोहार रहता था। उसका नाम गोवर्द्धन था, उसके साथ उसकी स्त्री भी रहती थी ॥ १ ॥

धनधान्यसमायुक्तो धर्मकर्मरतस्तथा ।
तस्य पुत्रद्वयं जातं लोहकारस्य पार्वति ॥ २ ॥

हे पार्वति ! वह लोहार धनधान्य से युक्त था, और अपने धर्म-कर्म में लगा रहता था। उसके दो पुत्र उत्पन्न हुए ॥ २ ॥

ज्येष्ठपुत्रश्च भो देवि भार्यया सह तेन वै ।
निस्सारितो गृहाद्देवि दत्तं तस्मै न किंचन ॥ ३ ॥

हे देवि ! उस लोहार ने बड़े लड़के को स्त्रीसहित अपने घर से निकाल दिया और उसको कुछ भी हिस्सा नहीं दिया ॥ ३ ॥

एको गृहे स्थितः पुत्रो द्रव्यं तस्मै प्रदत्तवान् ।
लोहकारेण भो देवि स्वभार्या पुत्रसंयुता ॥ ४ ॥

हे देवि ! अपने छोटे पुत्र को जो घर में था उसको सब द्रव्य दिया । उसके पीछे लोहार ने एक पुत्रसहित अपनी स्त्री को भी छोड़ दिया ॥ ४ ॥

त्यक्ता चैव महादेवि गोपालस्य तु कन्यका ।
भार्या कृता पुनस्तेन पत्न्यास्त्यागश्च वै कृतः ॥ ५ ॥

हे महादेवि ! उस लोहार ने अपनी स्त्री को छोड़ करके एक अहिर की लड़की को अपनी स्त्री बना लिया और अपने घर में उसको रखने लगा ॥ ५ ॥

ततो बहुगते काले लोहकारस्य वै शिवे ।
व्याघ्रेण मरणं जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ६ ॥
निक्षिप्तो नरके घोरे कृमिविष्ठादिसंयुतः ।
त्रिंशद्वर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ७ ॥

हे देवि ! बहुत-सा काल व्यतीत होने पर उस लोहार की मृत्यु हुई और उसको यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर कृमि-विष्ठादि से युक्त घोर नरक में छोड़ दिया । वहाँ तीस हजार वर्ष तक नरक भोगता रहा ॥ ६–७ ॥

नरकान्निर्गतो देवि मानुषत्वं ततोऽलभत् ।
पुनः सर्पस्य योनिश्च ततो नकुलतां गतः ॥ ८ ॥

हे देवि ! नरक से निकल कर मनुष्ययोनि को प्राप्त हुआ फिर साँप की योनि पाकर बाद को नकुल (न्योरा) की योनि में पैदा हुआ ॥ ८ ॥

मानुषत्वं ततो देवि धनधान्यसमाकुलः ।
शूरोऽभूत्किल विज्ञश्च ज्ञानवान् राजवल्लभः॥ ९ ॥

हे देवि ! फिर शूरवीर और सब वस्तु का जाननेवाला ज्ञानवान्, राजप्रिय धनसहित मनुष्ययोनि में पैदा हुआ ॥ ९ ॥

पुरैव यत्कृतं सर्वं तत्प्राप्नोति न संशयः ।
पुरैव कार्त्तिके मासि पौर्णमास्यां सदाशिवे ॥ १० ॥

हे शिवे ! जो कुछ इसने पूर्व जन्म में किया था सो अब प्राप्त हुआ । कार्त्तिक महीने में पूर्णिमा को जो किया था उसके सब फल मिले ॥ १० ॥

धेनुः प्रदत्ता युवती विधिवन्मम वल्लभे ।
तेन दानफलेनेह धनाढ्यत्वं प्रलब्धवान् ॥ ११ ॥

हे वल्लभे ! इसने पहले युवती गौ का दान दिया था, उसके फल से धनाढ्य हुआ है ॥ ११ ॥

स्वभार्यां च परित्यज्य परकीया रतः स वै ।
अतः पुत्रस्य वै मृत्युः पुनः पुत्रो न जायते ॥ १२ ॥

और जो इसने अपनी स्त्री को छोड़कर अहिर की कन्या को स्त्री बनाकर गमन किया था, इससे पुत्र संतान नष्ट हो गई, फिर पुत्र नहीं हुआ है ॥ १२ ॥

कन्यकाजनयित्री च तस्य भार्याभवत्खलु ।
पुत्रस्त्रियश्च कृतवान् त्यागं परकलत्रवान् ॥ १३ ॥
तत्पापेन महादेवि रोगग्रस्तकलेवरः ।
व्याधयश्च समुत्पन्ना दद्रुपामादयस्तदा ॥ १४ ॥

हे महादेवि ! उसकी स्त्री कन्या पैदा करनेवाली हुई, और जो इसने पुत्र-सहित अपनी स्त्री छोड़ करके दूसरी स्त्री को ग्रहण किया था उस पाप से रोगग्रस्त शरीर हुआ, और दाद-खजुली आदि रोग हुए ॥ १३-१४ ॥

ख्यातवंशे समुत्पन्नो भूमिभागं न लब्धवान् ।
अथ शांतिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ॥ १५ ॥

और अच्छे वंश में पैदा होकर भूमि का हिस्सा नहीं पाया। अब उसको शांति पूर्व पाप की शुद्धि के लिये कहता हूँ सुनो ॥ १५ ॥

एकादशीव्रतं नित्यं षडंशं दानमाचरेत् ।
षडङ्गं पाठयेन्नित्यं रुद्रपूजनपूर्वकम् ॥ १६ ॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्याच्चण्डीपाठं निरन्तरम् ।
तिलधेनुप्रदानं वै ह्यमाश्राद्धं विशेषतः ॥ १७ ॥

नित्य एकादशी का व्रत करे और अपने घर के धन का छठा भाग दान करे और षडंग का पाठ करावे, शिव का पूजन करे तथा हरिवंश सुने, चंडीपाठ, तिल धेनु का दान, अमावस्या को पितरों का श्राद्ध करे ॥ १६-१७ ॥

एवं कृते महादेवि पुत्रस्तस्य भविष्यति ।
वन्ध्यात्वं प्रशमं याति सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥७३॥

हे महादेवि ! ऐसा करने से उसके पुत्र होगा और वंध्यापन तथा सर्वरोग दूर होंगे ॥ १८ ॥

तिहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

बीजापुरमिति ख्यातं पुरं देवि मनोहरम् ।
न्यवसन् बहवो वर्णा ब्रह्मणाश्च वणिग्जनाः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! बीजापुर नामक एक सुन्दर पुर में बहुत से मनुष्य एवं ब्राह्मण और बनिये भी रहते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये शूद्र एको हि ताम्बूलं च करोति सः ।
सुरापी च वै नित्यं ताम्बूविक्रयी शिवे ।। २ ।।

हे शिवे ! वहाँ एक शूद्र मदिरा का पीनेवाला तथा पान बेचने वाला रहता था ।। २ ।।

तस्य पुत्रद्वयं जातं धनं च बहु संचितम् ।
ततस्तु दैवयोगेन महाधनमदेन च ।। ३ ।।

हे वरानने ! उसके दो पुत्र हुए और उसने धन बहुत तरह से संचय किया और धनवान् होकर बड़ा अहंकारी हुआ ।। ३ ।।

ज्येष्ठपुत्रस्य हननं कृतं तेन वरानने ।
स्वभार्यार्थे तदा नीता पत्नी तस्य तु तेन हि ।। ४ ।।

हे वरानने ! उसने अपने बड़े पुत्र का वध किया और उस पुत्र की स्त्री को अपनी स्त्री बनाने के लिए अपने घर में लाया ।। ४ ।।

पुत्राभ्यां च भवेद्वैरं पत्न्या सह विशेषतः ।
प्रत्यहं भजते सोपि पुत्रपत्नीं तथाऽधमः ।। ५ ।।

इसलिए उस शूद्र के पुत्रों के साथ तथा उसकी स्त्री के साथ पूरा वैरभाव हुआ । इस प्रकार वह पहले पुत्र की स्त्री के साथ गमन करने लगा ।। ५ ।।

एवं बहुदिने जाते तस्य मृत्युरभूच्छिवे ।
ततो वै नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ।। ६ ।।

निक्षिप्तो वै ततो देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
कृमिभिर्घोरवक्त्रैश्च भुक्त्वा नरकयातनाम् ।। ७ ।।

हे शिवे ! इस तरह बहुत दिन बीतने पर उसकी मृत्यु हुई, फिर उसको यमराज के दूतों ने यम की आज्ञा से घोर नरक में छोड़ा, फिर हे देवि ! साठ हजार वर्षों तक नरक में रहा और

भयंकर मुखवाले कृमियों ने काटा, और नरक के दुःखों को भोगा ॥ ६–७ ॥

नरकान्निर्गतो देवि शनो योनिं ततोऽलभत् ।
ततो वृषभयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः ॥ ८ ॥

वहाँ से निकल कुत्ते की योनि को प्राप्त हुआ, फिर बैल की योनि को प्राप्त हो, फिर मनुष्ययोनि में पैदा हुआ ॥ ८ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि दशवर्णा ददौ बहु ।
तत्फलेनेह भो देवि धनधान्ययुतस्तदा ॥ ९ ॥

हे देवि ! पहले इसने बहुत-सी दशवर्णोंवाली गौओं का दान दिया था, उस फल से धनधान्य से युक्त हुआ ॥ ९ ॥

पुत्रपत्न्यां च भोगार्थे पुत्रस्यैव वधः कृतः ।
तत्पापफलतो देवि ह्यपुत्रश्च ज्वरी तथा ॥ १० ॥

पुत्र की स्त्री से व्यभिचार के लिए जो पुत्र का वध किया था उस पाप के फल से इसके पुत्र नहीं है, और शरीर में ज्वर की प्राप्ति हुई है ॥ १० ॥

व्याधिश्च बहुधा तस्य चाङ्गे च महती तथा ।
महाचिन्तां समापन्नो ह्यतः शान्तिं शृणु प्रिये ॥ ११ ॥

हे प्रिये ! उसके बहुत-सी व्याधि तथा अंग में पीड़ा होकर महाचिंताग्रस्त हुआ । अब इसकी शांति कहता हूँ सुनो ॥ ११ ॥

स्ववित्तस्य तृतीयांशं प्रगृह्य हरवल्लभे ।
कूपं च खनयेत्कान्ते तडागं जीर्णमुद्धरेत् ॥ १२ ॥

हे कान्ते ! अपने घर के द्रव्य का तीसरा भाग लेकर कूप बनवावे, और पुराने तालाब को दुरुस्त करवा दे ॥ १२ ॥

पौर्णमासीव्रतं देवि सकलत्रः समाचरेत् ।
शिवस्य पूजनं लक्षं ब्राह्मणेभ्यश्च कारयेत् ॥ १३ ॥

हे देवि ! बारहों महीने की पौर्णिमा का व्रत स्त्रीसहित करे और एक लक्ष शिवजी का पूजन ब्राह्मणों से करावे॥ १३ ॥

कृष्णां च गां च वृषभं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण तथा लक्षप्रमाणतः ॥ १४ ॥

कृष्णा गौ तथा बैल का दान दे, और एक लक्ष गायत्री मूल-मंत्र का जप करवावे ॥ १४ ॥

जपं वै कारयेत्तत्र हवनं तद्दशांशतः ।
मार्जनं तर्पणं देवि दशांशं स च कारयेत् ॥ १५ ॥

हे देवि ! उस जप का दशांश हवन, मार्जन तथा दशांश तर्पण करवावे ॥ १५ ॥

पुत्रस्य प्रतिमां तद्वत्स्वर्णवस्त्रसमन्विताम् ।
पलपञ्चदशस्यंव निर्मितां रत्नभूषिताम् ॥ १६ ॥

पंद्रह पल सुवर्ण की एक पुत्र की मूर्ति बनवा के वस्त्र तथा पंचरत्नसहित ब्राह्मण को दान कर दे ॥ १६ ॥

पूजां कृत्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
एवं कृते न संदेहः शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥ १७ ॥

इस विधान से पूजा कर ब्राह्मण को देने से जल्दी पुत्र की प्राप्ति होती है, इसमें संशय नहीं है ॥ १७ ॥

व्याधिश्च प्रशमं यायात्काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे ज्येष्ठा-नक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥

ऐसा करने से सब प्रकार की व्याधि दूर होती है काकवंध्या

भी पुत्र को प्राप्त होती है और मृतवत्सा भी चिरञ्जीवी पुत्र को प्राप्त करती है ॥ १८ ॥

चौहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

अथ पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

चतुर्भुजाभिधे क्षेत्रे वेणीपश्चिमतः शिवे ।
पट्टकारोऽवसद्देवि लक्ष्मणेति च सञ्ज्ञकः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे शिवे ! वेणी नदी से पश्चिम की तरफ चतुर्भुज क्षेत्र में एक लक्ष्मण नामक पट्टवस्त्र बनानेवाला रहता था ॥ १ ॥

तस्य पत्नी विशालाक्षि परपुंसि रता सदा ।
पुत्राश्च बहवो जाता धनं च बहु सञ्चितम् ॥ २ ॥

हे विशालाक्षि ! उसकी स्त्री हमेशा परपुरुषों से रमण किया करती थी, और उसके बहुत-से पुत्र पैदा हुए । उसने धन भी खूब इकट्ठा किया ॥ २ ॥

क्रयविक्रयधर्मेण व्ययकारी दिने दिने ।
तस्य गेहेऽकरोद्वासं चटकानामपक्षिणी ॥ ३ ॥

वह लेन देन के व्यापार से प्रतिदिन खर्च किया करता था और उसके घर में चटका नाम की एक चिड़िया वास करती थी ॥ ३ ॥

एकस्मिन्समये देवि चाण्डान्साऽसूत तत्र वै ।
बहून्वै पोषितांश्चाण्डान् सपक्षान्कृतवांस्तथा ॥ ४ ॥
फलं गृह्य सदा पक्षी मध्याह्ने बालकान्प्रति ।
भोजनं प्रददौ नित्यं स्वकुलाय तदा शिवे ॥ ५ ॥

हे शिवे ! एक समय उस चिड़िया ने बहुत से अंडों को पैदा किया, उनमें बहुत से अंडों को पाला, जब वे पंखोंवाले हुए तब वह चिड़िया जहाँ तहाँ से फल लाकर उन पक्षी बालकों को मध्याह्न समय में अपने कुल बढ़ाने के लिए रोज भोजन दिया करती थी ।। ४-५ ।।

ततस्तु दैवयोगेन पट्टकारस्तु तद्गृहे ।
भोजनार्थं गतो देवि पत्नीं चाऽन्नं तदाप्यदात् ।। ६ ।।

हे देवि ! दैवयोग से पट्टवस्त्र बनानेवाला अपने घर में भोजन के लिए आया और उसकी स्त्री ने अन्न लाकर दिया ।। ६ ।।

भुक्तं च विविधं चान्नं तत्क्षणे पक्षिबालकाः ।
विष्ठां चक्रुस्तथा दृष्टवा पट्टकारो रुषा खलु ।। ७ ।।
कुलं तस्याकरोन्नष्टं बालानां हननेन सः ।
एवं बहुगते काले पट्टकारस्य सुव्रते ।। ८ ।।

तब पट्टकार ने अनेक प्रकार के भोजन किये, उसी समय उन पक्षियों ने उसके ऊपर बीट कर दिया, तब वह पट्टकार उस विष्ठा को देखकर बड़े क्रोध में आकर हे सुव्रते ! उन पक्षियों के सब बालकों को नष्ट कर दिया । इस तरह फिर बहुत सा काल व्यतीत होने पर पट्टकार का ।। ७-८ ।।

गङ्गायां मरणं जातं भार्यया सहितस्य वै ।
स्वर्गवासोऽभवेद्देवि पट्टकारस्य सुव्रते ।। ९ ।।

स्त्री सहित गंगाजी में मरण हो गया, तब हे सुव्रते ! उसको स्वर्गवास हुआ ।। ९ ।।

सप्ततिर्वै सहस्राणि स्वयं भुक्त्वा फलं बहु ।
पुनः पुण्यक्षये जाते स्वर्गभ्रष्टो यदाभवत् ।। १० ।।

सत्तर हजार वर्षों तक स्वर्ग को भोग पुण्यक्षीण होने पर पट्टकार स्वर्ग से भ्रष्ट हुआ ॥ १० ॥

मनुष्यश्चाऽभवद्देवि गङ्गागण्डकिमध्ययोः ।
धनधान्यसमायुक्तो विवाहमकरोद्यदा ॥ ११ ॥
पूर्वजन्मस्थिता भार्या सा तस्य गृहमेधिनी ।
प्रेष्ययुक्ताऽभवत्सा तु गर्भस्य पतनं मुहुः ॥ १२ ॥

हे देवि ! पीछे गंगा और गंडकी के मध्य धनधान्य से युक्त मनुष्य की योनि में जन्म हुआ, और जब विवाह किया तो पूर्व-जन्म में जो स्त्री थी वही उसको फिर मिली, वह गर्भवती हुई और उसके गर्भ का पात हो गया ॥ ११-१२ ॥

कन्यका नैव जायन्ते पुत्रस्यैव तु का कथा ।
ज्वरयुक्ता सदा नारी स्वशरीरेऽभवत्खलु ॥ १३ ॥

उसके स्त्री के कन्या भी नहीं पैदा हुई, पुत्र की तो बात ही क्या है, और उसका शरीर ज्वर से दुःखी रहता था ॥ १३ ॥

सुखं न लभते क्वापि दुःखं याति दिने दिने ।
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वं वरानने ॥ १४ ॥

हे वरानने ! कहीं भी उनको सुख की प्राप्ति न हुई और प्रतिदिन दुःखी होते रहे। अब उसकी शान्ति कहता हूँ सुनो ॥ १४ ॥

चन्द्रार्कयोर्मन्त्रजपं गायत्रीजपमाचरेत् ।
लक्षमेकं वरारोहे पूर्वपापविशुद्धये ॥ १५ ॥

चंद्रमा, सूर्य का जप तथा एक लक्ष गायत्री का जप पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि के लिये करावे ॥ १५ ॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
कपिला गां सवत्सां च ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ १६ ॥

और अपने घर के द्रव्य का आठवाँ भाग पुण्य करे और बछड़ा सहित कपिला गौ का दान ब्राह्मण को दे ॥ १६ ॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ।
चटकस्याकृतिं कृत्वा सार्भकस्य वरानने ॥ १७ ॥
रौप्यस्य ताम्रस्वर्णस्य पञ्चविंशपलस्य तु ।
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्भूमिदानं विशेषतः ॥ १८ ॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्भार्यया सहितस्तु वै ।
हवनं तर्पणं कुर्यान्मार्जनं तु ततः परम् ॥ १९ ॥

हे वरानने ! दशवर्णोंवाली गौ दान देकर ब्राह्मणों को भोजन करावे और बालकों सहित चिड़िया की रूपा, ताँबा, स्वर्ण इनकी पच्चीस पल प्रमाण मूर्ति बनाकर (संकल्पकर) ब्राह्मण को दे । और विशेषता से भूमिदान दे, और स्त्री सहित हरिवंश को सुने । हवन, तर्पण और मार्जन इत्यादि करा दे ॥ १७-१९ ॥

जातवेदेति मन्त्रेण दशायुतजपं तथा ।
गोपालमन्त्रजपनात्पुत्रलाभो भवेदनु ॥ २० ॥

'जातवेद०' मंत्र का एक लक्ष जप और गोपाल मंत्र का जप कराने से निश्चय पुत्र प्राप्ति हो ॥ २० ॥

रोगनाशो भवेद्देवि काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥

और हे देवि ! रोग का नाश हो, काकवंध्या स्त्री भी पुत्र को प्राप्त करे ॥ २१ ॥

पचहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

———:o:———

अथ षट्सप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानगरे देवि कायस्थोऽवसदद्रिजे ।
रामदास इति ख्यातस्तस्य भार्या तु देविका ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे अद्रिजे ! अयोध्या नगर में एक कायस्थ वास करता था । उसका नाम रामदास और उसकी स्त्री का नाम देविका था ॥ १ ॥

विष्णुभक्तिरतो नित्यं ब्राह्मणस्य च सेवकः ।
भार्या पतिव्रता तस्य पतिसेवासु तत्परा ॥ २ ॥

वह नित्य विष्णु की भक्ति करता और ब्राह्मणों की सेवा किया करता था, और उसकी पतिव्रता स्त्री पति की सेवा में लगी रहती थी ॥ २ ॥

भाग्यवान् सर्ववस्तूनां विक्रेता गजवाजिनाम् ।
तस्य सखाऽभवद्विप्रो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ ३ ॥

वह भाग्यवान् और सब वस्तुओं तथा हाथी घोड़ों को बेचा करता था, उसके एक मित्र ब्राह्मण था जो वेद को जानता था ॥ ३ ॥

आगतो वै गृहे तस्य प्रेम्णा मित्रस्य भामिनि ।
चातुर्मास्ये स्थितस्तत्र स्वर्णं शतपलं तदा ॥ ४ ॥

हे भामिनि ! वह ब्राह्मण चातुर्मास्य में प्रेम के साथ उस कायस्थ घर में आकर रहने लगा । उसके पास सौ पल सुवर्ण था ॥ ४ ॥

कायस्थस्य गृहे तत्तु स्थापितं ब्राह्मणेन वै ।
वाराणस्यां गतो देवि स्नानार्थं स द्विजोत्तमः ॥ ५ ॥

उसने वह धन कायस्थ के घर में रख दिया, और हे देवि ! वह काशी में स्नान करने के लिए चला गया ॥ ५ ॥

शरीरं त्यक्तवांस्तत्र ब्रह्मचारी द्विजस्तदा।
ततो बहुगते काले कायस्थस्य दरिद्रता ॥ ६ ॥

उस ब्रह्मचारी ने काशी में शरीर को छोड़ दिया, तब बहुत काल व्यतीत होने पर कायस्थ दरिद्री हो गया ॥ ६ ॥

तद्धनं ब्राह्मणस्यैव भुक्तं तेन वरानने।
कालव्यालस्य कवलः कायस्थः कामिनीयुतः ॥ ७ ॥

हे वरानने ! ब्राह्मण का धन कालरूपी सर्प का ग्रास उस कायस्थ ने स्त्री सहित भोगा ॥ ७ ॥

अयोध्यायामभूद्देवि तयोः स्वर्गो ह्यजायत।
नवत्यब्दसहस्राणि ब्रह्मलोके वरानने ॥ ८ ॥

हे देवि ! अयोध्या में मृत्यु होने से उन दोनों को स्वर्गवास हुआ, फिर नब्बे हजार वर्ष ब्रह्मलोक का वास किया ॥ ८ ॥

भुक्तं सौख्यमनेकं तु देवानामपि दुर्लभम्।
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके सुरेश्वरि ॥ ९ ॥

हे सुरेश्वरि ! वहाँ देवताओं के दुर्लभ भोगों को भोगकर पुण्यक्षीण होने पर मर्त्यलोक में जन्म लिया ॥ ९ ॥

तत्पापेनाभवद्देवि कन्यापुत्रप्ररोधनम्।
अस्य पापस्य वै शान्ति शृणु त्वं परमेश्वरि ॥ १० ॥

हे देवि ! उस पाप के प्रभाव से उसके कन्या और पुत्र का अवरोध हुआ है। हे परमेश्वरि ! अब उस पाप की शांति को कहता हूँ, सुनो ॥ १० ॥

प्रायश्चित्तं महादेवि पूर्वजन्मसमुद्भवम्।
गृहवित्तषडंशेन ततो दानं प्रकल्पयेत् ॥ ११ ॥

हे महादेवि ! पूर्वजन्म में पाप के प्रायश्चित के लिए अपने घर के द्रव्य का छठा भाग दान करे ॥ ११ ॥

गायत्रीत्र्यम्बकाभ्यां च जातवेदेन चानघे ।
जपं वै कारयेत्कान्ते प्रतिमन्त्रं दशायुतम् ॥ १२ ॥

हे अनघे ! गायत्री तथा 'त्र्यम्बक०' और 'जातवेद०' इन मंत्रों का एक एक लाख जप करावे ॥ १२ ॥

ततो होमं दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
पलैर्दशमितैर्हेमैर्ब्राह्मणस्य तदाकृतिम् ॥ १३ ॥

फिर दशांश हवन तथा तर्पण और दशांश मार्जन करावे, दश पल सुवर्ण की मूर्ति उस ब्राह्मण की बनवावे ॥ १३ ॥

पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय ततो ददेत् ।
ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णवस्त्रविभूषिताम् ॥ १४ ॥

यथाविधि उसका पूजन कर ब्राह्मण को दे और वैसे ही वस्त्र स्वर्णादि सहित कपिला गौ का भी दान दे ॥ १४ ॥

प्रतिवर्षं ततो देवि दशवर्णां ददेत्पुनः ।
एवं कृते न संदेहो वंशो ह्यस्य भवेत्खलु ॥ १५ ॥

और हे देवि ! प्रतिवर्ष दश वर्णोंवाली गौ का दान देता रहे, ऐसा करने से वंशवृद्धि होगी ॥ १५ ॥

रोगः शरीरजन्यो यस्तस्य नाशः प्रजायते ।
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा ततः प्रिये ॥ १६ ॥

शरीर के रोग का नाश हो, काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा भी पुत्र पाकर सुखी हों ॥ १६ ॥

लभेत्तु सुसुतं चैव नात्र कार्या विचारणा ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मूलनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥

और अच्छे पुत्र को प्राप्त करे, इसमें कुछ भी विचार नहीं करना चाहिये ॥ १७ ॥

छिहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पश्चिमस्यामयोध्यायां योजनानां त्रयोपरि ।
राघवस्य पुरे देवि न्यवसन्बहवो जनाः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि ! अयोध्यापुरी से पश्चिम की तरफ तीन योजन पर राघवपुरी में बहुत से लोग निवास करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये ब्राह्मणो ह्येको योगशर्माद्रिनन्दिनि ।
तस्य पत्नी समाख्याता गुणज्ञा परमा शुभा ॥ २ ॥

हे अद्रिसुते ! उसके बीच में एक योगशर्मा ब्राह्मण रहता था और परमा नामक उसकी स्त्री भी गुणों से युक्त रहती थी ॥ २ ॥

तत्र वासो भवेद्देवि ज्ञानिनस्तस्य कामिनी ।
स पुरोधा महादेवि धनाढ्यः कृपणस्तथा ॥ ३ ॥

हे देवि ! वहाँ वह ब्राह्मण ज्ञानवान्, पुरोहितवृत्तिवाला, धनाढ्य होकर भी कंजूसी करता था ॥ ३ ॥

प्रतिग्रहेण भो देवि व्ययकारी दिने दिने ।
तस्य भ्राता कनिष्ठश्च व्यापारकरणे रतः ॥ ४ ॥

हे देवि ! प्रतिदिन वह दान (भेंट) लेता था, और अपना खर्च करता था, उसका छोटा भाई सदा व्यापार में ही लगा रहता था ॥ ४ ॥

उभौ द्वौ ब्राह्मणौ देवि शान्तिमन्तौ परस्परम् ।

ततो बहुगते काले वैरं जातं तदा शिवे ॥ ५ ॥

हे देवि ! वे दोनों ब्राह्मण परस्पर शांति के साथ रहते थे, बाद बहुत दिन व्यतीत होने पर, दोनों का आपस में झगड़ा पैदा हो गया ॥ ५ ॥

स्वधनस्य विभागार्थं युद्धं जातं सुदारुणम् ।

तदुद्देशेन भो देवि मृतो भ्राता कनिष्ठकः ॥ ६ ॥

हे देवि ! अपने धन के विभाग के लिए दोनों का आपस में बड़ा युद्ध हुआ, और उसके उद्देश से छोटा भाई मर गया ॥ ६ ॥

तद्धनं गृह्य वै स्वर्णं सर्वं पुत्राय दत्तवान् ।

दानं नैव कृतं तेन ततो वै मरणं खलु ॥ ७ ॥

फिर ब्राह्मण ने सब द्रव्य अपने पुत्र को दे दिया। और कुछ भी दान नहीं किया, फिर उसकी भी मृत्यु हो गई ॥ ७ ॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तो रक्तकर्दमे ।

बहून्यब्दसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ८ ॥

तब ब्राह्मण को यमराज के दूतों ने महाघोर रक्तकर्दम नरक में डाला और बहुत वर्षों तक दुःखों का भोग किया ॥ ८ ॥

नरकान्निर्गतो देवि गर्दभत्वमजायत ।

वृकयोनिस्ततो भूत्वा मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ९ ॥

हे देवि ! नरक से निकल गर्दभयोनि को प्राप्त हुआ, फिर वहाँ से भेड़िया की योनि को प्राप्त होकर मनुष्ययोनि में हुआ है ॥ ९ ॥

वेदविद्यारतो देवि कन्यावान् पुत्रवर्जितः ।

रोगयुक्तो महादेवि सदाभिक्षारतो नरः ॥ १० ॥

हे देवि ! वेद जानता हुआ भिक्षा माँगता है, कन्या है, लेकिन पुत्र नहीं है, सदा रोगी बना रहता है ।। १० ।।

पूर्वपापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं शृणुष्व मे ।
हरिवंशश्रुतिं कुर्याच्छिवपूजनमेव च ।। ११ ।।

हे शुभे ! पहले पापशुद्धि के लिए प्रायश्चित्त कहता हूँ, सुनो । हरिवंश को सुने और शिवपूजन करे ।। ११ ।।

अमायां पिण्डदानं च गोदानं च विशेषतः ।
षडक्षरं तथा मन्त्रं शुद्धं मम सुरेश्वरि ।। १२ ।।
जपं वै कारयेत्सत्यं दशलक्षं वरानने ।
होमं वै कारयेत्कान्ते कुण्डे चित्रे वरानने ।। १३ ।।

हे सुरेश्वरि ! अमावस्या को पिंडदान और गौ का दान विशेषता से करे । हे वरानने ! शुद्ध शिवजी का षडक्षर[1] मंत्र का दश लक्ष जप करावे और नानाप्रकार के विचित्र कुंडों में होम करावे ।। १२-१३ ।।

चतुरस्रे वरारोहे तिलधान्यादितण्डुलैः ।
प्रतिमां कारयेत्कान्ते भ्रातुःस्वर्णस्य वै शिवे ।। १४ ।।
पलैर्द्विपञ्चसंख्याकैर्मन्त्रेणानेन पूजयेत् ।

हे वरारोहे ! तिल, धान्य, चावल इत्यादि से हवन करावे और भाई की मूर्ति सुवर्ण की बावन पल की बनवाकर इस मंत्र से पूजन करे ।। १४ ।।

"ॐ नमः सवित्रे देवाय वेदवेदाङ्गधारिणे ।। १५ ।।
पूर्वजन्मकृतं सर्वं मम पापं व्यपोहतु ।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा भ्रातुरंशापहारतः ।। १६ ।।
त्वदर्थं गौर्मया दत्ता सूर्यदेवाय ते नमः ।"

१—शिव का षडक्षर मंत्र—ॐ नमः शिवाय ।

"ॐ नमः सवित्रे देवाय वेदवेदाङ्गधारिणे" ऐसे उच्चारण-कर यह कहे कि पहले जन्म का किया हुआ मेरा सब पाप नष्ट हो और अज्ञान से अथवा ज्ञान से जो मैंने भाई का अंश भक्षण किया है, इस पाप से मेरा उद्धार करो। हे सूर्यदेव! मैं यह गोदान आपके लिए करता हूँ ॥ १५-१६ ॥

प्रतिमां पूजयित्वा तु ब्राह्मणाय ददेत सः ॥ १७ ॥
एवं कृते विधाने च शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात्।
काकवन्ध्या पुनः पुत्रजनयित्री भवेद्ध्रुवम् ॥ १८ ॥

इस तरह सूर्य का पूजन करके गौ आदि सब दान ब्राह्मण को पूर्वजन्म के पाप निवृत्ति के लिए देवे। ऐसा विधिपूर्वक करने से जल्दी पुत्र की प्राप्ति होती है और काकवन्ध्या भी श्रेष्ठ पुत्र को पैदा करनेवाली होती है ॥ १७-१८ ॥

व्याधयो नाशमायान्ति तूलराशिर्यथाऽनले ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मूलनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

नाना प्रकार की व्याधि नाश होती है, जैसे आग में रुई का ढेर जल्दी ही नष्ट हो जाता है, इसी प्रकार सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १९ ॥

सतहत्तरवाँ अध्याय समाप्त।

——:०:——

अथाष्टसप्ततितमोऽध्यायः।

शिव उवाच।

सरय्वाश्चोत्तरे कूले मङ्गलं नाम वै पुरम्।
तत्र क्षत्र्यवसच्चैको मद्यमांसस्य भोगकृत् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं—सरयू नदी के उत्तर किनारे पर मंगलपुर में एक क्षत्रिय मदिरा, मांस खानेवाला रहता था ॥ १ ॥

भावसेनश्च नाम्ना स तस्य पत्नी मनोहरा ।
वेश्याद्यूतरतश्चासौ लुब्धश्चौरेषु सम्मतः ॥ २ ॥

उसका नाम भावसेन था, और उसकी स्त्री मनोहरा थी, वह क्षत्रिय वेश्यासंगी, जुआरी, लोभी और चोरी में बड़ा चतुर था ॥ २ ॥

प्रत्यहं चौरकृत्येन धनसञ्चयसंमुखः ।
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ३ ॥

हमेशा चोरी से धन को इकट्ठा किया करता था, इस प्रकार बहुत सा काल व्यतीत हो जाने पर उसकी साँप से मौत हो गई ॥ ३ ॥

सर्पेणापि महादेवि यमदूतैर्यमाज्ञया ।
रौरवे नरके क्षिप्तः षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ४ ॥

हे महादेवि ! यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर रौरव नरक में डाला और वह साठ हजार वर्षों तक वास करके ॥ ४ ॥

नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिं ततोऽलभत् ।
मानुषत्वं ततो लेभे कुले महति पूजिते ॥ ५ ॥

हे देवि ! नरक से निकलकर बाघ की योनि को प्राप्त हुआ फिर वहाँ से उत्तमकुल में मनुष्यलोक में जन्म पाया ॥ ५ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि दीपदानं कृतं यतः ।
तत्फलेन महादेवि धनाढ्यत्वमजायत ॥ ६ ॥

हे महादेवि ! पहले इसने पूर्वजन्म में दीपक का दान किया था उस फल के प्रभाव से धनी हुआ ॥ ६ ॥

मद्यपानफलाद्देवि नानाज्वरसमुद्भवः ।
वेश्यासुरतसंयुक्तो यतोभूत्पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥

हे देवि ! जो मद्य पीता था उस फल से नाना प्रकार के ज्वरों की उत्पत्ति उसके शरीर में हुई, और पूर्वजन्म में वेश्या से रमण करने से ॥ ७ ॥

तेन पापेन भो देवि पुत्राणां मरणं खलु ।
मनस्युद्वेगता नित्यं जातो द्यूतरतः पुरा ॥ ८ ॥

पुत्रों का मरण होता रहा और जुआ खेलने से मन में उद्वेगता रहा करती है ॥ ८ ॥

अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि सर्वपापविशुद्धये ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ९ ॥
वापीकूपतडागांश्च पथिमध्ये च कारयेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ १० ॥

हे वरानने ! अब पूर्वजन्म के पापशुद्धि के लिए उसकी शांति कहता हूँ । अपने धन में से छठा भाग दान करे और रास्ता के मध्य में बावड़ी, कुआँ, तालाब बनवावे और गायत्री के मूलमंत्र का एक लक्ष जप करावे ॥ ९-१० ॥

दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ।
दशवर्णां ततो दद्याद्वृषभेण समन्विताम् ॥ ११ ॥

और दशांश हवन, दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे और बैल सहित दश वर्णोंवाली गौ का दान दे ॥ ११ ॥

एवं पापविशुद्धिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा ।
पुत्रश्च जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥ १२ ॥

हे देवि ! ऐसा करने से पाप की शुद्धि होती है, इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये । पुत्र की प्राप्ति होती है और वन्ध्यापने की शांति होती है ॥ १२ ॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ।
रोगा विनाशमायान्ति व्याधयश्च तथा शिवे ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मूलनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥७८॥

और मृतवत्सा भी चिरंजीवी पुत्र को प्राप्त होती है और सब रोग तथा व्याधि नाश होते हैं ॥ १३ ॥

अठहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथैकोनाशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मध्यदेशे विशालाक्षि हिडम्बं नाम वै पुरम् ।
लवणकारोऽवसत्तत्र भीमो गुणविचक्षणः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे विशालाक्षि ! मध्यदेश में एक हिडंब नामक नगर था वहाँ भीम नाम से विख्यात चतुर लोनिया वास करता था ॥ १ ॥

प्रत्यहं लवणं कृत्वा विक्रयं चाकरोत्सदा ।
तस्य भार्य्या पुण्यवती पुत्रत्रयमजीजनत् ॥ २ ॥

वह नित्य लवण (नमक) को बनाके बेचा करता था और उसकी स्त्री पुण्यवती ने तीन पुत्रों को पैदा किया ॥ २ ॥

धनधान्यवृषच्छागगोमहिष्यादिकं तथा ।
बहूनि संचितानि स्युर्लवणस्यालयः प्रिये ॥ ३ ॥

हे प्रिये ! उसके धनधान्य, बैल, बकरी, गौ, भैंस इत्यादि बहुत थे तथा लवण का खजाना ही था ॥ ३ ॥

तस्य ज्येष्ठः सुतो देवि वेश्यासुरततत्परः ।
एकस्मिन्समये देवि लवणाब्धौ निशामुखे ॥ ४ ॥

स्त्रिया सहाद्रितनये वृषभौ पतितौ तदा ।
श्रुत्वा तत्र तदा देवि निशायां न गतोपि सः ॥ ५ ॥

हे देवि ! उसका ज्येष्ठ पुत्र वेश्या के संग रहा करता था और एक समय रात्रि में लवण-समुद्र में दो बैल गिर गये और उसके साथ स्त्री भी गिर गई, लेकिन रात्रि में वह लोनिया नहीं गया ॥ ४-५ ॥

त्रयाणां वै भवेन्मृत्युः स्वकाले जातिना सह ।
भार्या निःसारिता तेन वृषभौ मृत्युसंयुतौ ॥ ६ ॥

वहाँ लवण-समुद्र में तीनों की मृत्यु हो गई, इसके पीछे लवणकार ने अपनी मरी हुई स्त्री अपने बंधुजनों की सहायता से निकाल दी, और बैल भी निकाला, किन्तु दोनों मृत्यु को प्राप्त हो गये थे ॥ ६ ॥

ततः सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ।
मरणं तस्य वै जातं लवणकारस्य पार्वति ॥ ७ ॥

हे वरानने ! हे पार्वति ! वृद्ध होने के पश्चात् उस लवण-कार की मृत्यु हो गई ॥ ७ ॥

यमदूतैर्महाघोरैर्नरके घोरसंज्ञके ।
पातितस्तत्र देवेशि द्वाविंशतिसहस्रकम् ॥ ८ ॥
वर्षं सुभुज्यते देवि कृमिसूचिमुखैर्युतम् ।
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनावजायत ॥ ९ ॥

हे देवेशि ! उसको यम के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर घोर नामवाले नरक में डाला । हे देवि ! तब बाइस हजार वर्ष पर्यन्त सुई के से मुखवाले जीवों के सहित ऐसे नरकों के दुःखों को भोगकर फिर नरक से निकलकर बाघ की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ८-९ ॥

पुनश्छागस्य वै योनिं बिडालस्य ततोऽगमत् ।
मानुषत्वं ततो लेभे देशे पुण्यतमे शुभे ॥ १० ॥

हे शुभे ! फिर बकरे की योनि को प्राप्त होकर बिडाल की योनि को प्राप्त हुआ, फिर शुभ और पुण्य देश में मनुष्य की योनि को प्राप्त हुआ है ॥ १० ॥

स्वकर्मवशगो नित्यं धनधान्यसमन्वितः ।
गुणज्ञः सर्वविद्यानां कन्यापुत्रैश्च वर्जितः ॥ ११ ॥

और अपने कर्मों के प्रताप से धन-धान्य से युक्त गुणज्ञ सब विद्याओं में चतुर पैदा हुआ है, लेकिन कन्या और पुत्र नहीं हैं ॥ ११ ॥

लवणकारस्य मरणं गङ्गायां पूर्वजन्मतः ।
तत्फलेन महादेवि धनाढ्यत्वं प्रजायते ॥ १२ ॥

हे महादेवि ! पूर्वजन्म के प्रसंग से उस लवणकार की मृत्यु गङ्गाजी पर हुई थी । उस फल के प्रभाव से धनाढ्य हुआ ॥ १२ ॥

स्वभार्या पतिता देवि लवणकूपे निशामुखे ।
नैव निःसारिता तेन ततः कन्या प्रजायते ॥ १३ ॥

हे देवि ! उसने रात्रि में लवणकूप में गिरी अपनी स्त्री को नहीं निकाला था, इससे इसके कन्या ही होती हैं ॥ १३ ॥

वृषभौ पातितौ कूपे पतितौ मृत्युमागतौ ।
तेन दोषेण देवेशि पुत्रो नैव प्रजायते ॥ १४ ॥

हे देवेशि ! बैल जो कूप में गिर के मर गये थे । उस दोष से इसके पुत्र नहीं हुये हैं ॥ १४ ॥

परस्त्रीरतिसंयोगं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसम्भवः ॥ १५ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म में इसने परस्त्री से संयोग किया था, उस पाप से शरीर में रोग हुआ है ॥ १५ ॥

अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १६ ॥

हे सुशोभने ! इसकी शांति को कहता हूँ सुनो । अपने घर के द्रव्य में से आठवाँ भाग ब्राह्मण को देवे ॥ १६ ॥

गायत्रीलक्षजाप्यं च विप्रद्वारा च कारयेत् ।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥ १७ ॥

और एक लक्ष गायत्री का जप ब्राह्मण के द्वारा करावे और उसका दशांश हवन तथा दशांश तर्पण और दशांश मार्जन करावे ॥ १७ ॥

सुवर्णप्रतिमां कृत्वा लक्ष्म्याः पञ्चपलेन वै ।
रौप्यस्यैव वरारोहे वृषभौ द्वौ सुनिर्मलौ ॥ १८ ॥
पलैर्दशमितैः कुर्यात्पूजयित्वा यथाविधि ।
मन्त्रेणानेन देवेशि स्वोपचारैः पृथक् पृथक् ॥ १९ ॥

पाँच पल (२० तोले) प्रमाण सुवर्ण की लक्ष्मीजी की मूर्ति बनवावे और हे वरारोहे ! चाँदी की पाँच पाँच पल प्रमाणवाली अर्थात् दश पल की दो दो बैलों की निर्मल मूर्ति बनवावे तथा दश पलयुत मूर्ति बनवावे और यथाविधि इस मंत्र से अपने उपचार से पृथक् पृथक् पूजन करावे ॥ १८-१९ ॥

"ॐ लक्ष्मि देवि महालक्ष्मि कमले सर्वसिद्धिदे ।
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥ २० ॥"

ॐ हे लक्ष्मि ! हे देवि ! हे महालक्ष्मि ! हे कमले ! हे सर्वसिद्धिदे ! ऐसा मंत्र उच्चारणकर यह कहे कि मेरा पहला किया हुआ पाप हे दयानिधे ! दूर करो ॥ २० ॥

मन्त्रः । ॐ लक्ष्म्यै नमः पाद्यं सम० ।। ॐ लक्ष्म्यै नमः अर्घ्यं० ।। ॐ देव्यै नमः स्नानं० ।। ॐ कमलायै नमः गन्धं० ।। ॐ सर्वायै नमः धूपं० ।। ॐ सिद्धिदायै नमः दीपं० ।। ॐ पाद्यादिसर्वाणि दापयेत् ।।

"ॐ नन्दिकेश्वर भूतेश गणानामधिपो भवान् ।
मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर ।। २१ ।।
इति मन्त्रेण वृषभौ पूजितौ शुभ्ररूपिणौ ।
पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय ददेत्ततः ।। २२ ।।"

इस मंत्र से शुक्लरूप बैलों का पूजनकर यथान्याय संकल्प-कर ब्राह्मण को देवे ।। २२ ।।

ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सुभूषिताम् ।
एवं कृते वरारोहे यत्कृतं पूर्वजन्मनि ।। २३ ।।

फिर पीछे कपिला गौ स्वर्णशृङ्गयुक्त विभूषित करके देवे ऐसा करने से हे वरारोहे ! पहले जन्म का किया पाप ।। २३ ।।

तत्सर्वं नाशमायाति शीघ्रमेव न संशयः ।
पुत्रोपि जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ।। २४ ।।

जल्दी ही नाश को प्राप्त होता है इसमें संदेह नहीं है । हे देवि ! पुत्र की प्राप्ति होती है तथा वन्ध्यापना दूर होता है ।। २४ ।।

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ।
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ।। २५ ।।

और संपूर्ण रोगों का नाश होता है इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये । मृतवत्सा भी बहुत काल तक जीनेवाले पुत्र को प्राप्त करती है ।। २५ ।।

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं पुनर्देवि न संशयः ।। २६ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मूलनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥

हे देवि ! काकवन्ध्या स्त्री भी पुत्र को प्राप्त होती है, इसमें संशय नहीं है ॥ २६ ॥

उनासीवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथाशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यायां महादेवि वशिष्ठस्यैव चाश्रमे ।
श्री धनेश्वरशर्म्मेति ब्राह्मणो न्यवसत्प्रिये ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे महादेवि ! अयोध्यापुरी में वशिष्ठमुनि जी के आश्रम में धनेश्वर शर्मा नामक एक ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥

स पण्डितो गुणज्ञश्च धनी मानी विचक्षणः ।
स्त्री च पतिव्रता तस्य पतिसेवासु तत्परा ॥ २ ॥

वह पण्डित, गुणज्ञ और धनवान् था और उसकी स्त्री पतिव्रता, पति की सेवा में हमेशा तत्पर रहा करती थी ॥ २ ॥

पुत्रद्वयं तथा जातं विद्यावृत्तिर्बभूव सः ।
भागिनेयस्ततो देवि तद्धनेश्वरशर्मणः ॥ ३ ॥

हे देवि ! उसके दो पुत्र उत्पन्न हुए तथा धनेश्वर शर्मा के स्थान में उसके बहिन का पुत्र आया ॥ ३ ॥

तत्र वासार्थमायातः सपत्नीको वरानने ।
तीर्थयात्राप्रसङ्गेन गृहे तस्यावसद्द्विजः ॥ ४ ॥

हे वरानने ! वह भानजा स्त्रीसहित वहाँ वास करने लगे और तीर्थयात्रा के प्रसंग से उसके घर में रहने लगे ॥ ४ ॥

मासमेकं स्थितस्तत्र भागिनेयस्ततो मृतः ।
दष्टः सर्पेण देवेशि कालपाशावृतो द्विजः ॥ ५ ॥

तब हे देवि ! एक महीना भर तक वहाँ रह करके वह भानजा कालपाश में आकर सर्प के काटने से मर गया ॥ ५ ॥

वर्षमात्रे ततो जाते भागिनेयस्य या वधूः ।
धनेश्वरे महाप्रीतिमकरोत्सा मम प्रिये ॥ ६ ॥

हे प्रिये ! जब भागिनेय को एक वर्ष बीत चुका तब उसकी स्त्री धनेश्वर शर्मा से प्रीति करने लगी ॥ ६ ॥

पुत्राणां मरणं देवि जातं तस्याघरूपिणः ।
गृहे स्वर्णं च रोप्यं च सर्वं तस्यै न्यवेदयत् ॥ ७ ॥

इस प्रकार भागिनेय की स्त्री से रमण करनेवाले उस पापी के पुत्रादिकों का मरना हो गया तब सब द्रव्य धनेश्वर शर्मा ने उस भागिनेय की स्त्री को दे दिया ॥ ७ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ।
यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितः शिवे ॥ ८ ॥
यमाज्ञया वरारोहे षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ९ ॥

हे शिवे ! तब बहुत काल व्यतीत हो जाने पर धनेश्वर शर्मा की भी मृत्यु हो गई । तब यमराज की आज्ञा से दूतों ने उसे महाघोर नरक में पटका फिर साठ हजार वर्षों तक नरक में रहा, क्योंकि नारदजी ने कहा है ॥ ८-९ ॥

अन्यत्रापि कृतं पापं प्रयागे च विनश्यति ।
प्रयागे यत्कृतं पापं रामपुर्यां विनश्यति ॥
अयोध्यायां कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति ॥ १० ॥

और जगह का किया हुआ पाप प्रयाग में नष्ट हो जाता है, और प्रयाग में किया हुआ पाप रामपुरी (अयोध्या) में नष्ट होता है, अयोध्या में किया हुआ पाप फिर नष्ट नहीं होता है ॥ १० ॥

नरकान्निःसृतो देवि बकयोनावजायत ।
पुनर्दर्दुरयोनिं वै काकयोनिं ततोऽगमत् ॥ ११ ॥

हे देवि ! नरक से निकलकर बगला पक्षी की योनि को प्राप्त हुआ, फिर मेढक की योनि को प्राप्त होकर कौवा की योनि में हुआ ॥ ११ ॥

पुनर्मानुषयोन्यां वै धनधान्यसमन्वितः ।
जातः पुण्यतमे देशे देवगन्धर्वसेविते ॥ १२ ॥

फिर गंधर्वों से सेवित पुण्यतम देश में धनधान्य के सहित मनुष्ययोनि में हुआ है ॥ १२ ॥

सर्वविद्यासु विख्यातो गुणज्ञो रूपवांस्तथा ।
पूर्वजन्मनि देवेशि भागिनेयवधूं प्रति ॥ १३ ॥

हे देवेशि ! सब विद्याओं में गुणज्ञ रूपवान् है उसने पूर्व-जन्म में भागिनेय की स्त्री से ॥ १३ ॥

सम्भोगं कृतवान् विप्रः कुक्षिपीडा ततः परम् ।
वंशच्छेदो विशालाक्षि कन्या वै बहवस्तथा ॥ १४ ॥

हे विशालाक्षि ! भोग किया था, इससे कुक्षि में पीड़ा हुई, वंश नष्ट हुआ और बहुत सी कन्याएँ पैदा हुईं ॥ १४ ॥

भागिनेयस्य वै द्रव्यं भुक्तं पूर्वमनेन वै ।
शरीरे बहुधा पीडा परस्त्रीगमनादनु ॥ १५ ॥

और भानजे का धन पूर्वजन्म में इसने भोगा था इससे इसके शरीर में अनेक प्रकार की पीड़ा परस्त्रीगमनादि कर्म से मिली ॥ १५ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं मम वल्लभे ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यञ्च कारयेत् ॥ १६ ।

गायत्रीजातवेदाभ्यां जपं वै कारयेत्ततः ।
दशांशं हवनं कृत्वा तर्पणं मार्जनं तथा ।। १७ ।।

हे वल्लभे ! अब इसकी शांति कहता हूँ सुनो । अपने घर के द्रव्य का छठा भाग पुण्य करे और 'गायत्री' तथा 'जातवेद०' मंत्र का जप करावे और उसका दशांश हवन, दशांश तर्पण और दशांश मार्जन करावे ।। १६-१७ ।।

जीर्णोद्धारं वरारोहे कूपं चैव तडागकम् ।
तद्वदेव च वै कुर्य्यात्षष्टिवृक्षप्ररोपणम् ।। १८ ।।

हे वरारोहे ! फूटा-टूटा कूप और तालाबादिकों को बनवा दे तथा साठ वृक्षों को लगावे ।। १८ ।।

प्रयागे माघमासे तु तुलादानं प्रयत्नतः ।
धूम्रवर्णां तथा गां वै दद्याद्विप्राय सत्कृताम् ।। १९ ।।

यत्न से माघ के महीने में प्रयाग का स्नान करे और धूम्र-वर्णवाली श्रेष्ठ गौ का दान ब्राह्मण को दे ।। १९ ।।

एवं कृते वरारोहे पूर्वपापं विशुद्धयति ।
पुत्रोति जायते देवि वन्ध्यात्वञ्च प्रशाम्यति ।। २० ।।

हे वरारोहे ! ऐसा करने से पहले का किया हुआ संपूर्ण पाप शुद्ध हो जाता है, और पुत्र की प्राप्ति व वन्ध्यापने की शांति हो जाती है ।। २० ।।

काकवन्ध्यात्वशान्त्यर्थं रवियुक्तां तु सप्तमीम् ।
कृत्वा व्रतं वरारोहे सुवर्णं दानमाचरेत् ।। २१ ।।

और काकवन्ध्यापने की शांति के लिये रविवार युक्त सप्तमी के दिन नियम से व्रत करे और सुवर्ण का दान करे ।। २१ ।।

शय्यादानं ततो दद्यान्मृतवत्सा सुपुत्रिणी ।
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ।। २२ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वाषाढनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥

फिर शय्यादान दे, ऐसा करने से मृतवत्सा भी पुत्र को प्राप्त होती है, और सब रोग नाश हो जाते हैं, इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये ॥ २२ ॥

असीवाँ अध्याय समाप्त।

—:०:—

अथैकाशीतितमोऽध्यायः।

शिव उवाच।

कर्णाटे वै ततो देवि पुरं च शिवसञ्ज्ञकम्।
वसन्ति तत्र बहवो वैश्याः पण्योपजीविनः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! कर्णाटक देश में शिवपुर था। वहाँ दूकान से जीविका करनेवाले वैश्यजन रहा करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये वैश्य एको हि धरणीकरविश्रुतः।
तस्य रूपवती भार्या सुन्दरी बहुसंयुता ॥ २ ॥

उस नगर में धरणीकर नाम एक वैश्य प्रसिद्ध था। और उसकी रूपवती स्त्री बहुत सुंदर थी ॥ २ ॥

व्यापारेण महादेवि धनं च बहु सञ्चितम्।
ततो बहुदिने काले तस्य मित्रं द्विजोप्यभूत् ॥ ३ ॥

हे महादेवि ! उसने व्यापार से बहुत-सा धन इकट्ठा किया। तब बहुत दिनों के बाद एक ब्राह्मण से मित्रता हो गई ॥ ३ ॥

ब्राह्मणः सोपि वै भ्रष्टः कष्टं भुक्त्वा दिने दिने ।
स्वर्णं शतपलं देवि हीरकं मौक्तिकं तथा ॥ ४ ॥

ऐश्वर्य से भ्रष्ट हुआ प्रतिदिन कष्ट भोग कर सौ पल सुवर्ण और हीरा, मोती इत्यादिकों को ॥ ४ ॥

स्थापितं ब्राह्मणद्रव्यं स्वगृहे मित्रकारणात् ।
ततो वृद्धे तु संजाते वैश्यमृत्युरभूत्पुरा ॥ ५ ॥

उस वैश्य ने मित्रता के कारण उस ब्राह्मण के द्रव्य को अपने यहाँ रख लिया । बाद में वृद्ध होने पर उस वैश्य की मृत्यु हो गई ॥ ५ ॥

पश्चात्पत्नी मृता तस्य व्रतिनी गर्ववर्जिता ।
वैश्यस्य चाभवत्स्वर्गं दिव्यवर्षसहस्रकम् ॥ ६ ॥

पीछे उसकी स्त्री की भी मृत्यु हो गई, गर्व छोड़कर व्रत करने से उसको दिव्य हजार वर्षवाला स्वर्गवास हुआ ॥ ६ ॥

पत्न्या सह वरारोहे भुक्त्वा स्वर्गफलं ततः ।
बकयोनिं ततो लेभे चक्रवाकस्ततोभवत् ॥ ७ ॥

हे वरारोहे ! स्त्री सहित वह वैश्य स्वर्ग फल को भोग कर फिर बगुला पक्षी की योनि को प्राप्त होकर फिर चक्रवाक की योनि को पहुँचा ॥ ७ ॥

हंसयोन्यां ततो जातो मानुषत्वं ततोऽगमत् ।
पूर्वसम्बन्धतः पूर्वपुण्यात्पातिव्रतादपि ॥ ८ ॥

हंसयोनि को प्राप्त हुआ फिर पूर्वजन्म के किये पुण्य के प्रभाव से तथा पातिव्रत धर्मवाली स्त्री के प्रभाव से मनुष्य योनि में हुआ ॥ ८ ॥

पुनर्विवाहिता देवि ब्राह्मणस्वापहारतः ।
वन्ध्या जाता तु सा नारी दुःखिता साप्यहर्निशम् ॥ ९ ॥

फिर वही स्त्री विवाही गई और पूर्वजन्म में ब्राह्मण का धन नहीं देने से वह स्त्री वंध्या भी रात दिन अतिदुःख भोगने लगी ॥ ९ ॥

तस्य देहेऽभवद्व्याधिः कफवातसमन्वितः ।
धनाढ्यो बहुधा कन्या जायन्ते च पुनः पुनः ॥ १० ॥

और उसके देह में कफ वातादि रोग युक्त व्याधि रहती थी, वह धन से युक्त था उसके वारंवार कन्या ही जन्मती रहीं ॥ १० ॥

अस्य निग्रहहेत्वर्थं शृणु सर्वं वरानने ।
यद्गृहे वित्तमर्द्धं तद् ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ ११ ॥

हे वरानने ! इसके पाप की शांति को सुनो, अपने घर का आधा द्रव्य ब्राह्मण को संकल्प करके देना चाहिये ॥ ११ ॥

ॐलक्ष्म्यै नमोऽथ मंत्रेण दशायुतजपं ततः ।
दशांशहवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १२ ॥

"ॐलक्ष्म्यै नमः" इस मंत्र का दश हजार जप करावे और दशांश हवन, दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे ॥ १२ ॥

गामेकां कृष्णवर्णां वै स्वर्णयुक्तां सवत्सकाम् ।
ब्राह्मणाय ततो दद्यान्मुक्तालाङ्गूलसंयुताम् ॥ १३ ॥

और एक कृष्णा गौ सुवर्ण तथा वस्त्रादि से युक्त मोतियों की पुच्छादि सहित ब्राह्मण को दे ॥ १३ ॥

भोजनं कारयेत्पूज्यान्ब्राह्मणान्वेदपारगान् ।
शतं वा द्विशतं देवि त्रिशतं वा विशेषतः ॥ १४ ॥

हे देवि ! पवित्र वेद के पढ़े हुये ब्राह्मणों को सौ, दो सौ या तीन सौ को भोजन करावे ॥ १४ ॥

पलैः शतैः सुवर्णस्य वेदीं कृत्वा विचक्षणः ।
तन्मध्ये च द्विजस्यैव रौप्यस्यैव च चाकृतिम् ॥ १५ ॥

सौ पल सुवर्ण की वेदी बना करके उसके मध्य में चाँदी की ब्राह्मण की मूर्ति को स्थापन करे ॥ १५ ॥

पूजयेच्छ्रद्धया देवि मन्त्रेणैव पुनः पुनः ॥ १६ ॥

हे देवि ! श्रद्धा से इस मंत्र से उसका पूजन करे ।

'ब्रह्मस्त्वं कपिलो विष्णुः सर्वसाक्षी जगन्मयः ।
ममापराधं देवेश क्षम्यतां पूर्वजन्मनः ॥
द्रव्यं मित्रस्य भो देव स्थापितं स्वगृहे मया ॥ १७ ॥
न दत्तं वै मयाऽज्ञानात् क्षम्यतां परमेश्वर ।'
मन्त्रेणानेन देवेशि पूजनं विधिपूर्वकम् ॥ १८ ॥

हे देवि ! इस मंत्र से विधिपूर्वक पूजन करे ॥ १७-१८ ॥

पूजयित्वा ततो देवि ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।
एवं कृत्वा वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ १९ ॥

हे देवि ! पूजन करके तब ब्राह्मण को दे । ऐसा करने से जल्दी पुत्र की प्राप्ति होती है ॥ १९ ॥

काकवन्ध्या पुनर्देवि कन्यका जननी तथा ।
पुत्रं प्रसूयते देवि न च कन्यां प्रसूयते ॥ २० ॥

हे देवि ! काकवंध्या तथा कन्या को पैदा करनेवाली स्त्री भी ऐसा करने से पुत्र को प्राप्त होती है । फिर कन्या का जन्म नहीं होता है ॥ २० ॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ।
व्याधयः संक्षयं यान्ति नात्रकार्या विचारणा ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वाषाढ-नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८१ ॥

और मृतवत्सा भी चिरंजीवी पुत्र को प्राप्त होती है और

नानाप्रकार की व्याधियाँ नष्ट होती हैं, इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये ॥ २१ ॥

इक्यासींवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ द्व्यशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अन्तर्वेदे विशालाक्षि लोध्रोऽवात्सीत् स पुण्यकृत् ।
गंधर्वाख्ये पुरे देवि विख्याते यमुनान्तरे ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे विशालाक्षि ! गंगा यमुना के बीच में यमुना के तट पर गंधर्वपुर में एक पुण्यवान् लोधा वास करता था ॥ १ ॥

सुभाग्यवान् गुणज्ञो हि बहुभृत्यैः सुपूजितः ।
भूपतिस्तस्य देशस्य दाता भोक्ता विचक्षणः ॥ २ ॥

और वह भाग्यवान् तथा गुणज्ञ बहुत से नौकरों के सहित उस देश का राजा था । वह दाता, भोगनेवाला, पण्डित पैदा हुआ ॥ २ ॥

ब्राह्मणस्य हृता भूमिरज्ञानाद्वै सुरेश्वरि ।
ब्राह्मणोपि विषं भुक्त्वा मृतस्तस्योपरि प्रिये ॥ ३ ॥

हे सुरेश्वरि ! उसने अज्ञान से ब्राह्मण की पृथ्वी छीन ली फिर हे प्रिये ! ब्राह्मण भी विष पान करके मृत्यु को प्राप्त हो गया ॥ ३ ॥

ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ।
यमदूतैर्महाघोरे कुम्भीपाके निपातितः ॥ ४ ॥
यमाज्ञया वरारोहे युगमेकं च पातिताः ।
महादुःखेन संतप्तो बहु कष्टं प्रलब्धवान् ॥ ५ ॥

फिर बहुत-सा काल व्यतीत होने पर उस लोध की मृत्यु हो गई। तब यमदूतों ने उसको महाघोर कुंभीपाक नरक में पटका। तब हे वरारोहे ! यमराज ने एक युग पर्यंत नरक की आज्ञा दी वहाँ महादुखी होकर बहुत कष्ट भोगता रहा ॥ ४-५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि सूकरत्वं ह्यजायत।
ऋक्षयोनिं ततो भूत्वा शुकयोनिं ततोऽगमत् ॥ ६ ॥

हे देवि ! फिर नरक से निकल शूकर की योनि को प्राप्त होकर फिर वहाँ से वानर की योनि को प्राप्त होकर फिर तोता की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

पुनर्मानुषयोनिर्वै मध्यदेशे वरानने।
धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनोऽभवत्तदा ॥ ७ ॥

हे वरानने ! फिर मध्यदेश में धन धान्य सहित, वंश से रहित मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि हृता भूमिर्वरानने।
ब्राह्मणो वै मृतः पूर्वं तदुद्देशेन वै शिवे ॥ ८ ॥

हे देवेशि ! पहले जन्म में जो इसने ब्राह्मण की भूमि छीनी थी उसके उद्देश से ब्राह्मण की मृत्यु हो गई ॥ ८ ॥

अतः पुत्रविहीनोयं कन्यका बहु जायते।
महारोगेण सन्तप्तो मृतपुत्रः पुनः पुनः ॥ ९ ॥

इससे पुत्र रहित हुआ है, कन्या बहुतसी जन्मी, महारोगी है, वारंवार पुत्रादि उसके नष्ट हो जाते हैं ॥ ९ ॥

अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये पूर्वपापस्य शान्तये।
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेन वरानने ॥ १० ॥

अब हे वरानने ! उसकी शांति को मैं कहता हूँ सुनो।

पहले पाप की शांति के लिये "गायत्री", "जातवेद०" मंत्र, "त्र्यंबकं०" इत्यादि जप करावे ॥ १० ॥

दशायुतं जपं कार्यं प्रतिमंत्रैः सुरेश्वरि ।
दशांशं हवनं तद्वत् तर्पणं मार्जनं तथा ॥ ११ ॥

हे सुरेश्वरि ! प्रति मंत्र लक्षसंख्या जप और दशांश हवन, दशांश मंत्रों से तर्पण व दशांश मार्जन करावे ॥ ११ ॥

दशवर्णा ततो दद्याच्छतब्राह्मणभोजनम् ।
भूमिदानं ततो कुर्याच्छतविग्रहमानकम् ॥ १२ ॥

और दश वर्णवाली गौ दे, सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे, और सौ बीघे भूमि का दान दे ॥ १२ ॥

पलपञ्चसुवर्णस्य ब्राह्मणस्य तथाऽऽकृतिम् ।
पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ १३ ॥

और पाँच पल सुवर्ण की मूर्त्ति ब्राह्मण की बनवाकर यथा विधि पूजन कर ब्राह्मण को दे ॥ १३ ॥

प्रयागे मकरे मासि पत्न्या सह वरानने ।
स्नानं कुर्याच्च देवेशि पूर्वपापस्य शुद्धये ॥ १४ ॥

हे वरानने ! मकर के महीने में स्त्री सहित प्रयाग में स्नान करने से पूर्वपाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १४ ॥

एवं कृत्वा वरारोहे पुत्रोत्पत्तिर्भवेच्छ्रुवे ।
वंध्यात्वं नाशमायाति काकवन्ध्या च गर्भिणी ॥ १५ ॥

हे वरारोहे ! ऐसा करने से पुत्र की उत्पत्ति शीघ्र होती है । वंध्यापना शांत होकर काकवंध्या स्त्री गर्भिणी होती है ॥ १५ ॥

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरञ्जीविनमुत्तमम् ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वाषाढ-नक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम द्व्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

और मृतवत्सा चिरंजीवी पुत्र को पैदा करती है और नाना-प्रकार के रोग नष्ट हो जाते हैं इसमें विचार नहीं करना चाहिए ॥ १६ ॥

बयासीवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथ त्र्यशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यायां विशालाक्षि मालाकारोऽवसत्पुरा ।
साधुवृत्तिरतः श्रीमान् ब्राह्मणानां च सेवकः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे विशालाक्षि ! अयोध्यापुरी में साधुवृत्ति में रत लक्ष्मीवान् ब्राह्मणों की सेवा करनेवाला पहले एक माली बसता था ॥ १ ॥

तस्य पत्नी महादुष्टा कुलटा व्यभिचारिणी ।
माल्यं कृत्वा विशालाक्षि जीवयामास बान्धवान् ॥ २ ॥

हे विशालाक्षि ! उसकी स्त्री महादुष्टा कुलटा जारकर्म में मस्त रहती थी और वह माला बनाकर कुटुम्ब का पालन करता था ॥ २ ॥

तस्य मित्रं द्विजोप्येकः स्वर्णं लक्षद्वयं तथा ।
स्थापितं स्वगृहे तस्य गताश्च बहुवासराः ॥ ३ ॥

और उसका एक ब्राह्मण मित्र दो लक्ष सुवर्ण उसको देकर विदेश चला गया । जब उसको बहुत दिन बीत चुके ॥ ३ ॥

याचितं तेन स्वं द्रव्यमर्धं प्राप्तं तदा प्रिये ।
तदर्धं च व्ययं जातं मालाकारस्य वै गृहे ॥ ४ ॥

हे प्रिये ! तब उसने आकर अपना धन माँगा तब आधा द्रव्य मिला और आधा द्रव्य माली ने खर्च कर डाला ॥ ४ ॥

एवं बहुगते काले मालाकारो मृतः पुरा ।
अयोध्यायां विशालाक्षि स्वर्गस्तस्याभवत्किल ॥ ५ ॥

हे विशालाक्षि ! बहुत काल व्यतीत होने पर माली के अयोध्या में मरने से उसका स्वर्गवास हुआ ॥ ५ ॥

लक्षवर्षं वरारोहे भुक्तं स्वर्गफलं शुभम् ।
ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वेऽभवत्पुनः ॥ ६ ॥

हे वरारोहे ! लक्ष वर्षों तक स्वर्ग के फल को भोग पुण्य क्षीण होने पर फिर मनुष्य योनि को प्राप्त होता भया ॥ ६ ॥

मध्यदेशे च देवेशि पुत्रकन्याविवर्जितः ।
तस्य पत्नीं पुनर्देवि या स्थिता पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥

हे देवेशि ! मध्यदेश में पुत्र तथा कन्या से रहित हुआ और उसकी स्त्री जो पूर्वजन्म में थी वही फिर हुई ॥ ७ ॥

विवाहिता च सा देवि व्याधियुक्ता ज्वरातुरा ।
अस्य शान्ति वरारोहे शृणु मे परमेश्वरि ॥ ८ ॥

हे देवि ! विवाहते ही उसकी स्त्री व्याधियुक्त ज्वर से पीड़ित हुई । हे परमेश्वरि ! इसकी शांति सुनो ॥ ८ ॥

षडङ्गं जापयेत्प्राज्ञैः शिवपूजनपूर्वकम् ।
षडक्षरेण मन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ ९ ॥

हे वरानने ! पंडितों से रुद्राध्याय षडंग का पाठ करावे । शिवपूजनपूर्वक और षडक्षर मंत्र का एक लक्ष जप करावे ॥ ९ ॥

हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा।
श्रवणं मासमेकं तु चण्डिकाचरितत्रयम् ॥ १० ॥

और उसका दशांश हवन, मार्जन, तर्पण करावे और एक मास पर्यन्त दुर्गापाठ के तीनों चरित्रों का पाठ सुने ॥ १० ॥

ततः षडंशं देवेशि ब्राह्मणाय समर्पयेत्।
ततो गां कपिलां दद्यात्तिलधेनुं सुपूजिताम् ॥ ११ ॥

हे देवेशि ! और अपने द्रव्य का छठा भाग दान करके फिर गौ का दान तथा तिलधेनु का पूजन करके दान दे ॥ ११ ॥

अश्वं दद्याद्विशालाक्षि महिषीं दुग्धसंयुताम्।
सुवर्णस्य कृतं वृक्षं फलपुष्पसमन्वितम् ॥ १२ ॥

हे विशालाक्षि ! घोड़े का दान वा दूधवाली भैंस का दान दे और फल पुष्पयुक्त सुवर्ण का एक वृक्ष बनवावे ॥ १२ ॥

दद्याद्दशपलं देवि ततः पुत्रः प्रजायते।
मृतवत्सा च या नारी काकवन्ध्या च रोगिणी ॥ १३ ॥

हे देवि ! दश पल का बनवा के दान देवे इससे पुत्र की प्राप्ति होती है और जो मृतवत्सा काकवंध्या स्त्री रोगिणी है ॥ १३ ॥

सर्वासां वाञ्छितं कार्यं जायते नात्र संशयः ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वाषाढनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥

वह भी मनोरथ की सिद्धि को प्राप्त होती हैं इसमें संशय नहीं करना चाहिए ॥ १४ ॥

तिरासीवाँ अध्याय समाप्त।

—:o:—

अथ चतुरशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

श्वेतपर्वे महातीर्थे रामपुर्यां वरानने ।
कान्यकुब्जोऽवसद्विप्रो व्यापारकरणे रतः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे वरानने ! श्वेतपर्व नामक महातीर्थ पर रामपुरी में कान्यकुब्ज ब्राह्मण व्यापार करता था ॥ १ ॥

अश्वादिकं वरारोहे वृषचर्माजिनाम्बरम् ।
प्रत्यहं गृह्यते देवि विक्रयं क्रियते सदा ॥ २ ॥

हे वरारोहे ! वह घोड़ा आदि को व वृषादि के चर्म को सदा बेंचा करता था ॥ २ ॥

द्यूतवेश्यारतो नित्यं परस्त्रीगमनं तथा ।
प्राकरोच्च सुरापानं गुरुदेवाऽपमानकृत् ॥ ३ ॥

और जुवा, वेश्यासंग, परस्त्रीगमन, मदिरापान इत्यादि काम करनेवाला तथा गुरु और देवता का सदा अपमान किया करता था ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले मरणं प्रबभूव ह ।
यमदूतैर्महाघोरे लब्ध्वा क्षिप्तः सुदारुणे ॥ ४ ॥

इस प्रकार बहुत सा काल व्यतीत होने पर उसकी मृत्य हुई । उसको यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर दारुण नरक में डाल दिया ॥ ४ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
नरकान्निःसृतो देवि वानरस्य गतिं गतः ॥ ५ ॥

हे देवि ! साठ हजार वर्षों तक नरक के दुःखों को भोग फिर वहाँ से निकल वानर की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥

ततो रासभयोन्यां वै तुरगस्य ततोऽगमत् ।
मानुषत्वं ततो लेभे पूर्वजन्मफलाच्च सः ॥ ६ ॥

फिर गधे की योनि को प्राप्त होकर घोड़े की योनि को प्राप्त हुआ । फिर पहले जन्म के भोग से अब मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है ॥ ६ ॥

धनधान्यसमायुक्तो रोगयुक्तोऽप्यपुत्रकः ।
कदाचिद् दैवयोगेन पुत्रो भवति भामिनि ॥ ७ ॥

हे भामिनि ! धन धान्यादि से युक्त तथा रोगी रहा और कभी दैवयोग से पुत्र भी पैदा हो गया ॥ ७ ॥

मरणं तस्य वै शीघ्रं ततः कन्या प्रजायते ।
अस्य शान्ति शृणुष्वादौ यथापापं निवर्तते ॥ ८ ॥

तो उसका मरण शीघ्र ही हुआ और कन्या की प्राप्ति हुई । अब उसकी शांति कहता हूँ सुनो ॥ ८ ॥

गृहवित्तषडंशं च पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
पूर्वजन्मनि देवेशि कनिष्ठं भ्रातरं निजम् ॥ ९ ॥

हे देवेशि ! अपने घर के द्रव्य में से छठा भाग दान करके दे । उसने पहले जन्म में अपने छोटे भाई को ॥ ९ ॥

रात्रौ खड्गेन हतवान् तत्पापाच्च सुतक्षयः ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षं वरानने ॥ १० ॥

खड्ग से मारा था । हे वरानने ! इस पाप से इसके पुत्र नष्ट हो जाते हैं और गायत्री के मूल मंत्र का पाँच लक्ष ॥ १० ॥

जपं वै कारयेत्प्राज्ञैर्नित्यं गोविन्दकीर्तनम् ।
होमं वै कारयेत्कान्ते कुण्डे षट्कोणसंयुते ॥ ११ ॥

जप करावे और हे कान्ते ! नित्य गोविन्द का कीर्तन करे षट्कोण कुंड में हवन करावे ॥ ११ ॥

पायसेन विशालाक्षि तिलसर्पिर्युतेन च ।
दशवर्णां ततो दद्याद् ब्राह्मणाय शिवात्मने ।। १२ ।।

हे विशालाक्षि ! घृत, तिल, खीर इनसे हवन करावे और दश वर्णवाली गौ का दान दे ।। १२ ।।

भूमिदानं ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ।
भ्रातुश्चैवाकृतिं कृत्वा रौप्येणैव वरानने ।। १३ ।।
पलसप्तप्रमाणेन पूजां कृत्वा प्रसन्नधीः ।
"देवदेव महादेव चर्मभस्मविभूषण ।। १४ ।।
पूर्वजन्मनि देवेश भ्रातृनाशः कृतो मया ।
तत्पापं क्षम्यतां देव प्रपद्ये शरणं तव ।। १५ ।।"

हे वरानने ! और भूमि का दान दे तथा शय्या का दान देना चाहिये । और भाई की मूर्ति सात पल चाँदी की बनवावे और प्रसन्न होकर इन मंत्रों से पूजन करे ।। १३-१५ ।।

प्रतिमां पूजितां देवि मन्त्रेणानेन वै शिवे ।
दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय द्विजात्मने ।। १६ ।।

हे देवि ! इस मंत्र से मूर्ति का पूजन करके वेद पढ़े हुये ब्राह्मण को देवे ।। १६ ।।

ततो वै भोजयेद्भक्त्या ब्राह्मणान्वेदपारगान् ।
एकाधिकशतं देवि पायसैर्मोदकेन च ।। १७ ।।

फिर भक्तियुक्त होकर वेद के जाननेवाले एक सौ एक ब्राह्मणों को खीर, लड्डू आदि का भोजन करावे ।। १७ ।।

एवं कृत्वा वरारोहे पूर्वपापस्य संक्षयः ।
वन्ध्यात्वं प्रशमं याति पुत्रः सत्यं प्रजायते ।। १८ ।।

हे वरारोहे ! ऐसा करने से पहले के किये हुये संपूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं, और वंध्यापन की शांति होकर पुत्र की प्राप्ति होती है ।। १८ ।।

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा सुपुत्रिणी ।
व्याधयः संक्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥

काकवंध्या मृतवत्सा भी उत्तम पुत्र को पाती है और सब दुःख नष्ट हो जाते हैं, इसमें कुछ भी विचार नहीं करना चाहिये ॥ १९ ॥

चौरासीवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ पञ्चाशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

सकेश्वरपुरे देव्यवात्सीच्चैको द्विजो वरः ।
म्लेच्छवाणीं वदेन्नित्यं म्लेच्छसेवारतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! सकेश्वरपुर में एक उत्तमकुल का ब्राह्मण रहता था परन्तु म्लेच्छवाणी को सदा कहा करता और म्लेच्छों की ही हमेशा सेवा कार्य किया करता था ॥ १ ॥

अतिष्ठन् म्लेच्छनिकटे म्लेच्छविद्यासु पण्डितः ।
मत्स्यं मांसं च मद्यं च भोजनं चाकरोत्सदा ॥ २ ॥

और म्लेच्छों के समीप में ही रहने से म्लेच्छ विद्या ही में रत था । मत्स्य-मांस खाता, मदिरा का पान किया करता था ॥ २ ॥

एवं सर्वं वयो जातं धनं बहु सुसंचितम् ।
तद्धनं भूमिमध्ये हि स्थापितं तु गृहे शुभे ॥ ३ ॥

हे शुभे ! इस तरह इसकी सब अवस्था व्यतीत होने पर अपने धन को भूमि में अपने घर में गाड़ दिया ॥ ३ ॥

एकस्मिन्समये देवि भ्रातुः पुत्रः समागतः ।
रत्नव्यापारकरणे स दक्षश्चतुरस्तथा ॥ ४ ॥

हे देवि ! एक समय में उसके भाई का पुत्र आया, जो रत्नों के व्यापार करने में बहुत ही चतुर था ॥ ४ ॥

ततो गेहस्थितो नित्यं रत्नं बहु सुसंचितम् ।
रत्नलोभेन भो देवि रात्रौ क्षुरिकया तदा ॥ ५ ॥

हे देवि ! उस घर में बहुत सा रत्न इकट्ठा था, रत्नों के लोभ से रात्रि में उसका छूरी से ॥ ५ ॥

कृत्वा शिरच्छेदनं च सुप्तं निशि ममार तम् ।
तत्सर्वं भूमिमध्ये तु स्थापितं रत्नसञ्चयम् ॥ ६ ॥

शिर काटकर सोते हुये को मार डाला और जितना संचित धन था उसको भी भूमि में गाड़ दिया ॥ ६ ॥

भ्रातृजस्य धनं गृह्य व्ययं कृत्वा दिने दिने ।
ततो बहुदिने याते द्विजः पूर्वं मृतः स च ॥ ७ ॥

भतीजे के धन को लेकर प्रति दिन खर्च किया करता था, फिर वह ब्राह्मण पहले मर गया ॥ ७ ॥

पश्चात्पत्नी मृता तस्य तौ गतौ नरकार्णवे ।
षष्टिवर्षसहस्राणि महाकष्टेन पीडितौ ॥ ८ ॥

बाद में उसकी स्त्री भी मर गई तब वे दोनों नरकरूपी समुद्र में गए और साठ हजार वर्षों तक महाकष्ट को भोगते रहे ॥ ८ ॥

नरकान्निःसृतौ द्वौ तु गजयोनी बभूवतुः ।
पुनः कच्छपयोनी वै गोधायोनी बभूवतुः ॥ ९ ॥

नरक से निकल दोनों हस्ती की योनि में गए फिर कछवा की योनि में प्राप्त होकर, गोह की योनि में गए ॥ ९ ॥

एवं योनित्रयं भुक्त्वा सरय्वा उत्तरे तटे ।
मानुषत्वं ततो लेभे भाग्यवान् साधुसञ्ज्ञितः ॥ १० ॥

इस प्रकार तीन योनि को भोग के फिर सरयू के उत्तर किनारे पर मनुष्ययोनि में पैदा हुए और भाग्यवान् साधुनाम-वाला ॥ १० ॥

सुशीलः सुमतिर्दक्षः स्वल्पविद्यायुतो नरः ।
अपुत्रो रोगवान् देवि भूपतिर्नरपूजितः ॥ ११ ॥

हे देवि ! सुन्दर, सुशील स्वभाव, शुद्ध मति, थोड़ी विद्या जाननेवाला, पुत्र से रहित, राजा और मनुष्यों को प्रिय उत्पन्न हुआ ॥ ११ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि भ्रातृपुत्रवधः कृतः ।
निशायां च पुरा देवि तेन दोषेण नो सुतः ॥ १२ ॥

हे देवेशि ! पहले जन्म में उसने रात को भाई का वध किया था, इस दोष से इसके पुत्र नहीं हुआ ॥ १२ ॥

म्लेच्छस्य सेवनाद्देवि म्लेच्छस्याशुचिभाषणात् ।
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसम्भवः ॥ १३ ॥

हे देवि ! म्लेच्छ की सेवा करने से तथा म्लेच्छों से बातचीत करने से शरीर में रोग हुआ है ॥ १३ ॥

यत्तु दानं कृतं पूर्वं दत्ता शय्या सुरेश्वरि ।
तत्फलेन महादेवि धनाढ्यत्वमजायत ॥ १४ ॥

हे सुरेश्वरि ! वह पूर्वजन्म में शय्यादान करने से धनाढ्य हुआ ॥ १४ ॥

अनाचारः कृतः पूर्वं पुत्रदारयुतेन च ।
तेन पापेन भो देवि नरः कन्याप्रजो भवेत् ॥ १५ ॥

हे देवि ! पुत्र स्त्री सहित अनाचार में रत रहने से कन्या ही संतान उत्पन्न होती रही ॥ १५ ॥

अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षं वरानने ॥ १६ ॥

हे देवि ! अब उसकी शांति कहता हूँ सुनो । गायत्री मूल मंत्र का पाँच लक्ष ॥ १६ ॥

जपश्च कारयेद्देवि षडंशं दानमाचरेत् ।
होमश्च कारयेत्कान्ते कुण्डे चैव सुसंस्कृते ॥ १७ ॥

हे देवि ! जप करवावे, अपने घर के द्रव्य का छठा भाग दान करके दे और शुद्ध कुंड बनवाके हवन करवावे ॥ १७ ॥

दशांशं तर्पणं देवि मार्जन तद्दशांशतः ।
भ्रातृपुत्रस्य प्रतिमां कारयेदद्रिनन्दिनि ॥ १८ ॥

हे देवि ! उसका दशांश तर्पण और दशांश मार्जन करावे । भाई के पुत्र की एक मूर्ति बनवावे ॥ १८ ॥

पलं दशसुवर्णस्य विधिवत्पूजयेत्ततः ।
मन्त्रेणानेन देवेशि गन्धधूपादिभिस्तथा ॥ १९ ॥

हे देवेशि ! दश पल सुवर्ण की प्रतिमा बनवाकर विधिवत् गंध धूपादि से इस मंत्र से पूजन करे ॥ १९ ॥

गणाधिप सुराध्यक्ष सर्वसिद्धिप्रदायक ।
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥ २० ॥
रौप्यपात्रे स्थितां तां तु प्रतिमां प्रार्थयेत्ततः ।
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा पापं मम पुरा कृतम् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रपद्ये शरणं तव ॥ २१ ॥

और चाँदी के पात्र में उस मूर्ति को स्थापित कर प्रार्थना करे कि जो मैंने अज्ञान से अथवा भूल से पहले जन्म में पाप किया है, हे देव ! उसको आप शांत करो । आपकी शरण में आया हूँ ॥ २०-२१ ॥

ॐ गणपतये नमः । ॐ लक्ष्म्यै नमः । ॐ सूर्याय नमः ।
ॐ शिवाय नमः । ॐ विश्वयोनये नमः । ॐ गरुडाय नमः ।
ॐ नंदिकेश्वराय नमः ॥

एभिर्मन्त्रैस्तु सर्वाणि वस्तूनि दापयेत्ततः ।
कलशं पूजयेद्देवि गणाधिपस्वरूपिणम् ॥ २२ ॥

हे देवि! इन मंत्रों से सब वस्तु निवेदन कर फिर गणाधिप-रूपी कलश का पूजन करे ॥ २२ ॥

गन्धपुष्पैश्च ताम्बूलैर्वस्त्रैर्नानाविधैरपि ।
प्रतिमां पूजितां देवि ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ २३ ॥

हे देवि ! गंध, पुष्प, तांबूल तथा नाना प्रकार के वस्त्रादि से पूजन की हुई मूर्ति को ब्राह्मण को दे देवे ॥ २३ ॥

दशवर्णास्ततो दद्याद्वृषमेकं वरानने ।
पञ्चपात्रं ततो दद्याद्ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥ २४ ॥

हे वरानने ! दश वर्णोंवाली गौ और एक बैल तथा पंच-पात्र ब्राह्मण को दे, पीछे ब्राह्मणों को भोजन करवावे ॥ २४ ॥

रविवारेण संयुक्तसप्तम्यां विधिपूर्वकम् ।
उपोषणं नियमतः पत्न्या सह वरानने ॥ २५ ॥

हे वरानने ! रविवार से युक्त सप्तमी के दिन विधिपूर्वक नियम से स्त्री सहित व्रत करे ॥ २५ ॥

सप्तवत्सरपर्यन्तं प्रकुर्याद्वै सुरेश्वरि ।
ततस्तूद्यापनं कुर्याद्यथाशक्ति सदाशिवे ॥ २६ ॥

हे सुरेश्वरि ! सात वर्ष तक करे फिर उद्यापन करे और शक्ति के अनुसार दक्षिणा देवे ॥ २६ ॥

दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय तपस्विने ।
कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥ २७ ॥

वेद पढ़े हुये तपस्वी उत्तम ब्राह्मण को पंचरत्नों से युक्त पेठा और नारियल दे ॥ २७ ॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये ।
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ २८ ॥

पूर्व पाप की शुद्धि के लिये गंगाजी के मध्य में दान दे। ऐसा करने से जल्दी ही पुत्र की प्राप्ति हो ॥ २८ ॥

सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नीहारा भास्कराद्यथा ॥ २९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तराषाढनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामपञ्चाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥

और सब रोग नाश को प्राप्त हों जैसे सूर्य के तेज से ओस के कण व बर्फ नष्ट होते हैं ॥ २९ ॥

पचासीवाँ अध्याय समाप्त।

—:o:—

अथ षडशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मध्यदेशे महादेवि ब्राह्मणो वेदपारगः ।
जयदेवाभिधो विप्रो विख्यातश्चातिशीलवान् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे महादेवि ! मध्यदेश में जयदेव नामक वेदों को जाननेवाला अति शील स्वभाववाला ब्राह्मण था ॥ १ ॥

तस्य भार्या शीलवती सुशीला शीलरूपिणी ।
तस्याः पुत्रत्रयं जातं गुणज्ञं वेदपारगम् ॥ २ ॥

उसकी स्त्री शीलस्वभाववाली सुशीला नामवाली थी। उसके तीन पुत्र गुणी और वेदों के जाननेवाले उत्पन्न हुए ॥ २ ॥

पुत्राः सर्वे गुणज्ञाश्च वेदवेदाङ्गपारगाः ।
ज्येष्ठपुत्रस्य चोद्वाहे स्वसा तस्य समागता ॥ ३ ॥

सब पुत्र गुणज्ञ और वेद-वेदांगों को जाननेवाले थे। उनमें ज्येष्ठ पुत्र के विवाह में उस ब्राह्मण की बहिन आई थी ॥ ३ ॥

भगिन्याश्चादरं कृत्वा बहुमानेन पार्वति ।
विवाहे च समाप्ते तु ज्ञातयः स्वेषु वेश्मसु ॥ ४ ॥

हे पार्वति ! उस ब्राह्मण ने बहुत सम्मान से बहिन का आदर किया, फिर विवाह समाप्त होने के बाद उसके भाई बांधव सब अपने-अपने घरों को गये ॥ ४ ॥

गताः सर्वे विशालाक्ष्ययाचयद्भगिनी च सा ।
ताटंकं स्वर्णरत्नाढ्यं भ्रातृपत्नी प्रकोपिता ॥ ५ ॥

हे विशाल नेत्रोंवाली ! तब उस ब्राह्मण की बहिन ने अपने भाई से सुवर्ण रत्नों से जड़े हुये करनफूल नाम आभूषण को माँगा । इस पर उसके भाई की स्त्री रुष्ट हो गई और ईर्ष्या के बचन बोली ॥ ५ ॥

श्रुत्वेर्ष्यया सवत्सा तु तदायाता स्ववेश्मनि ।
स्त्रीस्वभावाच्च देवेशि मृता सा भगिनी गृहे ॥ ६ ॥

हे देवेशि ! ईर्ष्या के वचन को सुनकर पुत्रसहित अपने घर को चली आयी । स्त्रीस्वभाव से वह अपने घर में आकर मर गई ॥ ६ ॥

तदुद्देशेन देवेशि शरीरं निशि सात्यजत् ।
ततो बहुदिने याते तस्य मृत्युरभूत्तदा ॥ ७ ॥

हे देवेशि ! उस क्रोध से उसने रात्रि में शरीर को छोड़ दिया । पीछे बहुत दिन व्यतीत होने पर उस ब्राह्मण की भी मृत्यु हो गई ॥ ७ ॥

पत्नी तस्य सती जाता सत्यलोकमभूत्तदा ।
वर्षं कोटित्रयं देवि सत्यलोकेऽवसत्पुनः ॥ ८ ॥

तब उसकी स्त्री सती हो गई फिर उसे सत्यलोक की प्राप्ति हुई । हे देवि ! फिर उसने तीन करोड़ वर्ष तक सत्यलोक में वास किया ॥ ८ ॥

मर्त्यलोके मनुष्यत्वं लब्धं पुण्यक्षये सति ।
धनधान्यसमायुक्तो विद्यावाञ्छास्त्रपारगः ॥ ९ ॥

पुण्य समाप्त होने के बाद मृत्युलोक में मनुष्य शरीर को प्राप्त हुआ और धनधान्य युक्त शास्त्रों को जाननेवाला (पारंगत) हुआ ॥ ९ ॥

कृतं तेन पुरा पापं भगिन्या दारकारणात् ।
पुत्रो न जायते देवि कन्योत्पन्ना विनश्यति ॥ १० ॥

उसने स्त्री के वश होकर बहिन का पाप किया इस कारण से पुत्र नहीं होता और कन्या होकर भी मर जाती है ॥ १० ॥

शरीरे सततं दुःखं मध्ये तस्य प्रजायते ।
काकवन्ध्या भवेद्भार्या मृतवत्सा सुदुःखिता ॥ ११ ॥

उसके शरीर में सदा दुःख रहता है और उसकी स्त्री काकवंध्या अर्थात् एक भी संतान न जन्मनेवाली होती है। अथवा संतान हो होकर मर जाती है और हमेशा दुःखी बनी रहती है ॥ ११ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु पार्वति ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १२ ॥

हे पार्वति ! अब इसकी शांति कहता हूँ, सो तुम सब सुनो-घर में जो धन हो उसके छठें भाग को पुण्य कर दे—(अर्थात् उसको पुण्य कार्य में लगावे) ॥ १२ ॥

वापीकूपतडागानां जीर्णोद्धारं प्रयत्नतः ।
वाटिकां मार्गमध्ये तु सहितां शीतवारिणा ॥ १३ ॥

बावड़ी, कुवाँ, तालाब इनकी मरम्मत करा देनी चाहिये और मनुष्यों के जाने की राह में कुवाँ बनवा कर बगीचा लगा देना चाहिये ॥ १३ ॥

गायत्री जातवेदाभ्यां जपं वै कारयेत्ततः ।
लक्षद्वयं विशालाक्षि हवनं तद्दशांशतः ॥ १४ ॥

तर्पणं मार्जनं तद्वद्गोदानं विधिवत्ततः ।
एवं कृते वरारोहे तस्य पुत्रः प्रजायते ।। १५ ।।

"गायत्री" और "जातवेद०" मंत्रों का दो लाख जप कराकर पीछे उसके दशांश का हवन करावे और उसी हिसाब से तर्पण और मार्जन तथा विधिपूर्वक गोदान कराना चाहिए। ऐसा करने से उसके पुत्र उत्पन्न होता है ।। १४-१५ ।।

गुणज्ञः सर्ववस्तूनां साधूनां संमतस्तथा ।
स्वर्णदानं विशालाक्षि पलपञ्चमितं तथा ।। १६ ।।

वह पुत्र संपूर्ण वस्तुओं के गुण को जाननेवाला और सज्जनों से सम्मानित होता है। हे विशालाक्षि ! उसमें से पाँच पल सोना ।। १६ ।।

ब्राह्मणाय ततो दद्यात्पूजयेद्युवतिं ततः ।
वस्त्रालङ्कारसिन्दूरैर्गन्धाद्यैः सुमनोहरैः ।। १७ ।।

ब्राह्मण को दान देवे और वस्त्र, आभूषण, सिंदूर, गंध आदि मनोहर वस्तुओं से जवान स्त्री का पूजन करे ।। १७ ।।

ताटङ्कैर्मुद्रिकाभिश्च गन्धमाल्यैस्तथैव च ।
सर्वं पापं क्षयं याति व्याधिनाशोभवेद्ध्रुवम् ।। १८ ।।

करनफूल आभूषण से, मुद्रिकाओं से, गंधमालाओं से पूजन करे तो संपूर्ण पापों का नाश हो और रोग भी नष्ट होवे ।। १८ ।।

ब्राह्मणीं पार्वतीरूपां ब्राह्मणं शिवरूपिणम् ।
भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्मोदकैः शतसंख्यकैः ।। १९ ।।

ब्राह्मणी को पार्वती का रूप समझकर और ब्राह्मण को शिवरूप समझकर लड्डुओं से तथा और भी सैकड़ों तरह के भोजनों से तृप्त करे ।। १९ ।।

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ।
कन्यकाजननी या तु पुत्रवत्यपि जायते ॥ २० ॥

ऐसा करने पर काकवंध्या स्त्री के भी पुत्र होता है, मृतवत्सा भी पुत्रवाली होती है और कन्या जन्मनेवाली भी पुत्र जन्मनेवाली हो जाती है ॥ २० ॥

एवं न जायते चेत्तु सप्तजन्मस्वपुत्रकः ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तराषाढनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम षडशीतितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥

ऐसा न करने से सात जन्म तक वह अपुत्र ही रहता है, इसमें संदेह नहीं करना चाहिये ॥ २१ ॥

छियासीवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ सप्ताशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गुर्जरे नगरे देवि न्यवसज्ज्ञानवान् द्विजः ।
बलभद्रः समाख्यातो वेदानां पाठकः सुधीः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! गुर्जर नगर में एक ज्ञानवान् वेदपाठी बलभद्र नाम का ब्राह्मण वास करता था ॥ १ ॥

ऋग्वेदं च यजुर्वेदं सामवेदमथर्वणम् ।
पठनं चैव कुरुते चतुर्वेदी द्विजोत्तमः ॥ २ ॥

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्वणवेद इन चारों वेदों का पाठ किया करता था, इस प्रकार वह चारों वेदों का जाननेवाला श्रेष्ठ ब्राह्मण था ॥ २ ॥

एकस्मिन्दिवसे देवि देशे कश्चिन्मृतः खलु ।
भोजनं तेन संस्कारं विना तत्र कृतं प्रिये ॥ ३ ॥

हे देवि ! एक दिन उस देश में कोई मनुष्य मर गया और वहाँ संस्कार किये विना ही उस ब्राह्मण ने भोजन कर लिया ॥ ३ ॥

म्लेच्छद्रव्यं गृहीतं च भुक्तं पुत्रयुतेन च ।
पत्न्या सह वरारोहे ततो वृद्धवयो गतः ॥ ४ ॥

म्लेच्छ के धन को ले लिया, और स्त्री पुत्र के सहित उसको भोग कर वृद्ध अवस्था को प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥

मरणं तस्य वै जातं शङ्केश्वरपुरे यदा ।
यमाज्ञया तदा देवि यमदूतैरितस्ततः ॥ ५ ॥
नरके पातितं पश्चान्मर्त्यलोके ततोगमत् ।
कुक्कुटत्वं विशालाक्षि काकं पारावतं ततः ॥ ६ ॥

फिर शंकेश्वरपुर में उसकी मृत्यु हो गई । हे देवि ! तब धर्मराज की आज्ञा से उसको उनके दूतों ने जहाँ तहाँ नरकों में पटका, वहाँ का दुःख भोगकर मुर्गा, कौआ और कबूतर का शरीर धर के मृत्युलोक में उत्पन्न हुआ ॥ ५-६ ॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे शुभे देवि कुले महत् ।
स पण्डितो महाविद्वाञ्ज्ञातिधर्मविचक्षणः ॥ ७ ॥

हे देवि ! फिर मनुष्य के शरीर को प्राप्त हो बड़े सुन्दर कुल में महाविद्वान् पण्डित और अपने जातीय धर्म को जानने-वाला उत्पन्न हुआ है ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि म्लेच्छान्नं भोजनं कृतम् ।
तेन पापेन भो देवि पुत्रः कन्या न जायते ॥ ८ ॥

हे देवेशि ! पहले जन्म में इसने म्लेच्छ का अन्न खाया था उस पाप से उसके पुत्र या कन्या नहीं होती है ॥ ८ ॥

प्रेतान्नं भोजनं कृत्वा संस्कारो न कृतः पुरा ।
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसम्भवः ॥ ९ ॥

पहले जन्म में मृतककर्म न होने के पहले ही प्रेत का अन्न खाया है, हे देवि ! उस पाप से शरीर में रोगी रहता है ॥ ९ ॥

अस्य शान्ति शृणुष्वादौ पूर्वपापप्रणाशिनीम् ।
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय प्रकल्पयेत् ॥ १० ॥

पहले पूर्व पाप को नाश करनेवाली इसकी शांति को सुनो । घर में जो धन हो उसका आठवाँ हिस्सा ब्राह्मण को दान कर दे ॥ १० ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं ततः ।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥ ११ ॥

और मूल मंत्र गायत्री का लक्ष जप करावे और उसका दशांश हवन, तर्पण और मार्जन करावे ॥ ११ ॥

दशवर्णां ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ।
कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥ १२ ॥

इसके बाद दश वर्ण की गौओं का दान, शय्या दान और पंचरत्न रखकर कुम्हड़ा, नारियल का दान करे ॥ १२ ॥

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापप्रणाशनम् ।
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ १३ ॥

इन सब चीजों का गंगाजी के मध्य में दान करना चाहिये । इसके करने से पूर्वजन्म के पापों का नाश होता है और शीघ्र ही पुत्र का जन्म होता है ॥ १३ ॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तराषाढनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनान्नाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥

सारी व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं और काकवन्ध्या स्त्री के भी पुत्र होता है, इसमें संदेह नहीं है ॥ १४ ॥

सतासीवाँ अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथाष्टाशीतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पवनस्य महादेशे मारुते नगरे शुभे ।
गौतमो नाम विख्यातो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि पवन के बड़े देश में सुंदर मारुत नगर में गौतम नाम से विख्यात वेद का जाननेवाला एक ब्राह्मण था ॥ १ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षि मालिनी मातृपालिनी ।
धनञ्च बहु संगृह्य म्लेच्छसेवारतो हि सः ॥ २ ॥

उसकी स्त्री मालिनी नामवाली माता की सेवा करनेवाली थी और वह ब्राह्मण अपने घर के धन से म्लेच्छों की सेवा किया करता था ॥ २ ॥

तस्य मित्रो द्विजः कश्चित् तपस्वी सत्यवाक्छुचिः ।
आगतस्तस्य निकटे प्रेम्णा तत्र तपोकरोत् ॥ ३ ॥

उसका कोई मित्र ब्राह्मण, तपस्वी, सत्य बोलनेवाला तथा पवित्र था, वह उसके पास आकर वहीं पर प्रेम से तपस्या करने लगा ॥ ३ ॥

अब्दे चैके ततो जाते पुनः काश्यां गतो पि सः ।
स्वर्णरत्नं महादेवि गौतमाय सर्मापितम् ॥ ४ ॥

एक वर्ष के बाद फिर वह अपना सोना-रत्न गौतम ब्राह्मण को देकर काशी को चला गया ॥ ४ ॥

रक्षार्थं तेन द्रव्यं च गृहीतं गौतमेन च ।
वाराणस्यां ततो गत्वा तपस्वी प्राणमत्यजत् ॥ ५ ॥

गौतम ने रक्षा के लिए यह द्रव्य ग्रहण किया, फिर वह तपस्वी काशीजी में जाकर मर गया ॥ ५ ॥

गौतमेन तु स्वद्रव्यं स्थापितं भूमिमध्यके ।
तद्द्रव्यं ब्राह्मणस्यैव पुत्रदारयुतेन च ॥ ६ ॥

गौतम ने अपना धन तो भूमि में गाड़ दिया और उस ब्राह्मण के धन को स्त्री पुत्र सहित खर्च कर दिया ॥ ६ ॥

भक्षितं तेन विक्रीय बहुवर्षे गते शिवे ।
गौतमस्य ततो मृत्युर्वृद्धे जाते वरानने ॥ ७ ॥

हे शिवे ! उस स्वर्णरत्न को बेचकर बहुत वर्ष बीत जाने पर हे वरानने ! वृद्ध गौतम की मृत्यु हो गई ॥ ७ ॥

गन्धर्वस्य ततो लोकं विंशतिर्वै सहस्रकम् ।
तेन भुक्तं विशालाक्षि गन्धर्वैः सह किन्नरैः ॥ ८ ॥

हे विशालाक्षि ! वह बीस हजार वर्ष गन्धर्वलोक में रहकर गंधर्व व किन्नरों समेत भोग करता रहा ॥ ८ ॥

ततः पुण्ये क्षये जाते हंसयोनिं ततोऽगमत् ।
मृगयोनिं ततो भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽगमत् ॥ ९ ॥

पुण्य क्षीण होने पर हंसयोनि में जन्म लेकर पीछे मृगयोनि में जन्म लेकर भोगता रहा । बाद मनुष्य शरीर में जन्म लिया ॥ ९ ॥

स भाग्यवान् महाधीरः पुण्याचारे सदा मतिः ।
पूर्वजन्मनि देवेशि मित्रद्रव्यं विनाशितम् ॥ १० ॥

वह बड़े भाग्यवाला महाधीर पुण्यकर्म में सदा बुद्धि रखनेवाला उत्पन्न हुआ हे देवेशि ! इसने पूर्वजन्म में मित्र के धन का नाश किया था ॥ १० ॥

अदत्तं यद्विशालाक्षि तेन पापेन तत्प्रिया ।
वन्ध्या भवति वै नारी काकवन्ध्या च जायते ॥ ११ ॥

हे विशालाक्षि ! इसने मित्र का धन नहीं दिया इस पाप से इसकी स्त्री काकवंध्या हुई ॥ ११ ॥

रोगयुक्तोऽभवद्देहो ज्वराश्च विविधास्तथा ।
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ॥ १२ ॥

हे देवि ! देह रोग से युक्त है, नानाप्रकार के ज्वर रहते हैं, अब इसकी शांति कहता हूँ सुनो ॥ १२ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
वापीकूपतडागानि जीर्णोद्धारं च कारयेत् ॥ १३ ॥

अपने घर के छठे हिस्से धन का पुण्य करावे । फूटे-टूटे बावड़ी, कुआँ, तालाब का सुधार करावे ॥ १३ ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं शिवे ।
हवनं तद्दशांशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १४ ॥

हे शिवे ! गायत्री के मूल मन्त्र का लक्ष जप करावे और उसके दशांश का हवन और पुण्यकर्म करावे ॥ १४ ॥

गामेकां तरुणीं शुभ्रां कांस्यदोहां सवत्सकाम् ।
सतीं सवस्त्रां विप्राय दद्याद्वेदविदे ततः ॥ १५ ॥

एक युवा गौ सुंदर रूपवाली सवत्सा काँसी के दोहनपात्र सहित पीठ वस्त्र के साथ वेद जाननेवाले ब्राह्मण को दे देवे ॥ १५ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेद्दत्त्वा यथाशक्त्या तु दक्षिणाम् ।
ज्ञातिभिः सह भुञ्जीत ततो नृत्यन्तु कारयेत् ॥ १६ ॥

दान देकर पीछे से ब्राह्मणों को भोजन करावे और अपनी

शक्ति के अनुसार दक्षिणा दे, अपने भाइयों के साथ भोजन करे, पीछे नृत्यादिकों को करावे ।। १६ ।।

पुराणश्रवणं देवि चण्डिकाचरणार्चनम् ।
अन्नदानं च भो देवि घृतदानं विशेषतः ।। १७ ।।

हे देवि ! पुराणों का श्रवण करे और देवीजी का पूजन करे । अन्न और घृत का दान विशेष करके दे ।। १७ ।।

एवं कृते न सन्देहो वंशवृद्धिर्भविष्यति ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति सुखानि विविधानि च ।। १८ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे श्रवणनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्टाशीतितमोऽध्यायः ।। ८८ ।।

ऐसा करने से वंश की अवश्य वृद्धि होती है, इसमें संदेह नहीं करना चाहिये । सब रोग नष्ट होते हैं, और अनेक प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं ।। १८ ।।

अठासीवाँ अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथैकोननवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गान्धारदेशे वै शुभ्रे गान्धारस्य पुरे शुभे ।
वसन्ति तत्र बहवो जनाः पुण्योपजीविनः ।। १ ।।

शिवजी कहते हैं—गांधार देश में, गांधारपुर है वहाँ पुण्य से जीनेवाले लोग वास करते हैं ।। १ ।।

तन्मध्ये ब्राह्मणोप्येको लक्ष्मीवान् गुणवर्जितः ।
यवनानां महन्मित्रं सार्द्धं म्लेच्छेन तिष्ठति ।। २ ।।

वहाँ एक धनवान् ब्राह्मण गुणहीन म्लेच्छों का अतिमित्र म्लेच्छों के साथ हमेशा रहा करता है ।। २ ।।

ऊर्णादिकं वरारोहे विक्रयं कुरुते सदा ।
म्लेच्छान्नं भुज्यते नित्यं म्लेच्छभार्याविहारकृत् ॥ ३ ॥

हे वरारोहे ! ऊन बेचा करता था और नित्य म्लेच्छों के अन्न को भोजन किया करता, और म्लेच्छों की स्त्रियों से विहार करता था ॥ ३ ॥

एवं बहु वयो जातं ततो वै मरणं खलु ।
यमदूतैर्महाघोरैर्नरकेऽत्यन्तदारुणे ॥ ४ ॥

ऐसा करते बहुत अवस्था बीत गई, फिर वृद्ध होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ, तब यमराज के दूतों ने उसको महाघोर दारुण नरक में डाल दिया ॥ ४ ॥

निक्षिप्तं तेन वै देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
भुक्तं सुदुःसहं कर्म विविधं नरके फलम् ॥ ५ ॥

हे देवि ! तब वहाँ उसने साठ हजार वर्ष तक अपना दुःसह कर्म व नानाप्रकार के नरकों के फलों को भोगा ॥ ५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिरभूत्पुरा ।
रासभस्य ततो योनिमृक्षत्वेभूत्पुनः प्रिये ॥ ६ ॥

हे देवि ! नरक से निकलकर भेड़िये की योनि में जन्मा पीछे गधे की योनि में जन्मा, फिर वानर-योनि में जन्म लिया ॥ ६ ॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे मध्यदेशे सुरेश्वरि ।
पूर्वजन्मनि म्लेच्छान्नं भुक्तं पुत्रेण वै शिवे ॥ ७ ॥

हे सुरेश्वरि ! फिर मध्य देश में मनुष्य शरीर को प्राप्त हुआ है, पूर्वजन्म में पुत्र समेत वह म्लेच्छों का अन्न भोजन किया करता था ॥ ७ ॥

अतो वंशस्य विच्छेदो व्याधीनां चोद्भवस्तथा ।
अस्य दोषस्य वै शान्ति शृणु मे परमेश्वरि ॥ ८ ॥

इससे इसके वंश का नाश और नानाप्रकार की व्याधियों की उत्पत्ति होती है, इस दोष की शांति को तुम मुझसे सुनो ॥ ८ ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ।
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥ ९ ॥

हे वरानने ! गायत्री मंत्र का लक्ष जप करावे उसके दशांश का हवन, तर्पण व मार्जन करावे ॥ ९ ॥

सवृषं पञ्च गोदानं वस्त्रदानं विशेषतः ।
सहस्रघटदानं च गोदानं च सुरेश्वरि ॥ १० ॥

हे सुरेश्वरि ! बैलसहित पाँच गौवों का दान तथा विशेष करके वस्त्रों का दान, हजार घटों का दान और गोदान ये सब यथाविधि करावे ॥ १० ॥

एवं कृते न सन्देहो वंशवृद्धिर्भविष्यति ।
रोगा विनाशमायान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे श्रवण-नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकोन नवतितमोऽध्यायः ॥ ८९ ॥

ऐसा करने से वंश की वृद्धि होती है इसमें संदेह नहीं है और सम्पूर्ण रोग नष्ट होते हैं। इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये ॥ ११ ॥

नवासीवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ नवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

काश्मीरनगरे देवि ब्राह्मणोध्यवसत्पुरा ।
खण्डशर्मेति विख्यातो गङ्गाख्या स्त्री तु कर्कशा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! काश्मीर नगर में पहले एक ब्राह्मण वास करता था वह खण्डशर्मा नाम से विख्यात था और उसकी स्त्री गंगा बड़ी कर्कशा थी ॥ १ ॥

पतिवाक्यं न साकार्षीद्विक्रयं कुरुते सदा ।
घृततैलं च देवेशि दधि तक्रं पुनर्गुडम् ॥ २ ॥

हे देवेशि ! वह पति के वचन को नहीं मानती थी, सदा घृत, तैल, दधि, तक्र तथा गुड़ को बेचा करती थी ॥ २ ॥

अश्वं च वृषभं चैव चामरं धातुवस्तु च ।
प्रत्यहं विक्रयं कर्त्री व्ययकर्त्री दिने दिने ॥ ३ ॥

घोड़ा, वृषभ, चमर, धातुमय वस्तुओं को भी नित्य बेचा करती और नित्य खर्च किया करती थी ॥ ३ ॥

एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ।
मरणं तस्य वै जातं ब्राह्मणस्य तदा शिवे ॥ ४ ॥

हे वरानने ! इस प्रकार सब अवस्था बीत गई, तब वृद्ध हो जाने पर उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

यमराजाज्ञया दूतैर्नरके कर्द्दमे तथा ।
निक्षिप्तः षष्टिसाहस्रं भुक्त्वा वै यातना तथा ॥ ५ ॥
नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिस्ततोभवत् ।
रासभस्य पुनर्योनिर्मेषयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ६ ॥

यमराज की आज्ञा से दूतों ने उसको कर्दम नरक में साठ हजार वर्षों तक पटका । वहाँ पीड़ा भोग करके नरक से निकल

भेड़िया की योनि को प्राप्त हुआ फिर गधा की योनि, फिर मेंढक की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ५-६ ॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे मध्यदेशे वरानने ।
धनधान्यसमायुक्तः पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ७ ॥

हे वरानने ! पीछे मध्यदेश में मनुष्ययोनि में धनधान्य सहित और पुत्र कन्या से रहित पैदा हुआ ॥ ७ ॥

पुनर्विवाहिता सा तु पूर्वजन्मफलाच्छुभे ।
शरीरे सततं रोगो वायोः सञ्जायते शिवे ॥ ८ ॥

हे शुभे ! पूर्वजन्म के फल से फिर वही स्त्री विवाही गई, और इसके शरीर में निरंतर वायु के रोग होते हैं ॥ ८ ॥

ब्राह्मणस्य स्वयं धर्मं यतस्त्यक्तं पुरा शुभे ।
अतः पुत्रविहीनेयं मृतवत्सात्वमाप्नुयात् ॥ ९ ॥

हे शुभे ! जो पूर्वजन्म में इसने ब्राह्मण का धर्म त्याग दिया था इसलिये यह स्त्री पुत्रहीन होकर मृतवत्सा को प्राप्त हुई है ॥ ९ ॥

अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि सुशोभने ।
गृहवित्तषडंशं च ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १० ॥

अब इसकी शांति कहता हूँ हे देवि ! सुनो । घर के धन के छठे भाग को ब्राह्मण को दान कर दे ॥ १० ॥

गायत्री चायुतं जप्त्वा मूलमन्त्रं शिवस्य तु ।
षडक्षरं सप्रणवं लक्षमेकं वरानने ॥ ११ ॥

हे वरानने ! दश हजार गायत्री का जप और शिव के "ॐ नमः शिवाय" यह छः अक्षरों का मंत्र एक लक्ष जप करवावे ॥ ११ ॥

हवनं यद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ।
ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्या हविषा पायसेन च ॥ १२ ॥

उसका दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे, फिर भक्ति से घृत, खीर आदि भोजन तैयार करके ॥ १२ ॥

पञ्चाशत्संख्यया देवि यथाशक्त्या तु दक्षिणाम् ।
प्रयागे माघमासे तु स्नानं भार्यासमन्वितः ॥ १३ ॥

पचास ब्राह्मणों को भोजन करावे । हे देवि ! शक्ति के अनुसार दक्षिणा दे । माघ महीने में स्त्रीसहित प्रयाग में नियम से स्नान करे ॥ १३ ॥

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं विधिपूर्वं वरानने ॥ १४ ॥

कुम्हड़ा और नारियल को पंचरत्न से भर के विधिपूर्वक गंगाजी के मध्य में दान कर दे ॥ १४ ॥

एवं कृते न संदेहो वंशवृद्धिर्भवेदनु ।
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति वन्ध्या भवति पुत्रिणी ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे श्रवणनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥

ऐसा करने से वंश की वृद्धि होती है इसमें संदेह नहीं । सम्पूर्ण रोग नष्ट होवें और वन्ध्या स्त्री पुत्रवाली होती है ॥ १५ ॥

नब्बेवाँ अध्याय समाप्त ।

अथैकनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अट्टकस्य प्रतीच्यां तु यादवं नाम वै पुरम् ।
वसन्ति बहवो देवि जनाः कर्मविचक्षणाः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! अटक देश के पश्चिम तरफ यादव नामक पुर है वहाँ बहुत से मनुष्य अपने अपने कर्मों में निपुण निवास करते हैं ।। १ ।।

तन्मध्ये ब्राह्मणोप्येकः सिद्धलाल इति श्रुतः ।
तस्य भार्या विशालाक्षि देवीनाम्नी सदाशिवे ।। २ ।।

उनके बीच में एक सिद्धलाल ब्राह्मण रहता था । हे विशालाक्षि ! उसकी स्त्री का नाम देवी था ।। २ ।।

पतिव्रता गुणोपेता मिष्टवाक्यप्रवादिनी ।
सिद्धलालो महाचौरश्चौर्यवृत्तिरतः सदा ।। ३ ।।

वह पतिव्रता गुणी और मीठे वचन बोलनेवाली थी और सिद्धलाल महाचोर था, सदा चोरी किया करता था ।। ३ ।।

दारपुत्रादिभत्यानां चौर्येण पोषणं कृतम् ।
एवं सर्वं वयो जातं ततो मृत्युमुपागतम् ।। ४ ।।

स्त्री, पुत्र, नौकर आदिकों का पालन चोरी से ही किया करता था । इस तरह सब अवस्था उसकी बीत चुकी तब मर गया ।। ४ ।।

तस्य भार्या सती जाता तत्प्रभावाद्गतो द्विजः ।
सत्यलोके वरारोहे सततं विविधं सुखम् ।। ५ ।।

उसकी स्त्री सती हो गई, हे वरारोहे ! उसके प्रभाव से वह ब्राह्मण सत्यलोक में गया, वहाँ अनेक प्रकार के सुखों का भोग किया ।। ५ ।।

भुक्तं पूर्वंकृतात्पुण्यात्ततः पुण्यक्षये सति ।
मानुषत्वे पुनर्जन्म दुर्लभं सर्वदेहिनाम् ।। ६ ।।

पूर्व पुण्य से सब फल भोग कर पीछे पुण्यक्षीण होने पर सब देहधारियों को दुर्लभ मनुष्य शरीर को प्राप्त किया ।। ६ ।।

धनधान्येन संयुक्तः कन्यापुत्रविवर्जितः ।
ब्राह्मण्यं च यतस्त्यक्त्वा शूद्रकर्म समाचरेत् ॥ ७ ॥

यह धनधान्य से युक्त है, और पुत्र कन्या से रहित है यह पूर्व जन्म में ब्राह्मण कर्म को छोड़कर शूद्रभाव को प्राप्त हुआ था ॥ ७ ॥

परद्रव्यं हृतं देवि तस्माद् व्याधिरजायत ।
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ८ ॥

हे देवि ! दूसरे का धन हर लिया था इसलिये इसके रोग उत्पन्न है । अब इसके पूर्वपापों की शांति कहता हूँ ॥ ८ ॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
दशवर्णाप्रदानं च पूर्वपापविशुद्धये ॥ ९ ॥

घर के धन से आठवाँ भाग पुण्यकार्य में खर्च करे । और दश वर्णवाली गौ का दान पापशुद्धि के लिए करे ॥ ९ ॥

शय्यादानं ततः कुर्यादेकादश्यां व्रतं शुभम् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण विष्णुमन्त्रेण सुन्दरि ॥ १० ॥

फिर शय्यादान करे और एकादशी का व्रत करे । हे सुन्दरि! गायत्री मूल मंत्र से या विष्णु मंत्र का ॥ १० ॥

लक्षजाप्यं प्रयत्नेनाऽश्वत्थबिल्वतलेऽबले ।
दशांशं हवनं कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा ॥ ११ ॥

विधि से लक्ष जप करावे, हे अबले ! पीपल या बेलवृक्ष के नीचे दशांश हवन, तर्पण और मार्जन करावे ॥ ११ ॥

विप्राणां भोजनं देवि घटदानं विशेषतः ।
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ॥ १२ ॥

हे देवि ! ब्राह्मणों को भोजन कराके घट दान दे । ऐसा करने से वंश की वृद्धि होती है इसमें संदेह नहीं करना चाहिये ॥ १२ ॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति मम वाक्यं न चान्यथा ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे श्रवणनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकनवतितमोऽध्यायः ॥ ९१ ॥

और सम्पूर्ण व्याधियाँ नष्ट होती हैं यह मेरा वचन अन्यथा नहीं हो सकता ॥ १३ ॥

इक्यानबेवाँ अध्याय समाप्त ।

---:o:---

अथ द्विनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

देशे पञ्चनदे देवि गङ्गानाम्नी पुरी शुभा ।
वसन्ति सर्वे वै वर्णा ब्राह्मणाः क्षत्रिया विशः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! पंचनद देश में गंगापुरी है उसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि सब लोग रहते थे ॥ १ ॥

स्वकर्मनिरताः सर्वे वर्णाचारसमाश्रिताः ।
तन्मध्ये ब्राह्मणोप्येकः कृषिकर्मरतः सदा ॥ २ ॥

वर्ण, आचार और अपने-अपने कर्म दृढ़ थे, उनमें एक ब्राह्मण खेती करता था ॥ २ ॥

एकस्मिन् समये तदीयभगिनीपुत्रो गृहे भिक्षुकः ।
प्राप्तस्तस्य बुभुक्षितो निशि तदा यष्टयाऽहनत्तं खलः
प्राप्तः कालकरालदन्तदलनं पुत्रःस्वसुस्तस्य तत्-
पापात् सत्वरमाजगाम मरणं दुष्टःस्वयंचान्धधीः ॥ ३ ॥

एक समय उसकी बहन का पुत्र घर में भिक्षा लेने आया और वह भूख से पीड़ित था, तब रात्रि में उस कृषिकार ब्राह्मण ने अपने भानजे को मार दिया और वह बहन का पुत्र मर

गया। पीछे अन्धबुद्धिवाला वह पापी भी आप ही काल के वश हुआ॥ ३॥

यमदूतैर्महादेवि निक्षिप्तो नरकार्णवे।
अष्टाशीतिसहस्राणि वर्षाणि च तदा शिवे॥ ४॥
भुज्यते विविधं कष्टं नरकं चैव दारुणम्।
नरकान्निःसृतो देवि मार्जारत्वे भवेत्किल॥ ५॥

तब यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर उसको नरक-समुद्र में डाला। वहाँ अट्ठासी हजार वर्षों तक वास कर हे शिवे! बहुत प्रकार कष्ट को भोग नरक से निकलकर बिलाव की योनि को प्राप्त हुआ है॥ ४-५॥

व्याघ्रस्य च पुनर्योनिं कुक्कुटत्त्वं ततोऽभवत्।
पुनर्मानुषयोनिं च धनधान्यसमन्वितम्॥ ६॥

बाघ की योनि, मुर्गा की योनि में होकर फिर मनुष्ययोनि में धन धान्य के सहित पैदा हुआ॥ ६॥

स प्रवीणो महावक्ता कुलाचाररतः सदा।
पूर्वंजन्मनि भो देवि भागिनेयस्य वै वधः॥ ७॥

हे देवि! वह चतुर ज्यादा बोलनेवाला अपने कुल का आचार करनेवाला उत्पन्न हुआ। और उसने पूर्वजन्म में बहन के पुत्र का वध किया था॥ ७॥

कृतो वैं मन्दमतिना तत्पापेनेह दुःखभुक्।
पुत्रो न जायते देवि व्याधिश्चैव पुनः पुनः॥ ८॥

मन्दबुद्धिवाला इस पाप से महाकष्ट को भोगता रहा और उसके पुत्र सन्तान नहीं हुई। वारंवार व्याधि से पीड़ित होता रहा॥ ८॥

अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु मत्तो वरानने।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्॥ ९॥

अब हे वरानने ! उसकी शान्ति कहता हूँ सुनो, अपने घर के द्रव्य में से छठा भाग पुण्य कर दे ॥ ९ ॥

गायत्रीत्र्यम्बकाभ्यां च द्यौःशान्तीति मनुत्रयम् ।
लक्षत्रयं वरारोहे जपं वै कारयेत्सुधीः ॥ १० ॥

'गायत्री', 'त्रयम्बक' और 'द्यौः शान्तिः' इन तीनों मत्रों का तीन लक्ष जप करवावे ॥ १० ॥

दशांशहवनं देवि तर्पणं मार्जनं तथा ।
ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्या पञ्चाशच्च वरानने ॥ ११ ॥

हे देवि ! दशांश हवन, तर्पण और मार्जन करावे । पचास ब्राह्मणों को भोजन करवावे ॥ ११ ॥

हविषा पायसेनापि खण्डेन मोदकेन वै ।
दशवर्णा ततो दानं तिलधेनुं प्रदापयेत् ॥ १२ ॥

साकल्य, खीर, खाँड़ तथा मोदक भोजन करावे । और दश वर्णवाली गौ तथा तिल, धेनु का दान करे ॥ १२ ॥

पञ्चपात्रं च संदाय पिण्डदानं च कारयेत् ।
भागिनेयस्य वै मूर्त्तिः सुवर्णरजतान्विता ॥ १३ ॥

पाँच पात्रों का दान, पिण्डदान और भागिनेय की मूर्त्ति सुवर्ण तथा चाँदी की बनवावे ॥ १३ ॥

दशपलसुवर्णेन सवत्सां पीठसंयुताम् ।
पूजयामास विधिवन्मन्त्रेणानेन वै शिवे ॥ १४ ॥

दश पल सोने की मूर्ति सवत्सा सिंहासनसहित बनवावे । इस मंत्र से पूजन करे ॥ १४ ॥

'सुराराध्य जगत्स्वामिन् चराचरगुरो हरे ।
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥ १५ ॥

और हाथ जोड़कर प्रार्थना करे हे सुराराध्य ! हे जगत्-

स्वामिन् ! हे चराचरगुरो ! हे हरे ! हे दयानिधे ! मेरा पहले जन्म का किया हुआ पाप क्षमा करो ।। १५ ।।

अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा भागिनेयवधः कृतः ।
ततः क्षमस्व दयापूर्णत्र्यम्बक त्रिपुरान्तक ।। १६ ।।

हे दयापूर्ण ! हे त्र्यम्बक ! हे त्रिपुरान्तक ! अज्ञान या ज्ञान से जो मैंने भागिनेय का वध किया है उसको आप क्षमा करो ।। १६ ।।

ततौ वै पूजयामास लोकपालान् पृथक् पृथक् ।
पश्चान्माषबलिं दद्यात्प्रतिमां दापयेत्ततः ।। १७ ।।

फिर लोकपालों का अलग-अलग पूजनकर पीछे माष बलि दे, फिर मूर्ति का दान करे ।। १७ ।।

ब्राह्मणाय तदा देवि पूर्वपापविशुद्धये ।
एवं कृते वरारोहे पुत्रः सञ्जायते खलु ।। १८ ।।

हे देवि ! हे वरारोहे ! पूर्वपाप की शुद्धि के लिये ब्राह्मण को मूर्ति दान दे। ऐसा करने से निश्चय पुत्र हो ।। १८ ।।

व्याधयः सङ्क्षयं यान्ति न कन्या जायते खलु ।
यदा न क्रियते देवि सप्तजन्मस्वपुत्रकः ।। १९ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे धनिष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम द्विनवतितमोऽध्यायः ।। ९२ ।।

हे देवि ! सम्पूर्ण व्याधियाँ नाश हों, कन्या संतान नहीं हो और जो ऐसा नहीं करे तो सात जन्म पर्यन्त पुत्र की प्राप्ति नहीं हो ।। १९ ।।

बान्नबेवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ त्रिनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पश्चिमायां महादेवि यवनस्य पुरं महत् ।
महानन्द इति ख्यातः सर्वदेशे सुरेश्वरि ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! हे सुरेश्वरि ! पश्चिम दिशा में यवनपुर में महानंद ब्राह्मण था ॥ १ ॥

वसन्ति बहवो म्लेच्छाः स्वविद्यायां विचक्षणाः ।
ब्राह्मणास्तत्र वै देवि विद्यायां निपुणास्तथा ॥ २ ॥

हे देवि ! उसमें म्लेच्छविद्या में निपुण बहुत से म्लेच्छ वास करते थे । और वहाँ विद्या में निपुण ब्राह्मण भी बहुत से वास करते थे ॥ २ ॥

तिष्ठत्यशङ्कया तित्यं म्लेच्छान्नं भुज्यते सदा ।
स सन्ध्यारहितो विप्रः पिशुनो दुर्मतिः शठः ॥ ३ ॥

और वहाँ एक ब्राह्मण निर्भय होकर नित्य म्लेच्छान्न को खानेवाला, संध्या से रहित, चुगली करनेवाला, दुर्मति तथा धूर्त उत्पन्न हुआ ॥ ३ ॥

सञ्चितं बहुसाहस्त्रं स्वर्णरत्नगजादिकम् ।
ततो बहुदिने जाते तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥ ४ ॥

और स्वर्ण, रत्न, गज आदि का बहुत संचय किया करता था । बहुत दिन बीत जाने के बाद उसकी मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥

सर्पेण दष्टो देवेशि पञ्चके निर्जलेपि वा ।
यमदूतैर्महादेवि यमाज्ञां गृह्य वै द्विजम् ॥ ५ ॥

हे देवेशि ! वह ब्राह्मण निर्जल देश में सर्प के काटने से मर गया और उसको यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर नरक में डाल दिया ॥ ५ ॥

रौरवे क्षिप्तवाञ्छीघ्रं महाकष्टं प्रभुज्यते ।

षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ६ ॥

रौरव नरक में शीघ्र पहुँचकर महाकष्टों को भोगने लगा और वहाँ साठ हजार वर्षों तक नरक के दुखों को भोगता रहा ॥ ६ ॥

नरकान्निःसृतो देवि ग्राहयोनिरभूत्पुरा ।

पुनः कच्छपयोनिश्च मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

फिर हे देवि ! नरक से निकल ग्राह की योनि को प्राप्त हुआ, फिर कछुआ की योनि को प्राप्त होकर मनुष्य हुआ ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ब्राह्मणत्वं यतोऽत्यजत् ।

अपुत्रत्वं ततो देवि कन्यका नैव जायते ॥ ८ ॥

हे देवि ! पहले जन्म में उसने ब्राह्मण धर्म त्याग किया था, इससे पुत्र रहित हुआ और कन्या भी नहीं हुई ॥ ८ ॥

म्लेच्छान्नं भुज्यते देवि सन्ध्यां च तर्पणं विना ।

अतो व्याधियुतो नित्यं न सुखं लभते क्वचित् ॥ ९ ॥

हे देवि ! म्लेच्छ का अन्न खाया किया, संध्या व तर्पणादि नहीं करता या, इससे नित्य व्याधियुक्त तथा सुख की किंचित् प्राप्ति भी नहीं हुई ॥ ९ ॥

शान्तिं शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम् ।

गृहं शुभ्रं वरारोहे धनधान्यसमन्वितम् ॥ १० ॥

हे वरारोहे ! पूर्वपाप के नाश करनेवाली शांति को कहता हूँ, अच्छा शुद्ध घर धनधान्य सहित ॥ १० ॥

सञ्चितान्नं वरारोहे ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ।

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ ११ ॥

हे वरारोहे ! अन्नसमेत ब्राह्मण को दे । गायत्री के मूल मंत्र का एक लक्ष जप करवावे ॥ ११ ॥

हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ।
त्रैमासिकव्रतं कुर्याद् व्रतं च रविसप्तमी ॥ १२ ॥

और उसका दशांश हवनादि करावे तथा बराबर तीन महीनों तक समाप्त होनेवाला व्रत करे, और रवि सहित सप्तमी का व्रत करे ॥ १२ ॥

जातवेदेति मन्त्रेण लक्षजाप्यन्तु कारयेत् ।
ततो गां कपिलां देवि स्वर्णवस्त्रविभूषिताम् ॥ १३ ॥

हे देवि ! जातवेद मंत्र का लक्ष जप करवावे और कपिला गौ का दान विधिपूर्वक ब्राह्मण को दे ॥ १३ ॥

दद्यात्सवस्त्रां विधिवद्ब्राह्मणाय शिवात्मने ।
अश्वदानं च कर्तव्यं चामरं छत्रमेव च ॥ १४ ॥

शिवस्वरूपी ब्राह्मण को घोड़ा और चमर तथा छत्र का दान देवे ॥ १४ ॥

एवं कृते न संदेहो व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम् ।
पुत्रोपि जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रणाशयेत् ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे धनिष्ठा-नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम त्रिनवति-तमोऽध्यायः ॥ ९३ ॥

हे देवि ! ऐसा करने से संपूर्ण व्याधि का नाश हो और पुत्र की प्राप्ति हो और वंध्यापना भी नष्ट होवे, इसमें संदेह नहीं करना चाहिये ॥ १५ ॥

तिरान्नबेवाँ अध्याय समाप्त ।

---:o:---

अथ चतुर्नवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

यत्किञ्चित्क्रियते कर्म वैदिकं चापि लौकिकम् ।
तत्तत्कर्मफलं भोग्यमिह लोके परत्र च ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, जो कुछ वैदिक अथवा लौकिक कर्म इस संसार में किए हैं उस कर्म का फल इस लोक तथा परलोक में भोगा जाता है ॥ १ ॥

सौराष्ट्रनगरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये ।
क्षत्रधर्मरतो नित्यं मृगपक्षिप्रहारकः ॥ २ ॥

हे देवि ! सौराष्ट्र नगर में एक क्षत्रिय वास करता था । वह क्षत्रिय धर्म में दृढ़ तथा पक्षियों को मारा करता था ॥ २ ॥

एकस्मिन् समये काले वनं यातः स दुर्मतिः ।
मृगीं सगर्भां हतवान् बालकद्वयसंयुताम् ॥ ३ ॥

इसी प्रकार उस दुष्ट ने एक समय वन में जाकर सगर्भा मृगी को बाणों से मार डाला, उस मृगी के दो बालक थे ॥ ३ ॥

पुत्रेण भार्यया सार्धं भुक्तं तेन दुरात्मना ।
ततो वृद्धे तु सञ्जाते तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ४ ॥

और उस दुरात्मा ने पुत्र तथा स्त्रीसहित होकर मृगी का मांस खाया, फिर वृद्ध होने पर उसकी मृत्यु हुई ॥ ४ ॥

यमदूतैर्महादेवि नरके क्षिप्त एव सः ।
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ५ ॥

हे देवि ! तब यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर उसको नरक में डाला, वहाँ साठ हजार वर्षों तक नरक को भोगा ॥ ५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि महिषो जायते खलु ।
वराहत्वं पुनर्जातं मानुषत्वं पुनर्भवेत् ॥ ६ ॥

हे देवि ! नरक से निकल महिषयोनि को प्राप्त हुआ, फिर वराह की योनि से मनुष्ययोनि में हुआ ॥ ६ ॥

देशे पुण्यतमे देवि धनधान्यसमन्वितः ।
विद्यावान् गुणवान् वक्ता राजसेवासु तत्परः ॥ ७ ॥

हे देवि ! पवित्र देश में जन्म हुआ । धनधान्य युक्त, विद्वान, गुणी, भाषण करनेवाला राजसेवा में तत्पर रहता था ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि हत्वा मृगगणान्बहून् ।
प्रसवोन्मुखीं मृगीं हत्वा मृगवृन्दसमन्विताम् ॥ ८ ॥

हे देवेशि ! पूर्वजन्म में मृगों के समूह को मार के सगर्भा मृगी को मारा था ॥ ८ ॥

तत्पापेन महादेवि मृतवत्सत्वमाप्नुयात् ।
शरीरे बहवो रोगा ज्वराश्चातुर्थिकास्तथा ॥ ९ ॥

हे महादेवि ! उस पाप से इसके संतान नहीं जीती हैं । और शरीर में बहुत प्रकार के रोग हैं, चातुर्थिक ज्वर बना रहता है ॥ ९ ॥

शान्ति शृणु वरारोहे मृतवत्सत्वशान्तये ।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १० ॥

हे वरारोहे ! मृतवत्सा की शान्ति के लिये उसकी शांति को कहता हूँ । अपने घर के धन का छठा भाग दान करे ॥ १० ॥

गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं ततः ॥ ११ ॥

और गायत्री मूल मंत्र का जप करावे और उसका दशांश हवन, तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे ॥ ११ ॥

पलपञ्चसुवर्णस्य मृगीं वत्ससमन्विताम् ।
कृत्वा समर्पयामास ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥ १२ ॥

और पाँच पल सुवर्ण की मृगी की मूर्ति बच्चे सहित बनवावे, उसको संकल्प कर शिवभक्त ब्राह्मण को देवे ॥ १२ ॥

दशवर्णां ततो दद्याच्छय्यादानं विशषतः ।
वाटिकारोपणं कुर्यात् पथि कूपं तथा शिवे ॥ १३ ॥

हे शिवे ! दश वर्णोंवाली गौ का दान दे और अच्छी तरह से शय्या दान दे । रास्ते में धर्मस्थान तथा कूप बनवावे ॥ १३ ॥

ब्राह्मणान् भोजयामास शतसङ्ख्यान्समोदकैः ।
एवं कृते वरारोहे पुत्रः सञ्जायते खलु ॥ १४ ॥

हे वरारोहे ! सौ ब्राह्मणों को मोदकों का भोजन करावे । ऐसा करने से निश्चय पुत्र की प्राप्ति होती है ॥ १४ ॥

व्याधयः सङ्क्षयं यान्ति वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ।
मृतवत्सा तु या नारी सुतं सानुग्रहं लभेत् ॥ १५ ॥

इस प्रकार संपूर्ण व्याधियाँ नाश को प्राप्त होती हैं । वंध्यापने की शांति होती है, और मृतवत्सा स्त्री भी उत्तम चिरंजीवि पुत्र को प्राप्त करती है ॥ १५ ॥

काकवन्ध्या पुनः पुत्रं लभते नात्र संशयः ॥ १६ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे धनिष्ठा-
नक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम
चतुर्नवतितमोऽध्यायः ॥ ९४ ॥

ऐसा करने से काकवंध्या भी पुत्र को प्राप्त हो इसमें संशय नहीं है ॥ १६ ॥

चौरान्नबेवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ पञ्चनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मथुरादक्षिणे भागे योजने वै त्रयो यदि ।
पुरं सिद्धमिति ख्यातं वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, मथुरा से दक्षिण की तरफ तीन योजन पर सिद्धपुर देश है, वहाँ बहुत से लोग रहते थे ॥ १ ॥

क्षिप्रकारो वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ।
बलभद्र इति ख्यातो वैष्णवो ज्ञानवल्लभः ॥ २ ॥

वहाँ धनी, विष्णुभक्त तथा ज्ञान की बातें जाननेवाला बलभद्र नाम का एक छीपी रहता था ॥ २ ॥

तस्य पुत्रत्रयं जातं कनीयांसस्य चादरः ।
नादरो ज्येष्ठपुत्रस्य मध्यमस्य तथैव च ॥ ३ ॥

उसके तीन पुत्र उत्पन्न हुये, सबसे ज्यादा छोटे का आदर करता था, और ज्येष्ठ तथा मध्यम पुत्र का आदर नहीं करता था ॥ ३ ॥

धनं च सञ्चितं तेन महाशूद्रेण चानघे ।
भ्रातृणां विग्रहो जातो विभागार्थं धनस्य तु ॥ ४ ॥

हे अनघे ! उस महाशूद्र ने बहुत सा धन संचित किया था, उन भाइयों का धन बाँटने के लिए आपस में लड़ाई होने लगी ॥ ४ ॥

ब्राह्मणस्तस्य वै मित्रं विग्रहस्तेन वै श्रुतः ।
आगतस्तस्य निकटे छिप्रकारस्य वै शिवे ॥ ५ ॥

हे शिवे ! उसका एक ब्राह्मण मित्र उसकी लड़ाई को सुनकर उस छीपी के पास आया ॥ ५ ॥

ब्राह्मणस्य वधो जातः शूद्राणां विग्रहे सति ।
सर्वद्रव्यं कनिष्ठाय क्षिप्रकारो ददौ स्वयम् ॥ ६ ॥

उन शूद्रों की लड़ाई में उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई, सब धन शूद्र ने अपने छोटे बेटे को दे दिया ॥ ६ ॥

एवं बहुगते काले शूद्रस्य मरणं भवेत् ।
रौरवं नरकं यातः क्षीपकारोऽपि वै स्वयम् ॥ ७ ॥

ऐसा बहुत काल व्यतीत होने पर उस शूद्र की मृत्यु हुई, तब क्षीपकार को रौरव नरक की प्राप्ति हुई ॥ ७ ॥

लक्षवर्षं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ८ ॥

हे वरारोहे ! लक्ष वर्ष पर्यन्त नरक के दुःखों को भोग फिर नरक से निकल बाघ की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ८ ॥

भुक्त्वा व्याघ्रस्य योनिं स काकयोनिस्ततोभवत् ।
मानुषत्वं पुनर्जातं मध्यदेशे सुरेश्वरि ॥ ९ ॥

हे सुरेश्वरि ! वह बाघ की योनि भोगकर गदहा की योनि में, फिर काक की योनि में गया ॥ ९ ॥

धनधान्यसमायुक्तो रोगवान् पुत्रवर्जितः ।
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु मे परमेश्वरि ॥ १० ॥

हे परमेश्वरि ! धन धान्य युक्त है, शरीर में रोग है, पुत्र से रहित है। अब इसकी शांति कहता हूँ सुनो ॥ १० ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
पूर्वपापविशुद्ध्यर्थं दशवर्णां ददेत्ततः ॥ ११ ॥

अपने घर के द्रव्य का छठा भाग दान करे और पूर्वजन्म के पाप की शुद्धि के लिये दश वर्णवाली गौ का दान देना चाहिए ॥ ११ ॥

गायत्रीसूर्यमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ।

दशांशं हवनं देवि मार्जनं तर्पणं तथा ।। १२ ।।

हे वरानने ! गायत्री तथा सूर्य मंत्र का लक्ष जप करवावे और उसका दशांश हवन, तर्पण, तथा मार्जन करवावे ।। १२ ।।

दशांशं भोजयेद्विप्रान् ब्राह्मणान्वेदपारगान् ।

कूष्मांडं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ।। १३ ।।

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं देवि प्रत्यव्रताय च ।

एवं कृते वरारोहे सर्वरोगक्षयो भवेत् ।। १४ ।।

और उसका दशांश वेद पारायण करनेवाले ब्राह्मणों को भोजन करवावे और पंचरत्न से युक्त पेठे और नारियल का दान सत्य बोलनेवाले ब्राह्मण को गंगा के तट पर करे, ऐसा करने से सब प्रकार के रोग नाश होते हैं ।। १३-१४ ।।

वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ।। १५ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे धनिष्ठा-नक्षत्रस्यचतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चनवति-तमोऽध्यायः ।। ९५ ।।

और वंश की वृद्धि होती है, इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये ।। १५ ।।

पञ्चान्नबेवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ षण्णवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मथुरायां विशालाक्षि आभीरस्तत्र तिष्ठति ।

गोपालेति समाख्यातो सदा गोधनजीवितः ।। १ ।।

शिवजी कहते हैं, हे विशालाक्षि ! मथुरा में एक अहिर गोपाल नामक गोधन से जीविका करनेवाला रहता था ॥ १ ॥

तस्य भार्या विशालाक्षी सतीनामातिसुन्दरी ।
गोधनं बहुसाहस्रं गोपालस्य सुरेश्वरि ॥ २ ॥

हे सुरेश्वरि ! उसकी स्त्री सुंदर नेत्रोंवाली सती नामक थी, उस गोपाल के पास कई हजार गौवों का धन था ॥ २ ॥

वत्सानां वृषभानां च पालनं क्रियते सदा ।
शीतकाले महादेवि वृष्टिर्जाता वरानने ॥ ३ ॥

वत्सों का तथा वृषभों का पालन करता था । हे महादेवि ! एक समय शीतकाल में बहुत वर्षा हुई ॥ ३ ॥

गौः सवत्सा महादेवि पीडिता भोजनं विना ।
गृहाभावे मृता बाह्ये वत्सेनैव च संयुता ॥ ४ ॥

हे महादेवि ! गौ और बछड़े चारे के बिना पीड़ित हुए और घर के बिना बछड़ों सहित गौयें मर गईं ॥ ४ ॥

ततो बहुगते काले गोपालस्य मृतिस्तदा ।
यमदूतैर्महाघोरे नरके नाम कर्द्दमे ॥ ५ ॥

फिर बहुत दिन बीतने पर उस गोपाल की मृत्यु हुई और उसको यमराज के दूतों ने कर्द्दम नाम के महाघोर नरक में डाल दिया ॥ ५ ॥

क्षिप्तं यमाज्ञया देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
नरकान्निःसृतो देवि भेकयोनिस्ततोभवत् ॥ ६ ॥

हे देवि ! साठ हजार वर्षों तक नरक में रहकर फिर नरक से निकल मेंढक की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥

सरटस्य ततो देवि मानुषत्वं ततोऽभवत् ।
धनधान्यसमायुक्तो व्याधिना पीडितः सदा ॥ ७ ॥

हे देवि ! फिर गिरगिट की योनि से धन सहित मनुष्ययोनि में उत्पन्न हुआ और सदा व्याधि से पीड़ित रहता था ॥ ७ ॥

अपुत्रत्वं ततो लेभे कन्यका जायते खलु ।
तस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि सुशोभने ॥ ८ ॥

हे देवि ! पुत्र से रहित हुआ उसे कन्या की प्राप्ति होती थी, अब उसकी शांति कहता हूँ सुनो ॥ ८ ॥

निर्बीजं वषभं तेन कृतं योगेन वै शिवे ।
तेन पापेन भो देवि गर्भपातः पुनः पुनः ॥ ९ ॥

हे शिवे ! उसने दैवयोग से बैल बधिया किए इस पाप से वारंवार गर्भपात हुआ ॥ ९ ॥

वसन्ते मासि वै कुर्याद्घटदानं सहस्रशः ।
एकादशीव्रतं नित्यं वेण्याः स्नानं समाचरेत् ॥ १० ॥

वसंत मास में सहस्र घंटों का दान दे, एकादशी का हमेशा व्रत करे, और प्रयाग में त्रिवेणी स्नान करे ॥ १० ॥

दशवर्णगवां दानं शय्यादानं तथैव च ।
आकृष्णेति जपं कुर्याल्लक्षसङ्ख्यं वरानने ॥ ११ ॥

हे वरानने ! दशवर्णोंवाली गौवों का दान तथा शय्यादान दे । 'आकृष्णेति०' इस मंत्र का एक लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥

दशांशं हवनं तद्वन्मार्जनं तर्पणं तथा ।
भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्ब्राह्मणाञ्छ्रोत्रियाञ्छतम् ॥ १२ ॥

उससे दशांश हवन, तर्पण और मार्जन भी करावे तथा सौ ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के अन्नों का भोजन करावे ॥ १२ ॥

पायसान्नेन खण्डेन घृतेन दधिना तथा ।
एवं कृते न सन्देहो ज्वरमोक्षः प्रजायते ॥ १३ ॥

खीर, खाँड़, दही, घृत ये भोजन करावे ऐसा करने से निश्चय ज्वर से छूट जाता है ॥ १३ ॥

वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य मृतवत्सा च पुत्रिणी ।
काकवन्ध्या पुनः पुत्रं लभते नात्र संशयः ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम षण्णवतितमोऽध्यायः ॥ ९६ ॥

उसके वंश की वृद्धि होती है, मृतवत्सा स्त्री पुत्र को पाती है और काकवंध्या भी वारंवार पुत्र को प्राप्त होती है इसमें संदेह नहीं है ॥ १४ ॥

छान्नबेवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ सप्तनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मध्यदेशे महेशानि लुब्धको वसति प्रिये ।
मृगारिर्नाम विख्यातो मृगमांसेन जीवति ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे महेशानि ! मध्यदेश में एक लुब्धक (शिकारी) मृगारि नाम का रहता था, वह मृगमांस से जीनेवाला था ॥ १ ॥

प्रत्यहं मृगयां याति पक्षिणां मारणे रतः ।
मांसक्रयं च कुरुते कलत्रं पोषयेत्सदा ॥ २ ॥

और प्रति दिन शिकार में पक्षियों के मारने में जुटा रहता था और मांस बेचकर स्त्री आदि कुटुम्ब का पालन करता था ॥ २ ॥

एवं वयो गतं सर्वं वृद्धे सति वरानने ।
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ३ ॥

हे वरानने ! इसी तरह सारी अवस्था बीत चुकने पर वृद्ध होने पर उसका मरण हुआ, तब उसको यमराज के दूतों ने आज्ञा पाकर ॥ ३ ॥

रौरवे नरके क्षिप्तं तत्र कष्टं मुहुर्मुहुः ।
सप्ततिर्वै सहस्राणि नरके परिपच्यते ॥ ४ ॥

रौरव नरक में डाला वहाँ वारंवार कष्टों को भोगकर सत्तर हजार वर्ष नरक में पकाया गया ॥ ४ ॥

नरकान्निःसृतो देवि श्येनयोनिं प्रजायते ।
उष्ट्रस्य च पुनर्योनिं शृगालत्वं ततः पुनः ॥ ५ ॥

फिर हे देवि ! नरक से निकल शिकरा पक्षी की योनि को प्राप्त हो फिर उष्ट्र की योनि को, बाद को गीदड़ की योनि में पहुँचा ॥ ५ ॥

मानुषत्वं ततो जातो धनधान्येन संयुतः ।
पूर्वजन्मनि देवेशि पक्षिणो बहवो हताः ॥ ६ ॥

फिर वहाँ से मनुष्ययोनि में पैदा हुआ है और पूर्वजन्म में उसने बहुत से पक्षी मारे थे ॥ ६ ॥

तेन पापेन भो देवि व्याधिना पीडितो हि सः ।
मृगं हत्वा वरारोहे हतं च मृगशावकम् ॥ ७ ॥

हे वरारोहे ! उस पाप से यह व्याधि से पीड़ित रहता है, और मृग तथा मृगों के बच्चों को जो मारे थे ॥ ७ ॥

एतद्दोषेण भो देवि पुत्राणां मरणं खलु ।
काकवन्ध्या भवेन्नारी कन्यका जायते सदा ॥ ८ ॥

हे देवि ! इस दोष से पुत्रों का मरण होता है और काकवन्ध्या स्त्री अथवा सदा कन्या पैदा करनेवाली स्त्री उत्पन्न हुई ॥ ८ ॥

वन्ध्या भवति वै नारी शान्ति शृणु वरानने ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ९ ॥

हे वरानने ! उसकी स्त्री वन्ध्या हो गई अब इसकी शांति को कहता हूँ सुनो। अपने घर के द्रव्य का छठा भाग दान करे ॥ ९ ॥

गायत्रीजातवेदाभ्यां लक्षजाप्यं वरानने ।
दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १० ॥

हे वरानने ! 'गायत्री' तथा 'जातवेद०', इन मंत्रों का एक लक्ष जप करावे और उसका दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १० ॥

दशधेनूस्ततो दद्यात्स्वर्णदानं विशेषतः ।
हरिवंशश्रुतिं देवि व्रतं च हरिवासरम् ॥ ११ ॥

हे देवि ! दश गौ तथा सुवर्ण का दान विशेषता से देवे और हरिवंश को सुने, एकादशी का व्रत करे ॥ ११ ॥

ब्राह्मणान् भोजयामास यथाशक्तिस्तु दक्षिणा ।
एवं कृते वरारोहे वंशस्तस्य भविष्यति ॥ १२ ॥

हे वरानने ! ब्राह्मणों को भोजन कराके यथाशक्ति दक्षिणा दे, ऐसा करने से वंश की वृद्धि होती है ॥ १२ ॥

वन्ध्यात्वं प्रशमं याति काकवन्ध्या पुनः सुतम् ।
मृतवत्सा सुतं लेभे चिरञ्जीविनमुत्तमम् ॥ १३ ॥

और वंध्यापने की शांति होती है, काकवंध्या पुत्र पाती है और मृतवत्सा स्त्री चिरजीवी पुत्र को पैदा करती है ॥ १३ ॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति ज्ञानं च लभते क्वचित् ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे शतभिषा-नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम सप्तनवतितमोऽध्यायः ॥ ९७ ॥

और सब व्याधियाँ दूर होती हैं, और ज्ञानमार्ग की प्राप्ति होती है ॥ १४ ॥

सत्तान्नबेवाँ अध्याय समाप्त ।

———:०———

अथाष्टनवतितमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गोमतीनिकटे देवि पुरमस्ति धरंधरम् ।
वसन्ति बहवो देवि जना धर्मविचक्षणाः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि ! गोमती के पास धरंधरपुरी है वहाँ बहुत से धर्मात्मा वास करते थे ॥ १ ॥

तन्मध्ये ब्राह्मणोप्येको ब्रह्मकर्मविवर्जितः ।
द्यूतकर्मरतः सोपि वेश्यासुरततत्परः ॥ २ ॥

और वहाँ एक ब्राह्मण ब्रह्मकर्म से रहित, जुआरी और वेश्यागामी रहता था ॥ २ ॥

मद्यपानरतो नित्यं वेदशास्त्रविनिन्दकः ।
ततो बहुदिने देवि तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥ ३ ॥

नित्य मद्य पीनेवाला वेद शास्त्र की निन्दा करनेवाला था । उसकी बहुत दिन के बाद मृत्यु हुई ॥ ३ ॥

यमदूतैर्महाघोरैर्नरके तु निपातितः ।
क्षिप्तः स नरके घोरे लक्षवर्षं महेश्वरि ॥ ४ ॥

हे महेश्वरि ! उसको यमराज के दूतों ने घोर नरक में डाला वहाँ लक्ष वर्ष पर्यन्त घोर नरक में रह करके ॥ ४ ॥

नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिरभूत्पुरा ।
वराहस्य पुनर्योनिर्गर्दभत्वं ततोऽभवत् ॥ ५ ॥

हे देवि ! नरक से निकल भेड़िया की योनि को प्राप्त हुआ फिर शूकर की योनि में होकर गर्दभ योनि में हुआ ॥ ५ ॥

मानुषत्वं ततो लेभे देशे पुण्यतमे शुभे ।
पूर्वजन्मनि देवेशि मद्यपानरतस्सदा ॥ ६ ॥

फिर हे शुभे ! मनुष्ययोनि को पुण्य देश में प्राप्त हो गया है यह पूर्वजन्म में मद्यपान करता था इसलिये उसका शरीर रोगी रहता था ॥ ६ ॥

तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसम्भवः ।
द्यूतवेश्यारतो नित्यं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥

हे देवि ! उस पाप से शरीर से रोगी व जुवा में रत वेश्यासंगी पहले जन्म में हुआ था ॥ ७ ॥

तत्पापेन महादेवि वंशच्छेदश्च जायते ।
शान्ति शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ८ ॥

हे महादेवि ! उस पाप से वंश नष्ट होता है उस पाप की शांति कहता हूँ सुनो पहले पाप के नाश करने के लिये ॥ ८ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
विष्णोरराटमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ ९ ॥

अपने घर के द्रव्य में से छठा भाग पुण्य कर देवे, फिर हे वरारोहे ! विष्णोरराट०, इस मंत्र का लक्ष जप करावे ॥ ९ ॥

दशांशं हवनं तद्वन्मार्जनं तर्पणं तथा ।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्पञ्चाशच्च वरानने ॥ १० ॥

और उससे दशांश हवन, तर्पण, मार्जन करावे, हे वरानने ! पीछे पचास ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ १० ॥

ततो गां कृष्णवर्णां च स्वर्णशृङ्गीं विभूषिताम् ।
वस्त्रयुक्तां सवत्सां च दद्याद्द्विजवराय च ॥ ११ ॥

फिर स्वर्णश्रृंग युक्त कृष्णा गौ तथा सवत्सा और वस्त्रादि सहित ब्राह्मण को दान दे ॥ ११ ॥

प्रतिमां तु ततः कुर्याद्विष्णोः साम्बस्य वा शिवे ।
पलं दशसुवर्णस्य विष्णोर्मुक्ताविभूषिताम् ॥ १२ ॥

हे शिवे ! पीछे विष्णु की और साम्ब की मूर्त्ति बनवावे, विष्णु की मूर्त्ति को दश पल सुवर्ण और मोती आदि से सजावे ॥१२॥

तद्वदेव शिवस्यैव रजतस्य वरानने ।
नानावस्त्रैरलङ्कारैः पूजयित्वा यथाविधि ॥ १३ ॥

हे वरानने ! उसी प्रकार शिव की मूर्त्ति चाँदी की बनवावे, अनेक प्रकार के वस्त्र अलंकारादि के साथ विधि से पूजन करे ॥ १३ ॥

मन्त्रेणानेन देवेशि तद्वदेव गणं नमेत् ।
गरुडध्वज देवेश भूतनाथ दयानिधे ॥ १४ ॥

हे देवेशि ! इस मंत्र से गणेश का पूजन करे । हाथ जोड़ प्रार्थना करे—हे गरुडध्वज ! हे देवेश ! हे भूतनाथ ! हे दया-निधे ! यह कह कर सब गणों का पूजन करे ॥ १४ ॥

मम पूर्वकृतं पापं तत् क्षमस्व दयानिधे ।
गन्धधूपादिभिर्देवि पूजयित्वा पृथक् पृथक् ॥ १५ ॥

ॐ सुदर्शनाय नमः । ॐ त्रिशूलाय नमः ।
ॐ गरुडाय नमः । ॐ भैरवाय नमः ।
ॐ जयाय नमः । ॐ विजयाय नमः ।
ॐ वटुकाय नमः । ॐ कालभैरवाय नमः ।

हे दयानिधे ! पूर्वजन्म में किये हुये मेरे पापों को क्षमा करो । हे देवि ! ऐसे इनका अलग-अलग गन्धधूपादिकों से पूजन करे ॥ १५ ॥

प्रतिमां पूजयित्वा तु विप्राय प्रददौ स्वयम् ।
ततो विष्णुं नमस्कृत्य शिवं सर्वसुखप्रदम् ।। १६ ।।

बाद उस मूर्त्ति को ब्राह्मण को दान देकर फिर विष्णु और सर्वसुखदाता शिव को प्रणाम करे ।। १६ ।।

एवं कृते न सन्देहः सर्वपापक्षयो भवेत् ।
वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य व्याधिनाशस्तथैव च ।। १७ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे शतभिषा-नक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्ट-नवतितमोऽध्यायः ।। ९८ ।।

ऐसा करने से निस्सन्देह सम्पूर्ण पाप नष्ट होते हैं, और व्याधियाँ नष्ट होती हैं ।। १७ ।।

अट्ठान्नबेवाँ अध्याय समाप्त ।

—–:o:—–

अथैकोनशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

पञ्चक्रोशमिते देवि मथुराउत्तरे तथा ।
हेमन्तपुरसद्ग्रामे वसन्ति बहवो जनाः ।। १ ।।

शिवजी कहते हैं हे देवि ! मथुरा से उत्तर दिशा में पाँच कोश पर हेमन्तपुर गाँव में बहुत से जन बसते थे ।। १ ।।

तन्मध्ये वैश्य एको हि क्रयविक्रयतत्परः ।
स सुकर्मा इति ख्यातो धनं च बहु सञ्चितम् ।। २ ।।

उसमें खरीदने बेचने का व्यवहार करनेवाला एक सुकर्मा वैश्य रहता था, उसने बहुत सा धन इकट्ठा किया ।। २ ।।

तस्य स्त्री पार्वतीनाम रूपयौवनसंयुता ।
वैश्यश्चैव महादेवि प्रौढिं यातः सुरेश्वरि ।। ३ ।।

उसकी स्त्री पार्वती रूप यौवन से युक्त थी। हे सुरेश्वरि ! वह वैश्य वृद्ध हो गया तब ॥ ३॥

दरिद्रत्वं भवेद्देवि दरिद्रत्वात्सुपीडितः।
शतपञ्चऋणं नीतं ब्राह्मणस्य सुरेश्वरि ॥ ४॥
व्यापारार्थं विशालाक्षि न दत्तं ब्राह्मणाय वै।
सर्वं भुक्तं महादेवि बहुकाले गते सति ॥ ५॥
वैश्यस्यैव भवेन्मृत्युः सभार्यस्य वरानने।
मथुरायां विशालाक्षि लब्धं स्वर्गं वरं शुभम् ॥ ६॥

दरिद्री हो गया, तब दरिद्रता से पीड़ित होकर ब्राह्मण के पाँचसौ रुपये ले लिए। हे विशालाक्षि ! व्यापार के वास्ते लिये हुये वे रुपये फिर ब्राह्मण को उसने नहीं दिये। इस तरह बहुत काल व्यतीत हो चुका तब वैश्य की मृत्यु हो गई। मथुराजी में स्त्री सहित वह वैश्य मृत्यु को प्राप्त हुआ था इसलिये उसको उत्तम स्वर्गलोक की प्राप्ति हुई ॥ ४-६ ॥

दशलक्षमितं स्वर्गं फलं भुक्त्वा वरानने।
ततः सह कलत्रेण पुनः पुण्यक्षये सति ॥ ७॥

हे वरानने ! दश लाख वर्ष तक स्वर्गवास भोग करके फिर वहाँ से पुण्यक्षीण हो गया तब भार्या से युक्त ॥ ७॥

मानुषत्वं पुनर्लेभे देशे शुभ्रे मनोहरे।
धनधान्यसमायुक्तो जायते वै सुरेश्वरि ॥ ८॥

सुन्दर मनोहर देश में मनुष्ययोनि में उत्पन्न हुआ है। हे सुरेश्वरि ! यह धनधान्य से युक्त है ॥ ८॥

पूर्वजन्मनि देवेशि ब्राह्मणस्य धनं हृतम्।
न दत्तं वै ततो देवि ततः पुत्रो न जायते ॥ ९॥

हे देवेशि ! इसने पूर्वजन्म में ब्राह्मण का धन हर लिया

और फिर वापस नहीं दिया, इसलिये इसके पुत्र नहीं उत्पन्न होता है ।। ९ ।।

ततः शान्ति प्रवक्ष्यामि यतः पापस्य सङ्क्षयः ।
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।। १० ।।

अब इसकी शान्ति कहता हूँ जिससे संपूर्ण पाप नष्ट होते हैं। घर के छठे भाग द्रव्य को पुण्य के कार्य में खर्च करे ।। १० ।।

आकृष्णेति ततो मन्त्रं लक्षजाप्यं च कारयेत् ।
दशांशं हवनं कुर्याद्दशांशं तर्पणं तथा ।। ११ ।।

"आकृष्णेन रज०" इस मन्त्र का लक्ष जप कराना चाहिये और दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ।। ११ ।।

हरिवंशश्रुतिं देवि चण्डीपाठशिवार्चनम् ।
विधिवत्कारयामास ब्राह्मणानाञ्च भोजनम् ।। १२ ।।

हरिवंश को विधिपूर्वक सुने दुर्गापाठ और शिवपूजन करा-कर ब्राह्मणों को प्रसन्नतापूर्वक भोजन करवावे ।। १२ ।।

दशवर्णा तु गौर्देया शय्यादानं विशेषतः ।
एवं कृते वरारोहे वंशो भवति नान्यथा ।
व्याधिनाशः समायाति मम वाक्यामृतं भवेत् ।। १३ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकोनशततमोऽध्यायः ।। ९९ ।।

और दश प्रकार के वर्णवाली गौ का दान, व शय्यादान करे। हे वरारोहे ! ऐसा करने से वंश की बढ़ती होती है, इसमें अन्यथा नहीं और संपूर्ण व्याधि नष्ट होती है, यह मेरा वचन सत्य है।। १३ ।।

निन्नान्नबेवाँ अध्याय समाप्त ।

——:०:——

अथ शततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मथुरापुरि मध्ये तु शूद्र एको हि तिष्ठति ।
शाकादीनां च सततं विक्रयन्तु सदाकरोत् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं मथुरापुरी में एक शूद्र रहता था वह हमेशा शाक आदि बेचा करता था ॥ १ ॥

विष्णुभक्तिरतः शान्तः पुण्यात्मा साधुसम्मतः ।
सेवादास इति ख्यातस्तस्य पत्नी तु राधिका ॥ २ ॥

विष्णु का भक्त शान्त और पुण्यात्मा साधुजनों का सेवक सेवादास नामक था उसकी स्त्री का नाम राधिका था ॥ २ ॥

कुलाचारे रतः साधुर्द्विजसेवासु तत्परः ।
वाणिज्यं कुरुते साधुः पुरोहितधनेन च ॥ ३ ॥

वह अपने कुल के आचार में तथा साधुजनों की सेवा में तत्पर था, वह पुरोहित के धन से वणिज का काम किया करता था ॥ ३ ॥

बहुवर्षे गते देवि ब्राह्मणोपि तदागतः ।
आदरं बहुधा कृत्वा कलत्रेण तदा शिवे ॥ ४ ॥

हे देवि ! ऐसे बहुत से वर्ष व्यतीत होने पर तब वह ब्राह्मण उसके घर में आया तब बड़े आदर से उसकी स्त्री ने ब्राह्मण को रक्खा ॥ ४ ॥

विषं दत्तं चतुर्थेह्नि भोजनान्तर्विधानतः ।
न जानाति तदा साधुस्तद्वृत्तं ब्राह्मणस्य तु ॥ ५ ॥

चौथे दिन भोजन में उस ब्राह्मण को जहर दिया । तब उस ब्राह्मण के हाल को वह साधु शूद्र नहीं जानता था ॥ ५ ॥

मरणं वै ततो जातं ब्राह्मणस्य सुरेश्वरि ।

ब्राह्मणस्य वधे जाते हाहाकारो गृहे गृहे ॥ ६ ॥

परन्तु हे सुरेश्वरि ! ब्राह्मण मर गया तब ब्रह्मवध होने के कारण घर-घर में हाहाकार मच गया ॥ ६ ॥

श्रुत्वा तच्च पुरीं त्यक्त्वा प्रयागे साधुरागतः ।

देहं त्यक्त्वा तदा साधुर्हठं कृत्वा वरानने ॥ ७ ॥

उस बात को सुनकर उस साधु शूद्र ने अपनी पुरी को छोड़ करके प्रयाग में आकर हठ से अपनी देह को छोड़ दिया ॥ ७ ॥

पश्चात्तदैव सा गत्वा पत्नी प्राणस्ततोऽत्यजत् ।

प्रयागे, मथुरां त्यक्त्वा तदुद्देशेन शोभने ॥ ८ ॥

हे शोभने ! पीछे वह उस साधु की स्त्री भी मथुरापुरी को त्याग करके प्रयाग में अपने पति के पास प्राणों को छोड़ दिया ॥ ८ ॥

बहुवर्षसहस्राणां स्वर्गवासस्ततोऽभवत् ।

ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ९ ॥

फिर उनको बहुत हजार वर्षों तक स्वर्गवास हुआ । पुण्य-क्षीण होने पर मनुष्ययोनि में प्राप्त हुआ ॥ ९ ॥

शूद्रयोनिं विशालाक्षि देहजस्य कुले तदा ।

पुनर्विवाहिता पत्नी पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ॥ १० ॥

हे विशालाक्षि ! अपने पुत्र के ही कुल में शूद्रयोनि में पैदा हुआ है और पूर्वजन्म के प्रसंग से वही स्त्री फिर विवाही गई ॥ १० ॥

धनधान्यसमायुक्तो विद्यावान् कुलपूजितः ।

गौराङ्गो नीचजातीनां मतज्ञो लब्धवान् स्वयम् ॥ ११ ॥

धन धान्य से युक्त है विद्यावान् और कुल में पूजित है गौरवर्णवाला और नीचजातियों के मत को जानता है ॥ ११ ॥

पूर्वजन्मनि भो देवि ब्राह्मणाय विषं ददौ ।
भार्या तस्य विशालाक्षि तत्पापेनैव पातकी ॥ १२ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्म में इसकी स्त्री ने ब्राह्मण को विष दिया था, इस पाप से इसकी स्त्री पातकवाली उत्पन्न हुई ॥ १२ ॥

मासि पुष्पं ततस्तस्याः सन्तानं नैव जायते ।
अस्य पापस्य वै शान्तिं श्रृणु देवि सुशोभने ॥ १३ ॥

वह हर महीने रजस्वला होती है, परन्तु सन्तान उत्पन्न नहीं होती है। हे देवि! इसकी शान्ति मैं कहता हूँ सुनो ॥ १३॥

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्ये च कारयेत् ।
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेन वरानने ॥ १४ ॥
लक्षत्रयं जपं देवि कारयामास यत्नतः ।
हरिवंशश्रुतिं देवि भार्यया सहितस्तदा ॥ १५ ॥

अपने घर के द्रव्य से आठवाँ भाग द्रव्य को पुण्यकार्य में खर्च कर दे । 'गायत्री' और 'जातवेद०' तथा 'त्र्यम्बकं०' इन मन्त्रों से हे देवि ! तीन लक्ष जप विधिपूर्वक कराना चाहिये और हरिवंश को अपनी स्त्री के साथ बैठ करके सुनना चाहिये ॥ १४-१५ ॥

होमं वै कारयामास कुण्डे शुद्धे सुदारुणे ।
चतुष्कोणे विशालाक्षि योनिपल्लवशोभिते ॥ १६ ॥

हे विशालाक्षि योनिपल्लवों सहित चतुष्कोण सुन्दर कुण्ड में हवन करावे ॥ १६ ॥

दशांशं विधिवद्देवि तर्पणं मार्जनं ततः ।
ब्राह्मणस्य ततो मूर्तिं दशपञ्चपलात्मिकाम् ॥ १७ ॥

हे देवि ! विधि से उसके दशांश का तर्पण, मार्जन करावे पीछे ब्राह्मण की मूर्ति पन्द्रह पल सुवर्ण की ॥ १७ ॥

विधिवत्कारयेद्देवि पूजयेच्चैव बुद्धिमान् ।
वस्त्रालङ्कारशय्याभिर्भूषणैर्विविधैस्तथा ॥ १८ ॥

हे देवि ! विधि से बनवावे । गहने, शय्या और नाना प्रकार के आभूषणों से उस मूर्त्ति का पूजन करे ॥ १८ ॥

मन्त्रेणानेन देवेशि गन्धपुष्पैः पृथक् पृथक् ।
सर्वकारणकर्ता त्वं साक्षीभूतो जगत्रये ॥ १९ ॥

हे देवि ! इस मन्त्र से गन्धपुष्पों से अलग-अलग पूजन करे और प्रार्थना करे कि आप सब कारणों के कर्त्ता और त्रिलोकी के साक्षी हो ॥ १९ ॥

पापं ब्रह्मवधं घोरं हर मे भुवनाधिप ।

मंत्र—ॐ चक्रधराय नमः । ॐ त्र्यम्बकाय नमः । ॐ शङ्खहस्ताय नमः । ॐ सनकसनत्कुमारसनन्दनसनातनेभ्यो नमः ॥ २० ॥

हे भुवनाधिप ! मेरे ब्रह्मवध के घोर पाप को हरो ॥ २० ॥

पूजयामास विविधैर्मोदकैश्च फलैरपि ।
प्रतिमां पूजितां तान्तु सुविप्राय प्रदापयेत् ॥ २१ ॥

अनेक प्रकार के मोदक तथा फलों से पूजन करे फिर पूजित मूर्त्ति को उत्तम ब्राह्मण को देवे ॥ २१ ॥

दशवर्णां सवृषभां पट्टवस्त्रविभूषिताम् ।
दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय तपस्विने ॥ २२ ॥

और पट्ट वस्त्र से भूषित की हुई एक बैल के सहित दश वर्णवाली गौ को वेद पढ़े हुए विद्वान तपस्वी ब्राह्मण को दान देवे ॥ २२ ॥

सप्तम्यां रविवारे च व्रतं कुर्याद्विधानतः ।
एवं करोति देवेशि पुत्रयुग्मं प्रजायते ॥ २३ ॥

हे देवेशि ! रविवारी सप्तमी को विधि से व्रत करे ऐसा करे तो दो पुत्र उत्पन्न होवें ॥ २३ ॥

कन्या नैव वरारोहे रोगं सर्वं विनश्यति ॥ २४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वाभाद्रपद-नक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम शततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥

हे वरारोहे ! कन्या उत्पन्न नहीं होती है ऐसा करने से संपूर्ण रोग नष्ट हो जाता है ॥ २४ ॥

सौवाँ अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथैकोत्तरशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

धर्मेण जायते पुत्रो धर्मेण लभते श्रियम् ।
धर्मेण व्याधिनाशः स्यात्तस्माद्धर्मपरोऽभवत् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं धर्म से पुत्र उत्पन्न होता है, धर्म से लक्ष्मी प्राप्त होती है, धर्म से व्याधि नष्ट होती है, इससे सदा धर्म करना चाहिए ॥ १ ॥

कापिल्ये नगरे देवि ब्राह्मणस्तत्र तिष्ठति ।
स वेदपाठनिरतो धनाढ्यश्च बहूद्यमी ॥ २ ॥

हे देवि ! कालपी में एक वेदपाठी ब्राह्मण रहता था, वह धनाढ्य और बहुत उद्यम करनेवाला था ॥ २ ॥

तस्य पत्नी वरारोहे पतिसेवासु तत्परा ।
एकदा चागता कन्या ब्राह्मणस्य किलानघे ॥ ३ ॥

हे वरारोहे ! उसकी स्त्री पति की सेवा में तत्पर थी । एक समय उसके घर में एक ब्राह्मण की कन्या आई ॥ ३ ॥

पुत्रेण सह देवेशि चादरस्तेन वै कृतः ।
ततो बहुदिने जाते तस्य स्वर्णं च चोरितम् ॥ ४ ॥

हे देवेशि ! वह पुत्र सहित आई तब उसने बहुत आदर किया । बहुत दिन व्यतीत हो चुके तब उस ब्राह्मण का सुवर्ण चोरी चला गया ॥ ४ ॥

कन्यापुत्रेण स्वर्णं हि हृतं चेति तदा शिवे ।
वदन्ति बहवस्तत्र जनास्तु ब्राह्मणं प्रति ॥ ५ ॥

हे शिवे ! तब बहुत से लोग उस ब्राह्मण को कहने लगे कि इस कन्या के पुत्र ने यह धन चुराया है ॥ ५ ॥

ततो रोषपरीतात्मा पौत्रो भवति वै शिवे ।
विषं भुक्तं तदा तेन बहुरोषाकुलेन तु ॥ ६ ॥

तब हे शिवे ! क्रोध से भरे उस ब्राह्मण के पोता ने बहुत क्रोध से आकुल होकर जहर खा लिया ॥ ६ ॥

मरणं तस्य वै जातं पौत्रस्यैव वरानने ।
ततो बहुदिने जाते ब्राह्मणस्य तदा मृतिः ॥ ७ ॥

हे वरानने ! तब उसके पौत्र की मृत्यु हो गई फिर बहुत दिन के पीछे उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई ॥ ७ ॥

तस्य पत्नी सती जाता सत्यलोकेऽवसत्तदा ।
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके सुरेश्वरि ॥ ८ ॥
मानुषत्वं ततो जातमयोध्यानगरे शिवे ।
धनधान्यसमायुक्तो राजमन्त्री विचक्षणः ॥ ९ ॥
पौत्रस्तस्य मृतो देवि तदुद्देशेन भो शिवे ॥१०॥

हे सुरेश्वरि ! तब उसकी स्त्री सती हो गई, इसलिये सत्यलोक में वास किया । पुण्यक्षीण हो गया तब मृत्युलोक में हे शिवे ! मनुष्ययोनि में जन्म लिया है अयोध्या नगरी में धनधान्य

से युक्त, राजा का मन्त्री और पंडित पैदा हुआ। उसके उद्देश से उसके पोता की मृत्यु हो गई थी ॥ ८–१० ॥

अतः पुत्रो न जायते कन्या चैव प्रजायते।
शरीरे सततं चोग्रो ज्वरो जातः सुदारुणः ॥ ११ ॥

इसलिए इसके पुत्र नहीं जन्मता है, कन्या ही जन्मती है और इसके शरीर में बराबर तेज दारुण ज्वर बना रहता है ॥ ११ ॥

शत्रवो बहवः सन्ति न सौख्यं लभते क्वचित्।
पुण्यं शृणु वरारोहे पूर्वपापस्य संक्षयः ॥ १२ ॥

हे वरारोहे ! बहुत से शत्रु हैं, कभी भी सुख नहीं होता है, इसके पुण्य को सुनो उससे पूर्व पाप क्षय होता है ॥ १२ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत्।
गायत्रीत्र्यम्बकं चेति श्रीश्चते इति ऋक्त्रयम् ॥ १३ ॥

घर के वित्त से छठे भाग धन को पुण्य के कार्य में खर्च करे। हे देवि ! "गायत्री", "त्रयम्बकं यजामहे०," "श्रीश्चते०" इन तीन मन्त्रों को ॥ १३ ॥

प्रतिमन्त्रं जपेल्लक्षं दशांशं हवनं ततः।
दशांशतर्पणं देवि मार्जनं तद्दशांशतः ॥ १४ ॥

हे देवि ! अलग-अलग एक-एक लाख जपवावे, फिर दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १४ ॥

गोदानं च तद्दशांशं तद्दशांशं च भोजयेत्।
ब्राह्मणांश्चैव देवेशि श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ॥ १५ ॥

हे देवेशि ! उसका दशांश गौदान करे। उससे दशांश ब्राह्मणों को श्रद्धाभक्ति से भोजन करावे ॥ १५ ॥

कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम्।
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये ॥ १६ ॥

कुँभड़ा तथा नारियल को पञ्चरत्नसहित पूर्व पाप शुद्धि के लिए गंगा के मध्य में दान करे ॥ १६ ॥

वृषभस्तरुणः शुभ्रो घण्टाचामरशोभितः ।
ब्राह्मणाय प्रदातव्यः शय्यादानं विशेषतः ॥ १७ ॥

पीछे घण्टा और चमरसहित श्वेतवर्ण बैल का दान ब्राह्मण को दे और शय्या का दान विशेष रूप से करे ॥ १७ ॥

एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ।
रोगस्यैव निवृत्तिः स्याज्ज्वरस्तस्य न जायते ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वाभाद्रपद-नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥

हे वरारोहे ! ऐसे करने से शीघ्र ही पुत्र उत्पन्न हो और रोग की निवृत्ति होकर ज्वर उसके कभी भी न हो ॥ १८ ॥

एकसौ एक का अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ द्व्युत्तरशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

गांधारनगरे देवि ब्राह्मणो वसति प्रिये ।
दयाशर्मा इति ख्यातो मद्यपानरतः सदा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! गान्धारनगर में दयाशर्मा नामक एक ब्राह्मण बसता है, वह सदा मदिरा पान किया करता था ॥ १ ॥

वेश्यासुरतसंतृप्तश्चौरकर्मरतः सदा ।
म्लेच्छाचाररतः सोपि म्लेच्छान्नं भुज्यते सदा ॥ २ ॥

वेश्या के साथ में रहनेवाला, सदा चौरकर्म में और म्लेच्छों

के आचार में रहता था। सदा म्लेच्छों के ही अन्न को खाता था ॥ २ ॥

धनं तु संचितं तेन म्लेच्छभार्यासु तत्परः ।
श्राद्धकर्मविहीनश्च पितुर्मातुश्च निन्दकः ॥ ३ ॥

इसने बहुत सा धन इकट्ठा किया और सदा म्लेच्छों की स्त्री में रमण करता था। श्राद्धकर्म से हीन और माता-पिता की निन्दा करनेवाला था ॥ ३ ॥

एवं बहुगते काले मरणं तस्य जायते ।
महारौद्रं च नामानं नरकं नामदारुणम् ॥ ४ ॥
निक्षिप्तः शृङ्खलैर्बद्ध्वा यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ५ ॥

इस तरह बहुत सा समय बीत जाने पर उसका मरना हुआ तब धर्मराज के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर बेड़ियों से बाँधकर महारौद्र नामवाले दारुण घोर नरक में पटका ॥ ४–५ ॥

नरकान्निःसृतो देवि गोधायोनिरभूत्पुरा ।
सरटस्य पुनर्योनिं चटकत्वं ततोऽभवत् ॥ ६ ॥

हे देवि ! फिर नरक से निकलकर गोह की योनि को प्राप्त हुआ, पीछे गिरगिट की योनि में, फिर चिड़ा की योनि में जन्म लिया ॥ ६ ॥

मानुषत्वं ततो लेभे मध्यदेशे वरानने ।
धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो महेश्वरि ॥ ७ ॥

हे महेश्वरि ! पीछे यह मध्यदेश में धनधान्य से युक्त और सन्तान से विहीन होकर मनुष्ययोनि को प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि ब्राह्मणत्वं यतोऽत्यजत् ।
तत्पापेनैव भो देवि पुत्रस्य मरणं मुहुः ॥ ८ ॥

हे देवेशि ! इसने पूर्वजन्म में ब्राह्मणपना त्याग दिया था, उस पाप से वारंवार इसके पुत्र मरते हैं ॥ ८ ॥

अनेन पितरौ वृद्धौ त्यक्तौ दुर्मतिना यतः ।
अतः शरीरे वै रोगः काकवन्ध्या सह्व्रणा ॥ ९ ॥

इस दुष्ट बुद्धिवाले ने अपने वृद्ध माता-पिता त्याग दिये थे। इसलिये इसके शरीर में रोग होता है और इसकी स्त्री काकवन्ध्या होकर व्रणोंवाली (फोड़ोंवाली) है ॥ ९ ॥

शान्तिं शृणु वरारोहे यतः पुत्रो हि जायते ।
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्ये च कारयेत् ॥ १० ॥
पलपञ्चसुवर्णस्य गणाध्यक्षस्य चाकृतिम् ।
कृत्वा वै पूजयेद्देवि मन्त्रेणानेन सुव्रते ॥ ११ ॥

हे वरारोहे ! जिससे पुत्र होवे ऐसी शांति को सुनो। घर के धन का आठवाँ भाग पुण्य कार्य में खर्च करे और पन्द्रह पल सुवर्ण की शिवजी की मूर्त्ति बनाकर नीचे लिखे मन्त्र से पूजन करे ॥ १०-११ ॥

गणाध्यक्ष सुरेशान सर्वोपद्रवनाशन ।
मम पूर्वं कृतं पापं हर दुःखनिवारण ॥ १२ ॥

हे गणाध्यक्ष ! हे सुरेशान ! हे सब उपद्रवों को नष्ट करनेवाले ! हे दुःखनिवारण ! पूर्व के मेरे पापों को हरो ॥ १२ ॥

एवं कृत्वा विधानं च ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
ततो भवति वंशश्च व्याधिनाशश्च जायते ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम द्व्यधिक-शततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥

इस प्रकार सम्पूर्ण विधान करके फिर (मूर्त्ति आदि को) ब्राह्मण को दान कर देवे, तब वंश बढ़ता है और व्याधि नष्ट होती है ॥ १३ ॥

एकसौ दो का अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ द्व्यधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

वदंडे च पुरे देवि लुब्धको वसति प्रिये ।
सेमानाम्ना स विख्यातस्तस्य भार्यातिनिष्ठुरा ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! वैदण्ड नामक पुर में एक व्याध रहता था, वह सेमा नाम से विख्यात था और उसकी स्त्री अत्यन्त कठोर थी ॥ १ ॥

प्रत्यहं मृगमांसेन व्ययं कुर्याद्दिने दिने ।
एवं सर्वं वयो जातं लुब्धकस्य तदा प्रिये ॥ २ ॥
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ।
निक्षिप्तो नरके घोरे षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ३ ॥

वह प्रतिदिन मृगमांस से अपना खर्च चलाया करता था और ऐसे उस व्याध की सम्पूर्ण अवस्था बीत गई । फिर उसका मरण हो गया । उस समय यमराज के दूतों ने यम की आज्ञा पाकर उसको हजार वर्षों तक घोर नरक में पटक रक्खा ॥ २-३ ॥

भुक्तं च विविधं दुःखं कृमिसूचिमुखैर्युतम् ।
मानुषत्वं ततो जातं धनधान्यसमन्वितम् ॥ ४ ॥

वहाँ अनेक प्रकार के दुःख सूचिमुख आदि कृमियों से भोगे, इसके अनंतर मनुष्य भया है, धनधान्य से युक्त है ॥ ४ ॥

पुत्राणां मरणं देवि जायते हि विपाकतः ।
पलपञ्चसुवर्णस्य माल्यं मेरुयुतं तु वै ॥ ५ ॥

हे देवि ! पूर्व कर्मविपाक से इसके पुत्रों की मृत्यु होती है । पाँच पल सुवर्ण की माला बनवावे, उसके बीच में सुमेरु बनवावे ॥ ५ ॥

ब्राह्मणाय ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ।
एवं कृते वरारोहे पुत्रस्तस्य च जीवति ॥ ६ ॥

फिर उसको ब्राह्मण को दान दे, शय्यादान विशेष करके दे। हे वरारोहे ! ऐसा करने से पुत्र जीता है ॥ ६ ॥

व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥ ७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वाभाद्रपद-नक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम त्र्यधिक-शततमोऽध्यायः ॥ १०३ ॥

संपूर्ण व्याधियाँ नष्ट होवें और काकवंध्या स्त्री पुत्र को प्राप्त होवे ॥ ७ ॥

एकसौ तीन का अध्याय समाप्त ।

———:o:———

अथ चतुरधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

श्रीपुरे नगरे देवि द्विज एकोऽवसत्पुरा ।
एकदा तस्य वै गेहे गुरुपुत्रः समागतः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! पहले श्रीपुर नगर में एक ब्राह्मण बसता था । एक समय उसके घर में उसके गुरु का पुत्र आया ॥ १ ॥

आदरं बहुधा कृत्वा मासमेकं तदा खलु ।
गुरुपुत्रस्य घातं हि कृत्वा द्रव्यस्य लोभतः ॥ २ ॥

एक महीना तक वहाँ बहुत आदर से रक्खा, पीछे द्रव्य-लोभ से गुरु के पुत्र का वध किया ॥ २ ॥

तेन पापेन भो देवि महापापयुतो नरः ।
पुत्रहीनश्च देवेशि जायते धनवर्जितः ॥ ३ ॥

हे देवि ! उस पाप से वह मनुष्य महापापी है। इसलिये इसके पुत्र नहीं होता है और धनहीन है ॥ ३ ॥

वंशगोपालमंत्रं वै गायत्रीमन्त्रमेव च ।
हरिवंशश्रवणं देवि कुर्याच्च विधिपूर्वकम् ॥ ४ ॥

हे देवि ! विधि से संतानगोपाल व गायत्रीमंत्र को जपवावे और हरिवंश पुराण को सुने ॥ ४ ॥

तुलसीवाटिकां कृत्वा तन्मूले विष्णुपूजनम् ।
दशवर्णां ततो दद्यात्पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ५ ॥

तुलसी का थाँवला बनाकर उसकी जड़ में विष्णु का पूजन करे। और पूर्वपाप को नष्ट करनेवाली दश प्रकार के वर्णोंवाली गौ का दान करे ॥ ५ ॥

स्वर्णनिष्कस्ततो दद्याद्दशगोदानमेव च ।
एवं कृते वरारोहे वंशो भवति नान्यथा ॥ ६ ॥

एक तोला सुवर्ण का दान और दश गौओं का दान करे। हे वरारोहे ऐसा करने से निश्चय वंश बढ़ता है ॥ ६ ॥

व्याधिनाशो भवेद्देवि सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तरा-भाद्रपदनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०४ ॥

हे देवि ! व्याधियाँ नष्ट होती हैं, यह मेरा वचन सत्य है। इसमें संशय नहीं है ॥ ७ ॥

एकसौ चार का अध्याय समाप्त ।

———:o:———

अथ पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मणिकाख्यपुरे रम्ये वसन्ति बहवो जनाः ।
लवणकारो वसत्येको नित्यं लवणविक्रयी ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं कि रमणीक मणिपुर में बहुत से जन वास करते थे। वहाँ एक नमक बनानेवाला रहता था। वह नित्य लवण बेचा करता था ॥ १ ॥

ब्राह्मणीगमनं तेन कृतं शूद्रेण वै शिवे ।
तेन पापेन भो देवि वंशहीनश्च जायते ॥ २ ॥

हे शिवे ! उस शूद्र ने ब्राह्मणी के संग गमन किया था, इस पाप से यह वंशहीन है ॥ २ ॥

व्याधियुक्तो महेशानि पीडा चाङ्गेषु जायते ।
शान्तिं शृणु महेशानि येन पापनिवर्तनम् ॥ ३ ॥

हे महेशानि ! यह बीमारी से युक्त है, और इसके अंगों में बहुत पीड़ा रहती है, जिससे पूर्वपाप की निवृत्ति हो उस शांति को सुनो ॥ ३ ॥

गृहवित्ताष्टमैर्भागैर्ब्राह्मणं तोषयेद्यदि ।
हरिवंशश्रवं देवि विधिवद्यदि पार्वति ॥ ४ ॥

घर के वित्त से आठवाँ भाग धन का दान करके ब्राह्मण को प्रसन्न करे। और हे पार्वति ! हरिवंश को विधिपूर्वक सुने ॥ ४ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि कूष्माण्डं चैव दापयेत् ।
एवंकृते वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा ॥ ५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तराभाद्रपद-नक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम पञ्चाधिक-शततमोऽध्यायः ॥ १०५ ॥

हे देवि ! ब्राह्मणों को भोजन करवावे, कुंभड़ा दान करे । हे वरारोहे ! ऐसा करने से पुत्र की उत्पत्ति होती है इसमें अन्यथा नहीं ॥ ५ ॥

एकसौ पाँच का अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथ षडधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अलर्काख्यपुरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये ।
चन्द्रवर्मेति विख्यातो भार्या देवीतिसंज्ञिका ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! अलर्का नगरी में एक क्षत्रिय बसता था । वह चंद्रवर्मा नामवाला था, और उसकी स्त्री देवी नामवाली थी ॥ १ ॥

क्षत्रधर्मरतो नित्यं धनाढ्यः शूरसंमतः ।
कृष्णदास इति ख्यातो विप्रस्तस्य पुरोहितः ॥ २ ॥

वह नित्य प्रति क्षत्रिय के धर्म में तत्पर था । शूरवीरों में मान्य, कृष्णदास नामक था । उसका एक पुरोहित ब्राह्मण था ॥ २ ॥

क्रोधतः क्षत्रियस्यापि बभूव मरणं यतः ।
पुरोहितस्य विप्रस्य सप्ताहाच्च सुतक्षयः ॥ ३ ॥

उस क्षत्रिय के क्रोध से लड़ाई में उस पुरोहित ब्राह्मण की मृत्यु हो गई । सात दिनों के भीतर उस ब्राह्मण का पुत्र भी मर गया ॥ ३ ॥

व्याधिपीडा गुल्मजालैः पीड्यते सततं हि सः ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपञ्चरेत् ॥ ४ ॥

उस पाप से उत्पन्न हुई व्याधि पीड़ा गुल्मज़ालों (फुंसियों)

से वह सदा पीड़ित है, इससे गायत्री के मूलमंत्र का पाँच लक्ष जप करावे ॥ ४ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
ब्राह्मणस्य ततो देवि प्रतिमां कारयेद् बुधः ॥ ५ ॥

घर के धन के छठे भाग का पुण्य करावे । हे देवि ! फिर बुद्धिमान् पुरुष ब्राह्मण की मूर्त्ति करावे ॥ ५ ॥

पूजयित्वा ब्राह्मणाय दत्त्वा पापनिवृत्तये ।
पलपञ्चसुवर्णस्य दद्याद्वै ब्राह्मणाय च ॥ ६ ॥

और उस मूर्त्ति का पूजन करके पाप दूर होने के लिए ब्राह्मण को दे । पाँच पल सुवर्ण ब्राह्मण को और देवे ॥ ६ ॥

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा सुपुत्रिणी ॥ ७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तराभाद्रपद-नक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम षडधिक-शततमोऽध्यायः ॥ १०६ ॥

ऐसा करने से काकवन्ध्या स्त्री के पुत्र जन्मता है । मृतवत्सा सुंदर पुत्रवाली होती है ॥ ७ ॥

एकसौ छः का अध्याय समाप्त ।

———:०:———

अथ सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अयोध्यानिकटे देवि विप्रश्चैकोऽवसत्पुरा ।
वैष्णवोक्तप्रकारेण दीक्षां प्राप्तो हि गर्वितः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! अयोध्यापुरी के पास एक ब्राह्मण बसता था । वह वैष्णव मत के अनुसार दीक्षा लेकर अति अभिमानी हो गया था ॥ १ ॥

वेदनिन्दारतोऽसाधुः श्राद्धादिविधिवर्जितः ।
शिवभक्तिरतानां च नाभिवादं समाचरेत् ॥ २ ॥

और वेद की निंदा करनेवाला, असाधु श्राद्धादिकों की विधि से रहित था । जो शिव की भक्ति में तत्पर थे, उनको नमस्कार भी नहीं करता था ॥ २ ॥

विप्रद्रोहरतश्चैव हरिमन्दिरशोभितः ।
एकदा तस्य गेहे तु चागतः पथिकः प्रिये ॥ ३ ॥

ब्राह्मण से द्रोह करनेवाला तथा हरिमंदिर से शोभित था । एक समय उसके घर में एक पथिक (बटोही) साधु आया ॥ ३ ॥

रुद्राक्षालङ्कृतो दान्तस्तस्मै क्रूरमभाषत ।
विषमाहारपानादौ दत्तं तेन द्विजन्मने ॥ ४ ॥

वह रुद्राक्ष की माला से युक्त तथा जितेंद्रिय था, उसको इसने क्रूर वचन कहा, और खानपान आदि में उसको विष दे दिया ॥ ४ ॥

रात्रौ तद्द्रव्यलोभेन घटं कृत्वा त्वपाहरत् ।
कूपमध्ये तु तं विप्रं पापीयान् वैष्णवाधमः ॥ ५ ॥

रात्रि में उसके द्रव्य के लोभ से उस ब्राह्मण को वह पापी, अधम, वैष्णव कुआँ में घट की तरह बनाकर फाँस दिया ॥ ५ ॥

कालान्तरे मृतिर्जाता तस्य साधोर्दुरात्मनः ।
विष्णुनाम स्मरेन्नित्यं वैकुण्ठे वासमाप्तवान् ॥ ६ ॥

फिर कुछ समय बाद उस दुरात्मा साधु की मृत्यु हो गई । यह नित्य प्रति विष्णुभगवान् के नाम का स्मरण किया करता था, इसलिये इसको वैकुण्ठ वास हो गया ॥ ६ ॥

क्षीणे पुण्ये ततो देवि विड्भक्षो ग्रामशूकरः ।
ततो मनुष्ययोनिश्च दृश्यते पुत्रवर्जितः ॥ ७ ॥

रोगवानल्पकीर्तिश्च स एव सुरसुन्दरि ।
अतः शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणुष्व हरवल्लभे ॥ ८ ॥

हे देवि ! फिर पुण्यक्षीण होने के बाद वह विष्ठा को खानेवाला ग्राम का शूकर हुआ, पीछे मनुष्ययोनि में प्राप्त होकर पुत्ररहित रोगी और स्वल्प कीर्तिवाला हुआ । हे हरवल्लभे ! अब इसकी शांति को कहता हूँ उसको सुनो ॥ ७-८ ॥

लक्षमुद्रां ब्राह्मणाय दत्त्वा काश्यास्तु सेवनम् ।
ब्रह्मचर्यरतो नित्यं ततो मुच्येत पातकात् ॥ ९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तराभाद्रपद-नक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०७ ॥

ब्राह्मण को एक लाख रुपयों का दान देकर काशी में वास करे, ब्रह्मचर्य से रहे, तब पाप से छुटकारा पाता है ॥ ९ ॥

एकसौ सात का अध्याय समाप्त ।

—:०:—

अथाष्टाधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

मगधे विषये देवि लब्धको वसति प्रिये ।
प्रत्यहं मृगमांसेन व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं, हे देवि ! मगधदेश में एक व्याध रहता था, वह प्रति दिन मृगों के मांस से अपना खर्च चलाता था ॥ १ ॥

एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ।
मरणं तस्य वै यातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ २ ॥
निःक्षिप्तो नरके घोरे षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
भुक्तं विविधजं दुःखं क्रिमिसूचिमुखैर्युतम् ॥ ३ ॥

ऐसे ही उसकी संपूर्ण अवस्था बीत गई और वृद्ध अवस्था में पहुँचा तब उसकी मृत्यु हो गई, फिर उसको यम के दूतों ने यम की आज्ञा से साठ हजार वर्षों तक घोरनरक में रक्खा, वहाँ तरह-तरह का सूचिमुख आदि क्रिमियों से दुःख पाया ॥ २-३ ॥

नरकान्निःसृतो देवि मृगत्वं जायते खलु ।
शृगालस्य ततो योनिं छागयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ४ ॥

हे देवि ! पीछे नरक से निकलकर मृगयोनि को प्राप्त हुआ, फिर गीदड़ की योनि में आकर बकरा की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥

मानुषत्वं ततो जातं धनधान्यसमन्वितम् ॥ ५ ॥

इसके बाद मनुष्य हुआ है और धनधान्य से युक्त है ॥ ५ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि जलदानं च वै कृतम् ।
धनाढ्यत्वं पुनर्जातो ह्यपुत्रो मृगताडनात् ।
पुत्राश्च बहवो जातास्तेषां मृत्युः प्रजायते ॥ ६ ॥

पूर्वजन्म में इसने जलदान किया था, इसलिये धनाढ्य है और मृगों को मारा था इससे पुत्ररहित है, बहुत से पुत्र भी होते हैं, परन्तु उनकी मृत्यु हो जाती है ॥ ६ ॥

रोगाणां च तथोत्पत्तिर्ज्वरश्चैव पुनः पुनः ।
शान्तिं शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ७ ॥

रोगों की उत्पत्ति तथा वारंवार ज्वर होता है, इसलिये पूर्व पाप को नष्ट करनेवाली इसकी शांति को सुनो ॥ ७ ॥

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ।
गायत्र्या वा शिवार्येति जातवेदेति वै पुनः ॥ ८ ॥

दशायुतजपं कुर्याद्दशांशहवनं ततः ।
दशांशं तर्पणं देवि मार्जनं तद्दशांशतः ॥ ९ ॥

घर के धन का छठा भाग पुण्य कार्य में खर्च करे। और "गायत्री" वा "ॐ नमः शिवाय" वा "जातवेदसे०" इन मन्त्रों का एक लक्ष जप करावे और उसका दशांश हवन, दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन करावे ॥ ८-९ ॥

ततो वै भोजयेद्भक्त्या द्विजान् देवि दशांशतः।
दशवर्णां ततो दद्याद् वृषभं भूषितं शुभम् ॥ १० ॥

हे देवि ! पीछे मार्जन की दशांश संख्या से ब्राह्मणों को भोजन करावे, फिर दश प्रकार के वर्णवाली गौ का दान करे और विभूषित किये हुए उत्तम एक बैल का दान करे ॥ १० ॥

पलपञ्चसुवर्णस्य माल्यं मेरुयुतं तु वै।
ब्राह्मणाय ततो दद्याच्छय्यादानमनन्तरम् ॥ ११ ॥

और पाँच पल सुवर्ण की माला सुमेरुसहित बनवावे, फिर उसको ब्राह्मण को दान दे, उसके बाद शय्यादान करे ॥ ११ ॥

एवं कृते वरारोहे पुत्रः खलु प्रजायते।
व्याधयः सङ्क्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामाष्टाधिक-शततमोऽध्यायः ॥ १०८ ॥

हे वरारोहे ! ऐसा करने से निश्चय पुत्र हो, संपूर्ण व्याधियाँ नष्ट होवें और काकवंध्या स्त्री पुत्र को प्राप्त होती है ॥ १२ ॥

एकसौ आठ का अध्याय समाप्त।

—:०:—

अथ नवाधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

श्रीपुरे नगरे देवि द्विज एकोऽवसत्पुरा ।
पुत्रपौत्रयुतो देवि धनधान्यसमन्वितः ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि! पहले श्रीपुर नगर में एक ब्राह्मण बसता था । वह पुत्र, पौत्र तथा धनधान्य से युक्त था ॥ १ ॥

वैश्यकर्मरतो नित्यं क्रयविक्रयतत्परः ।
महिषीं वृषभं वस्त्रं चामरं गजवाजिनौ ॥ २ ॥

सो नित्य प्रति वैश्य कर्म में खरीदने, बेचने का व्यवहार करता था । भैंस, बैल, वस्त्र, चामर, हस्ती, घोड़ा इनको बेचा करता था ॥ २ ॥

प्रत्यहं विक्रयं कृत्वा कृतश्च धनसङ्ग्रहः ।
एकदा तस्य वै गेहे गुरुपुत्रः समागतः ॥ ३ ॥

प्रति दिन इनको बेचकर उसने धन संग्रह किया । एक समय उसके घर में गुरु का पुत्र आया ॥ ३ ॥

आदरं बहुधा कृत्वा मासे याते ततः शिवे ।
गमनं च हरिद्वारे स्नानार्थं कृतवांस्तथा ॥ ४ ॥

हे शिवे ! तब उसका बहुत आदर किया । एक महीना व्यतीत हो चुका तब स्नान के लिये हरिद्वार को चला गया ॥ ४ ॥

गुरुपुत्रेण भो देवि स्वर्णमूर्त्तिद्वयं तथा ।
ब्राह्मणाय तु दत्तं वै ततो वै गमनं कृतम् ॥ ५ ॥

हे देवि ! तब उस गुरुपुत्र ने दो सुवर्ण की मूर्त्ति ब्राह्मण को सौंपकर पीछे गमन किया ॥ ५ ॥

हरिद्वारं ततो गत्वा तत्र प्राणमथात्यजत् ।
मूर्त्तिद्वयं गुरोश्चैव विक्रीतं तद्व्ययः कृतः ॥ ६ ॥

फिर वहाँ हरिद्वार पर जाकर प्राणों को त्याग दिया और उस ब्राह्मण ने गुरुपुत्र की दोनों मूर्त्ति बेच कर खर्च कर दीं ॥ ६॥

एवं बहुगते काले मरणं ब्राह्मणस्य च ।
यमाज्ञया महादूतैर्नरके नाम कर्द्दमे ॥ ७॥

बहुत सा समय बीत चुका तब ब्राह्मण की मृत्यु हो गई। और उसको यमदूतों ने यमराज की आज्ञा पाकर कर्द्म नरक में ॥ ७ ॥

निःक्षिप्तो वै ततो देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ।
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ८॥

पटका, हे देवि ! पीछे साठ हजार वर्षों तक नरक की पीड़ा को भोग के नरक से निकलकर बाघ की योनि को प्राप्त हुआ ॥ ८ ॥

तीर्थे पुण्यतमे देवि कौशलायां सुरेश्वरि ।
बिडालस्य ततो योनिं मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ९॥

हे देवि ! हे सुरेश्वरि! पवित्र तीर्थ कौशलापुरी में बिलाव की योनि को प्राप्त होकर फिर मनुष्ययोनि में पैदा हुआ ॥ ९ ॥

ब्राह्मणस्य कुले जन्म ज्ञानवान् प्रियदर्शनः ।
देवताराधने प्रीतिः परस्त्रीलम्पटस्तथा ॥ १० ॥

ब्राह्मण के कुल में जन्मा है। ज्ञानवान् तथा प्रियदर्शनवाला है, देवता का आराधन करनेवाला तथा पराई स्त्री की इच्छा करनेवाला है ॥ १० ॥

तस्यापत्यत्रयं देवि कन्यकापुत्रकौ तथा ।
तेषा वै मरणं जातं पुनः पुत्रो न जायते ॥ ११ ॥

हे देवि ! इसके तीन संतानें हुईं, एक कन्या दो पुत्र । उनकी मृत्यु हो गई। फिर पुत्र नहीं जन्मा है ॥ ११ ॥

काकवन्ध्या भवेद्भार्या गौराङ्गी सुन्दरी तु सा ।
तन्वङ्गी दीर्घकेशी च स्वपतौ प्रियभाषिणी ॥ १२ ॥

गौरवर्णवाली सुन्दर रूपवती इसकी स्त्री काकवंध्या है। सूक्ष्म अंगवाली, बड़े केशोंवाली तथा अपने पति से प्रिय बोलनेवाली है ॥ १२ ॥

तस्य पापक्षयं वक्ष्ये पुनः पुत्रो यतो भवेत् ।
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्गोपालस्य तु कीर्त्तनम् ॥ १३ ॥

अब उसके पाप नष्ट होने की विधि कहता हूँ जिससे पुत्र उत्पन्न हो। हरिवंश को सुने और गोपाल का कीर्तन करे ॥ १३ ॥

वंशगोपालमन्त्रस्य गायत्रीमन्त्रकस्य च ।
लक्षद्वयं वरारोहे जपं वै कारयेत्सुधीः ॥ १४ ॥

हे वरारोहे ! 'संतान गोपाल मंत्र' वा 'गायत्री मंत्र' इनका दो लाख जप करावे ॥ १४ ॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ।
तुलसीवाटिकां कृत्वा तन्मूले विष्णुपूजनम् ॥ १५ ॥

जप का दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करावे। तुलसी का थांवला बनवाकर उसके मूल में विष्णु भगवान् का पूजन करे ॥ १५ ॥

दशवर्णगवां दानं शय्यादानं विशेषतः ।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छतसंख्यान्द्विजोत्तमान् ॥ १६ ॥

दश प्रकार के वर्णोंवाली गौओं का दान करे विशेष शय्यादान करे। पीछे सौ ब्राह्मणों को भोजन करवावे ॥ १६ ॥

विष्णोश्च प्रतिमां कृत्वा सौवर्णीं दशभिः पलैः ।
पूजयित्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ १७ ॥

दश पल सुवर्ण की मूर्त्ति बनवाकर विधि से पूजनकर उसको ब्राह्मण को दान दे ।। १७ ।।

एवं कृते न सन्देहो वंशो भवति नान्यथा ।। १८ ।।

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामनवाधिकशततमोऽध्यायः ।। १०९ ।।

ऐसा करने से वंश बढ़ता है इसमें संदेह नहीं है ।। १८ ।।

एकसौ नव का अध्याय समाप्त ।

——:o:——

अथ दशाधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

माणिक्ये च पुरे देवि वसन्ति बहवो जनाः ।
लवणकृद्वसत्येको प्रत्यहं लवणं कृतम् ।। १ ।।

शिवजी कहते हैं हे देवि ! माणिक्यपुर में बहुत से जन बसते हैं। वहाँ कोई लवणकार रहता था, सो प्रतिदिन नमक बनाया करता था ।। १ ।।

लवणं विक्रयेन्नित्यं व्ययं कृत्वा दिने दिने ।
तस्य मित्रं द्विजः कश्चिदागतस्तस्य वै गृहे ।। २ ।।

नित्यप्रति नमक ही बेचा करता उसी में अपना खर्च चलाता था। उसके घर में कोई ब्राह्मण उसका मित्र आया ।। २ ।।

धनाढ्यो रत्नसंयुक्तस्तत्र वासमकारयत् ।
आदरं बहु सम्मानं कृत्वा मित्रेण वै शिवे ।। ३ ।।

धनाढ्य और रत्नों से युक्त था और वहाँ रहने लगा। हे शिवे ! उसके मित्र ने बहुत आदर सम्मान से रक्खा ।। ३ ।।

पत्नी शूद्रस्य वै हृष्टा पुंश्चली चपला तु सा ।
मासमेकं वरारोहे तस्य मित्रस्य वै स्थितिः ।। ४ ।।

उस शूद्र की स्त्री हृष्ट पुष्ट थी और व्यभिचारिणी तथा चपल थी। हे वरारोहे! उस शूद्र के मित्र की स्थिति एक महीना तक वहाँ रही ॥ ४ ॥

मित्रपत्न्या विषं दत्तं ब्राह्मणाय तदा शिवे।
ब्राह्मणेन च न ज्ञातं भोजनाऽभ्यन्तरे तथा ॥ ५ ॥

हे शिवे! तब उस मित्र की स्त्री ने ब्राह्मण को विष दे दिया। भोजन के अन्दर दिया हुआ विष ब्राह्मण को नहीं मालूम हुआ ॥ ५ ॥

ब्राह्मणस्याभवन्मृत्युरर्द्धरात्रे गते सति।
नद्यां शवं ततस्त्यक्त्वा समगृह्णाच्च तद्धनम् ॥ ६ ॥

पीछे आधी रात्रि व्यतीत हो गई तब उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई। फिर उस मुर्दे को नदी में पटक दिया और उसका सब धन ले लिया ॥ ६ ॥

ब्राह्मणार्थं च संगृह्य कृतं व्ययमहर्निशम्।
भार्यया सह पुत्राभ्यां भुक्त्वा द्रव्यं वरानने ॥ ७ ॥

हे वरानने! ब्राह्मण के धन को लेकर स्त्री-पुत्र सहित सब धन खर्च किया ॥ ७ ॥

ततो वृद्धे च वयसि मरणं समजायत।
पश्चान्मृता तु सा भार्या कुलटा व्यभिचारिणी ॥ ८ ॥

जब वृद्ध अवस्था हुई तब उसकी मृत्यु हो गई। पीछे वह कुलटा व्यभिचारिणी उसकी स्त्री भी मर गई ॥ ८ ॥

यमदूतैर्महाघोरे नरके पङ्कसंज्ञके।
कुम्भीपाके तदा देवि निःक्षिप्तश्च यमाज्ञया ॥ ९ ॥

हे देवि! पंक महाघोर कुंभीपाक नरक में यमराज की आज्ञा से यमदूतों ने पटक दिया ॥ ९ ॥

युगमेकं विशालाक्षि भुक्त्वा नरकयातनाम् ।
नरकान्निःसृतो देवि सूकरत्वं प्रजायते ॥ १० ॥

हे विशालाक्षि ! एक युग पर्यन्त नरक की पीड़ा भोगकर नरक से निकल सूकरयोनि को प्राप्त हुआ ॥ १० ॥

पुनः काकस्य वै योनिं बिडालत्वं ततोऽभवत् ।
मानुषत्वं ततो देवि देशे शुभ्रे तदाऽभवत् ॥ ११ ॥

पीछे काक की योनि को प्राप्त हुआ, उसके बाद बिलाव की योनि, हे देवि ! फिर शुद्धदेश में मनुष्ययोनि में पैदा हुआ ॥ ११ ॥

पूर्वजन्मनि देवेशि कुरुक्षेत्रे यतो मृतः ।
अतो धनं भवेत्तस्य नापत्यं द्विजहत्यया ॥ १२ ॥

हे देवेशि ! यह पूर्वजन्म में कुरुक्षेत्र में मरा था इसलिये इसके धन तो है परन्तु ब्राह्मण की हत्या करने से संतान नहीं हुई ॥ १२ ॥

शरीरे जायते व्याधिर्भार्या तस्य मृतप्रजा ।
अस्य पापस्य शमनीं शान्ति शृणु वरानने ॥ १३ ॥

इसके शरीर में व्याधि है स्त्री के संतान नहीं जीती है । हे वरानने ! अब इसके पाप को दूर करने की शांति को सुनो ॥ १३ ॥

गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ।
हवनं कारयेद्देवि कुण्डे योनिसुशोभिते ॥ १४ ॥

घर के वित्त से आठवाँ भाग धन को ब्राह्मण को समर्पण करे । हे देवि ! सुंदर कुंड में हवन करे ॥ १४ ॥

चतुरस्त्रे वरारोहे दशांशं विधिपूर्वकम् ।
तर्पणं तद्दशांशेन तद्दशांशेन मार्जनम् ॥ १५ ॥

हे वरारोहे ! चौकुंठे कुंड में विधिपूर्वक दशांश हवन करे उसका दशांश तर्पण और मार्जन करे ॥ १५ ॥

गां सवत्सां ततो दद्यात्स्वर्णरत्नविभूषिताम् ।
ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात्कूष्माण्डं प्रददेत्सुधीः ॥ १६ ॥

पीछे बछड़े सहित और सोना तथा रत्नों से विभूषित की हुई गौ का दान करे। ब्राह्मणों को भोजन करावे, बुद्धिमान् पुरुष विधिपूर्वक पेठे का दान करे ॥ १६ ॥

एवं कृते वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनन्नाम दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११० ॥

ऐसे करने से पुत्र होता है। हे वरारोहे ! यह अन्यथा नहीं है ॥ १७ ॥

एकसौ दश का अध्याय समाप्त ।

—:o:—

अथैकादशाधिकशततमोऽध्यायः ।

शिव उवाच ।

अलर्कस्य पुरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये ।
चन्द्रवर्मेति विख्यातः पत्नी देवी ततोऽभवत् ॥ १ ॥

शिवजी कहते हैं हे देवि । अलर्कपुरी में एक क्षत्रिय बसता था। उसका नाम चन्द्रवर्मा था और उसकी स्त्री देवी थी ॥ १ ॥

क्षत्रधर्मरतो नित्यं धनाढ्यः शूरसम्मतः ।
कृष्णदास इति ख्यातो विप्रस्तस्य पुरोहितः ॥ २ ॥

वह नित्यप्रति क्षत्रिय के धर्म में तत्पर धनाढ्य और

शूरवीर था तथा कृष्णदास नाम का एक ब्राह्मण उसका पुरोहित था ॥ २ ॥

विप्राय प्रददौ भूमिं गिरिजे विग्रहे सति ।
ततो बहुदिने जाते दण्डस्तस्माच्च याचितः ॥ ३ ॥

हे गिरिजे ! एक समय लड़ाई होने से उस ब्राह्मण को भूमि दान दिया । फिर बहुत दिन बीत चुके तब उस ब्राह्मण से उस क्षत्रिय ने दंड माँगा ॥ ३ ॥

ब्राह्मणोथावदद्देवि नाहं दण्डयः कदाचन ।
ततो रोषपरीतात्मा क्षत्रियो ब्राह्मणं प्रति ॥ ४ ॥

हे देवि ! तब ब्राह्मण बोला कि मैं दंड देने योग्य कभी नहीं हूँ उसके बाद क्रोध से भरा हुआ क्षत्रिय ब्राह्मण के प्रति ॥ ४ ॥

दुर्वचश्चावदद्देवि ब्राह्मणं साधुसम्मतम् ।
मरणं ब्राह्मणस्यैव भूम्युद्देशेन वै शिवे ॥ ५ ॥

खोटा वचन बोलता रहा । हे देवि ! साधुओं से सम्मत ब्राह्मण को खोटा वचन कहा । तब उससे ब्राह्मण की मृत्यु हो गई ॥ ५ ॥

ततो बहुगते वर्षे मरणं क्षत्रियस्य तु ।
यमदूतैर्महाघोरैर्नरके नामदारुणे ॥ ६ ॥

फिर बहुत वर्ष व्यतीत हो चुके तब क्षत्रिय की मृत्यु हो गई । यमराज के महाघोर दूतों ने दारुण नाम नरक ॥ ६ ॥

कुम्भीपाके सदा घोरे क्षिप्तवान्यमशासनात् ।
युगानां त्रयसङ्ख्यानां नरके वास एव च ॥ ७ ॥

तथा कुंभीपाक में यमराज की आज्ञा से उसको पटक दिया । तीन युग पर्यन्त नरक में वास रहा ॥ ७ ॥

नरकान्निःसृतो देवि प्रेतत्वं समजायत ।
शूकरस्य पुनर्योनिं ततो भवति मानुषः ॥ ८ ॥

हे देवि ! नरक से निकल के पीछे प्रेत की योनि भई, फिर शूकर की योनि हुई, पीछे मनुष्य हुआ है ॥ ८ ॥

मध्यदेशे विशालाक्षि हिमविन्ध्याद्रिमध्यमे ।
धनधान्यसमायुक्तो ब्राह्मणानां च सेवकः ॥ ९ ॥

हे विशालाक्षि ! हिमाचल तथा विंध्याचल के मध्यदेश में धन धान्य से युक्त ब्राह्मणों का सेवक है ॥ ९ ॥

इहजन्मनि देवेशि मरणं सन्ततेर्ध्रुवम् ।
काकवन्ध्या भवेन्नारी मृतवत्सा पुनः पुनः ॥ १० ॥

हे देवेशि ! इस जन्म में इसकी संतान नष्ट होती है या इसकी स्त्री काकवंध्या है, और वारंवार मृतवत्सा है ॥ १० ॥

शरीरे व्याधिरुत्पन्नो ज्वरश्चैव मुहुर्मुहुः ।
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ॥ ११ ॥

शरीर में व्याधि है और वारंवार ज्वर आता है अब इसकी शांति को कहता हूँ सुनो ॥ ११ ॥

गृहवित्तषडंशं तु ब्राह्मणाय प्रकल्पयेत् ।
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं तथा ॥ १२ ॥

घर के छठे भाग धन को ब्राह्मण को देवे और गायत्री मूल मंत्र का पाँच लक्ष जप करावे ॥ १२ ॥

दशांशं कारयेद्देवि हवनं विधिपूर्वकम् ।
तर्पणं मार्जनं तद्वद्गोदानं च विशेषतः ॥ १३ ॥

हे देवि ! विधिपूर्वक दशांश हवन करावे, तर्पण तथा मार्जन करावे और गौ दान करे ॥ १३ ॥

ब्राह्मणस्य ततो देवि प्रतिमां कारयेद्बुधः ।
पलपञ्चसुवर्णस्य वस्त्ररत्नविभूषिताम् ॥ १४ ॥

हे देवि ! पाँच पल सुवर्ण की ब्राह्मण की मूर्ति बनवावे और उसे वस्त्र और रत्नों से भूषित करे ।। १४ ।।

ततो निर्माय प्रतिमां पूजयित्वा यथाविधि ।
मन्त्रेणानेन देवेशि पाद्यं गन्धादिकं पृथक् ।। १५ ।।

हे देवेशि ! ऐसी मूर्ति को बनाकर विधि से इस मंत्र से चंदन-अक्षत आदि अलग-अलग विधि से पूजन करे ।। १५ ।।

वासुदेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल ।
ब्रह्महत्या कृता पूर्वं तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि ।। १६ ।।
वल्मीकमृत्तिकां गृह्य वेदीं वै कारयेत्ततः ।
तन्मध्ये सर्वतोभद्रं रचितं दिव्यमण्डले ।। १७ ।।

पीछे बमई की मृत्तिका लेकर वेदी बनाकर वहाँ दिव्यमंडल में सर्वतोभद्र बनावे ।। १७ ।।

तन्मध्ये प्रतिमां स्थाप्य ततः पूजां तु कारयेत् ।
ॐ वासुदेवाय नमः । ॐ जगन्नाथाय नमः ।
ॐ विष्णवे नमः । ॐ शार्ङ्गिणे नमः ।
आचार्यं च ततो नत्वा शिवविष्णुस्वरूपिणम् ।। १८ ।।
प्रभोजयेत्ततो विप्रान् दक्षिणां दापयेत्ततः ।
ततो विसर्जनं कुर्याद्वाचकं प्रणिपत्य च ।
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ।। १९ ।।

ब्राह्मणों को भोजन करवावे शक्ति के अनुसार दक्षिणा दे फिर उपदेशक गुरु को प्रणाम करके विसर्जन करे । हे वरारोहे ! ऐसा करने से शीघ्र ही पुत्र उत्पन्न होता है ।। १९ ।।

काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं सर्वव्याधिप्रणाशनम् ।
मृतवत्सा च या नारी जीवत्पुत्रा च जायते ।। २० ।।

काकवंध्या स्त्री पुत्र को प्राप्त हो और संपूर्ण व्याधि नष्ट

होवे और जिस स्त्री के संतान नहीं जीवतीं हो उसके पुत्र जीवें ॥ २० ॥

यः पठेच्छृणुयाद्वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
अतः परतरं नास्ति सत्यं सत्यं वरानने ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनन्नामैकादशोत्तर-शततमोऽध्यायः ॥ १११ ॥

हे वरानने ! जो पढ़े अथवा सुने वह सब पापों से छूट जावे इससे बढ़कर कुछ पुण्य नहीं है, यह मेरा सत्य वचन है ॥ २१ ॥

एकसौ ग्यारह का अध्याय समाप्त ।

———:०:———

(परिशिष्ट)

अथर्वणवाक्यम् ।

पार्वती ने शिव से प्रश्न किया कि हे स्वामि, आपने कर्म-विपाक का वर्णन किया सो ठीक है यह आपने नक्षत्र के चरण से वर्णन किया है। अब मैं आपसे वह पूँछती हूँ जिस तरह से वेद में लिखा हो, जिससे मृत्युलोक में मनुष्यों का संदेह दूर हो ।

शिव उवाच ।

अथ चतुःषष्टिषु यातनास्थानेषु दुःखान्यनुभूय तत्रेमानि लक्षणानि भवन्ति । ब्रह्महाऽऽर्द्रकुष्ठी, सुरापः श्यावदंतः, गुरुतल्पगः पङ्गुः, स्वर्णहारी कुनखी, श्वित्री वस्त्रापहारी, दर्दुरी तेजोपहारी, मण्डली स्नेहापहारी क्षयी तथा, अजीर्णवानन्नापहारी, ज्ञानापहारी मूकः, प्रतिहन्ता गुरोरपस्मारी, गोघ्नो जात्यन्धः, पिशुनः पूतिनासः, पूतिवक्त्रस्तु सूचकः, शूद्रोपाध्यायः श्वपाकः, त्रपुसीसचामरविक्रयी मद्यपः, एकशाकविक्रयी मृगव्याधः, कुण्डाशी मृतकश्चेलिकोवा, नक्षत्री चार्बुदी नास्तिको, रङ्गोपजीव्यभक्ष्यभक्षी गडरी, ब्रह्मपुरुषतस्कराणां दंशिकः पण्डितः षण्ढो, महापथिको गण्डिकः, चाण्डाली पुक्कसी, गोस्ववकीर्णो मध्वामेही, धर्मपत्नीषु स्यान्मैथुनप्रवर्त्तकः खल्वाटः, सगोत्रासमयस्त्र्यभिगामी श्लीपदी, पितृमातृभगिनीस्त्र्यभिगम्याविजितस्तेषांकुब्जकुण्डमण्डव्याधितव्यंदरिद्राल्पायुषोल्पबुद्धिः, चण्डषण्ढशैलूषतस्करः, परपुरुषप्रेष्यपरकर्मकराः खल्वाटवक्त्राङ्गसङ्कीर्णक्रूरकर्माणः, क्रमशश्चान्त्यजाश्चोपपद्यन्ते । तस्मात् कर्तव्यमेवेह प्रायश्चित्तं, विशुद्धैर्लक्षणैर्जायन्ते धर्मस्य धारणादिति ।

शिवजी कहते हैं हे शिवे ! जो तुमने पूँछा उसको सुनो। यह मैंने कर्मविपाक चरणगत वर्णन किया। अब उस चौंसठ ६४ नरक के स्थानों में दुःखों को भोग मनुष्यलोक में पूर्वोक्त पाप से जो चिह्न होते हैं उसको सुनो। जो मनुष्य ब्रह्महत्यारे हैं उनके गीले कुष्ठ होते हैं और मदिरा पीनेवाले के काले दाँत होते हैं। गुरु की शय्या पर गमन करनेवाले लँगड़े होते हैं। सोने को चुरानेवाले बुरे नखवाले होते हैं। वस्त्रों को चुरानेवाले श्वेतकुष्ठी होते हैं। तेज को चुरानेवाले मेढक होते हैं। तेल आदि को चुरानेवाले के चकत्ते वा क्षय रोग उत्पन्न होता है। अन्न का चुरानेवाला अजीर्ण रोगी होता है। ज्ञान का चुरानेवाला गूँगा होता है। गुरु को मारनेवाले के मिरगी होती है। गौ हत्यावाला जन्मान्ध होता है और चुगल की नाक और मुख में दुर्गन्ध आती है। शूद्र को पढ़ानेवाला चाण्डाल होता है। राँगा, सीसा, चँवर इनको बेचनेवाला मद्यप, घोड़ा आदि उत्पन्न होता है। पशुओं को बेचनेवाला मृगव्याध, कुंडाशी (जो धोबी के यहाँ खाय) धोबी उत्पन्न होता है। और बिना शास्त्र के जाने जो नक्षत्रों को बतावे वह अर्बुदरोगी, नास्तिक, अभक्ष्य खाने से रँगरेज, गंडमाला रोगी, ब्राह्मण कठोर तस्कर इनका गुरु पंडित नपुंसक। जो रात दिन रास्ता चले वह गंडमाला रोगी, और चांडाली, भंगन और गौ इनमें जो वीर्य को गेरे वह प्रमेह रोगवाला और पतिव्रता स्त्री में मैथुन के लिये जो प्रवृत्ति करे वह गंजा उत्पन्न होता है। जो अपने गोत्र की स्त्री के संग, कुसमय अपनी स्त्री के संग गमन करें वे श्लीपदी (जिसके पैर फूल जायँ), पिता और माता की भगिनी या स्त्री में वीर्य को गिरावें वे कुबड़े उत्पन्न होते हैं। मूत्रकृच्छ्री, व्यंग (जिसका अंग नष्ट हो

जाय) दरिद्री, अल्पायु, अल्पबुद्धि होते हैं। नपुंसक, नट, चोर होते हैं । वे पराये भृत्य और टहलुवे, गंजे, कुबड़े, वर्णसंकर, क्रूरकर्मी होते हैं और क्रम से अन्त्यज होते हैं । इससे मनुष्ययोनि में पाप का प्रायश्चित्त जरूर ही करना चाहिये, क्योंकि धर्म के धारण करने से निर्मल चिह्नवाले मनुष्य पैदा होते हैं । इतना सुन पार्वती ने कहा हे महाराज ! जो आपने ज्योतिष के मत से कहा और मेरे कहने से वेद का मत कहा सो मैंने अच्छी तरह सुना ।

अब पौराणिक मत कैसा है, वह भी कृपा करके सुना दीजिये । फिर शिवजी ने कहा एक समय में ब्रह्माजी ने नारद से कहा था और नारदजी से वेदव्यासजी ने प्रश्न किया था कि ब्रह्माजी ने आपसे कर्मों के विषय में शुभाशुभ कर्म किस तरह से वर्णन किया है सो आप वर्णन कीजिये । यह सुनकर नारदजी ने प्रसन्न होकर कहा सुनो, तब नारद से कर्मविपाक ब्रह्मा के कहे हुये को मैं वर्णन करता हूँ ।आप श्रवण करें। वही प्रश्न वेदव्यासजी से सब ऋषियों ने किया, इसी कर्मविपाक को वेदव्यासजी ने भी सब ऋषियों को सुनाया । वही कर्मविपाक मैं फिर भी दूसरी रीति से वर्णन करता हूँ । हे वरारोहे ! तुम सावधान होकर सुनो ।

इति अथर्वणरहस्यकम् ।

शिव उवाच ।

शिवजी कहते हैं श्रीवेदव्यासजी से मुनियों ने शंका किया था कि भगवन् ! मनुष्य की सहायता करनेवाला कौन है, और सब कुटुम्बियों के देखते ही यह शरीर त्यागकर जीव कहाँ लीन हो जाता है १ और परलोक में कैसे चलता है ? तब

व्यासजी बोले कि हे विप्रो ! सुनो जीव अकेले ही धर्म वा अधर्म को भोगता है २ और उसकी सहायता करनेवाला धर्म ही है और कुटुम्बियों से सहायता नहीं हो सकती। इसलिए बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिये कि वेदमार्ग का रास्ता नहीं छोड़े। वेदमार्ग को छोड़ने से मनुष्य भ्रमता है । ३ फिर मुनियों ने पूछा कि हे धर्मज्ञ ! धर्म से युक्त तथा हित के करनेवाले और शरीर को त्यागकरन जाने हुये मार्ग में जीव कैसे जाता है और धर्म के साथ कैसे चलता है सो वर्णन करो। ४ व्यासजी बोले कि पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि तथा आत्मा सहित बुद्धि धर्म को नित्य देखती है। ५ सब काल में रात-दिन जीवों के साक्षी पंचभूत हैं। इनके सहित धर्म जीव के साथ चलता है। ६ हे विप्रो ! त्वचा, अस्थि, मांस, वीर्य, रुधिर ये भी जीव के साथ ही जाते हैं। ७ और धर्म से युक्त जीव इस लोक में तथा परलोक में सुख को प्राप्त होता है। मैं अब कहाँ तक वर्णन करूँ। ८ फिर मुनियों ने पूछा कि जैसे धर्म जीव के साथ चलता है यह तो आपने कहा पर वीर्य की कैसे प्रवृत्ति होती है, सो हमें जानने की इच्छा है। ९ व्यासजी बोले हे द्विजोत्तमो ! शरीर में स्थित होनेवाला देव अन्न को भक्षण करता है और उसके बाद पृथ्वी, वायु, आकाश, जल और अग्नि ये भक्षण करते हैं। १० हे विप्रो ! जब ये पंचभूत तृप्त होते हैं तब भूतात्मा जो मन है वह वीर्य को प्राप्त होता है। ११ हे द्विजो ! स्त्री और पुरुष के वीर्य से गर्भ होता है, यह तुमसे वर्णन किया अब तुम्हें क्या सुनने की इच्छा है ? १२ मुनियों ने कहा जैसा गर्भ होता है सो तो आपने वर्णन किया परन्तु पुरुष को ज्ञान कैसे प्राप्त होता है, सो कहिये। १३ व्यासजी बोले कि हे मुनियो ! आसन्नमात्र कालवाला पुरुष उन पंच-

भूतों से अनुमान किया जाता है और जब पंचभूत जुदे-जुदे हो जाते हैं १४ तब जीव परमगति को प्राप्त होता है। सब भूतों से युक्त हुआ जीव जल्दी से वीर्य में प्रवेश करता है और स्त्रियों के पुष्प में प्राप्त होकर जीवसंज्ञक हो जाता है। हे मुनिजनो! पंचदेवता उसके शुभ अथवा अशुभ कर्म को देखते हैं। अब तुम्हें क्या सुनने की इच्छा है? मुनिजनों ने पूछा हे भगवन्! कृष्णरूप वह जीव त्वचा, अस्थि, मांस को त्याग कर तथा पंचभूतों से रहित होकर कैसे सुख दु:ख को भोगता है? १५-१७ व्यासजी बोले कि हे विप्रो! कर्मों से युक्त हुआ जीव जल्दी से वीर्य में प्राप्त हो काल से स्त्रियों के पुष्पों को प्राप्त हो जाता है १८ और यम के दूतों द्वारा बाँधा हुआ संसार में विचरता है और दु:खरूपी संसार-चक्र में क्लेश को प्राप्त होता है। १९ हे द्विजो! इस प्रकार लोक में प्राणी जन्म से लेकर सुकृत तथा दुष्कृत कर्म के फल को भोगता है। २० जो जन्म से धर्म में युक्त हैं वे सुख को भोगते हैं और जो धर्म करने के अनन्तर अधर्म करता है वह सुख के अनन्तर दु:ख को भोगता है २१ और जो अधर्म से युक्त है वह यम के स्थान को जाता है और महा:दुखों को प्राप्त होकर फिर सर्पादिक की योनि में प्राप्त होता है। जिसने यहाँ जैसा कर्म किया है वह वैसी ही योनि में प्राप्त होकर शुभाशुभ कर्म को भोगता है। २२-२३ जो ब्राह्मण चारों वेदों को पढ़के मोहयुक्त हो पतित अन्न को ग्रहण करता है वह गधे की योनि को प्राप्त होता है २४ और वह गधा पंद्रह वर्ष जीकर फिर बैल की योनि में जन्मता है। और फिर सात वर्ष तक जीता है। फिर ब्रह्मराक्षस होकर मांस भक्षण करता है फिर ब्राह्मण होता है। २५ हे विप्रो! जो पतित से अन्नादिक माँगनेवाले हैं वे कीड़ों की योनि को प्राप्त होते

हैं और पंद्रह वर्ष तक जीते हैं। २६ फिर गर्दभ की योनि को प्राप्त होते हैं और पाँच वर्ष तक जीते हैं। फिर पाँच वर्ष शूकरयोनि में रहते हैं। २७ फिर पाँच वर्ष मुरगा और पाँच वर्ष काक की योनि में रहते हैं। और एक वर्ष कुत्ते की योनि में रहके फिर मनुष्य होते हैं। हे विप्रो ! जो शिष्य पढ़के कुबुद्धि में पाप करता है, वह इस संसार में तीन योनियों को प्राप्त होता है इसमें संदेह नहीं है। २८ पहले कुत्ते की, दूसरे कीड़ों की, तीसरे गधे की योनि को प्राप्त होकर फिर ब्राह्मण होता है। जो शिष्य गुरु की स्त्री से गमन करके कुबुद्धि कर लेता है वह पापी घोर संसार में वित्त से रहित हो नरक वास करता है। २९-३० पहले तो कुत्ते की योनि में तीन वर्ष जीता है फिर कीड़ों की योनि में एक वर्ष जी कर ब्राह्मण होता है। ३१ जो पुत्र तथा शिष्य बिना कारण गुरु को मार देते हैं वे अपने आत्मा के कारण से हंस की योनि को प्राप्त होते हैं। ३२ जो पुत्र माता को नहीं मानते वे भी जिस प्रकार पूर्व में गर्दभ की योनि कही है वैसे ही प्राप्त होते हैं। ३३ और गर्दभ की योनि को प्राप्त होकर दश वर्ष जीते हैं। और एक वर्ष कुंभीसंज्ञक योनि में रह कर फिर मनुष्य होते हैं। ३४ माता पिता को जिसने अप्रसन्न किया है और गर्भिणी स्त्री से जिसने भोग किया है वह भी गर्दभ की योनि को प्राप्त होता है। ३५ और उस योनि में एक महीना जी करके मनुष्य योनि में प्राप्त होता है। जो माता-पिता से विमुख है वह मैना पक्षी की योनि में प्राप्त होता है। ३६ वहाँ पीड़ा को प्राप्त होकर कछुवा की योनि को प्राप्त होता है। और दश वर्ष कछुवा रहकर फिर टीड़ी की योनि को प्राप्त होता है। मनुष्य तीन वर्ष जीकर ३७ फिर छः महीने सर्प की योनि में रहता है तब मनुष्ययोनि को प्राप्त होता है। नौकर रह के

जो रानी से रत रहते हैं ३८ वह भी मोह से प्राप्त होकर वानर की योनि को प्राप्त होते हैं। और दश वर्ष तक मूषक, वानर तथा छः वर्ष श्वान होकर फिर मनुष्ययोनि को प्राप्त होते हैं। ३९ धरोहर का हरनेवाला यम के दुःखों को प्राप्त होता है, और सैकड़ों संसारों में भ्रम कर कीड़ों की योनि को प्राप्त होता है।४० वहाँ पंद्रह वर्ष जीकर फिर मनुष्य होता है।४१ जो निंदा करनेवाले हैं वे मनुष्य मयूर की योनि को प्राप्त होते हैं। और जो विश्वास देके मारते हैं वे मछली की योनि को प्राप्त होते हैं। ४२ हे द्विजो ! मच्छ होकर एक वर्ष जीता है, फिर चार महीने मृग रह कर फिर बकरी की योनि को प्राप्त होता है, ४३ और जब वर्ष दिन पूरा हो जाता है तब मृत्यु को प्राप्त हो कीड़ों की योनि में जाता है और फिर मनुष्य होता है । ४४ धान्य, यव, तिल, उड़द, कुलथी, सरसों, चने, मोथी, मूँग और गेहूँ आदि की जो मनुष्य चोरी करते हैं वे तीन वर्ष मूषक की योनि में होते हैं ४५ और फिर मर कर शूकर होते हैं और रोगयुक्त होकर कुत्ता होते हैं। फिर काल के अन्त में मनुष्य होते हैं।४६ और जो पराई स्त्री से रमण करता है वह प्रथम भेड़िया होता है ४७ फिर कुत्ता होता है, फिर गीदड़ (सियार) होता है फिर चील की योनि को प्राप्त होता है, फिर सर्प, फिर कौवा, बगुला, कीट आदि योनि को प्राप्त होता है। ४८ जो मूढ़ात्मा मोह में आकर भाई की स्त्री को भोगता है वह एक वर्ष तक कोकिला रहता है । ४९ मित्र की स्त्री, गुरु की स्त्री, राजा की स्त्री को जो भोग के लिये धारण करता है वह शूकर होता है। ५० शूकर होकर पाँच वर्ष तक, तथा दश वर्ष तक जीता है फिर चींटी होता है । तब भी तीन महीना जीता है फिर एक महीना जीता है फिर एक महीना कीड़ा रहता है

५१ और इन संसारों की साधना करके फिर कीड़ों की योनि में जाता है। वहाँ चौदह महीने तक जीकर ५२ यमराज को प्राप्त होकर मनुष्य शरीर पाता है और विवाह तथा यज्ञादिक को प्राप्त होता है। ५३ जो मोह से विवाहादिकों में विघ्न करते हैं वे मरकर कीड़े होते हैं और पंदह वर्ष जीते हैं। ५४ और जब अधर्म क्षय होता है तब मनुष्य हो जाते हैं। पहले कन्यादान करके दूसरे दान करने की जो इच्छा करता है वह भी हे विप्रो ! कीड़ों की योनि को प्राप्त होता है और वहाँ तेरह वर्ष तक जीकर ५६ अधर्म के क्षय होने पर मनुष्य हो जाता है। देवकार्य तथा पितृकार्य करके ५७ जो उनका पूजन नहीं करता वह मर कर काक होता है और सौ वर्ष काक रह कर फिर मुर्गा होता है ५८ और फिर एक महीना तक सर्प की योनि में रह कर मनुष्य होता है। जो अपने पिता माता को नहीं मानते ५९ वे भी मृत्यु को प्राप्त हो चकोर की योनि को प्राप्त होते हैं, और वहाँ कुछ वर्ष जीकर और फिर मैना की योनि को प्राप्त होकर ६० मनुष्य शरीर को प्राप्त होते हैं। जो ब्राह्मणी से गमन करता है वह कीड़ों की योनि को प्राप्त होता है ६१ और वहाँ मृत्यु को प्राप्त होकर शूकर होता है और उत्पन्न होते ही रोग से ग्रसा जाता है, ६२ फिर कुत्ता होकर कर्मों के प्रताप से मनुष्य हो जाता है पर वहाँ भी पुत्र से हीन रहता है और फिर मर कर मूषक की योनि को प्राप्त होता है। ६३ हे विप्रो ! कृतघ्नी पुरुष मर कर यम की यातना को प्राप्त होता है और वहाँ यम के क्रूर दूतों द्वारा दारुण दुःख पाता है। ६४ हे द्विजो ! वहाँ उग्र यातना को प्राप्त होकर जीव बंधन को प्राप्त होता है। कृतघ्नी होकर ६५ और संसार चक्र को प्राप्त होकर फिर कीड़ों की योनि में जाता है और वहाँ पन्द्रह वर्ष

तक जीकर ६६ मनुष्य गर्भ को प्राप्त होकर बालक अवस्था में ही मर जाता है। और मर कर बहुत काल तक सर्पादिक की योनि को प्राप्त होता है। ६७ वहाँ बहुत से वर्षों तक दुःख पाकर फिर कर्मों से ६८ बगुले की योनि को प्राप्त होता है। और वहाँ प्रायता से ताल में रहता है। जो मछली की चोरी करते हैं वे भेड़िया तथा डांस की योनि को प्राप्त होते हैं। ६९ जो फल तथा मूल वस्तु की चोरी करते हैं वे चींटी की योनि को प्राप्त होते हैं, फिर मर कर विना पैरवाले मूसे होते हैं। ७० जो खीर की चोरी करता है वह तीतर की योनि को प्राप्त होता है, और वहाँ से मर कर उल्लू की योनि को प्राप्त होते हैं। ७१ जो सुवर्ण के भाँड़े की चोरी करता है वह कीड़ों की योनि में जाता है और जो अन्न की चोरी करता है वह मुरगे की योनि को प्राप्त होता है। ७२ जो कुत्सित कर्म को करते हैं वे नाचनेवाले होते हैं। और जो अंकुश की चोरी करता है वह तोते की योनि को प्राप्त होता है। ७३ जो डुपट्टा वस्त्र की चोरी करते हैं वे हंस होते हैं, और चकोर तथा कायासंज्ञक जीव की योनि को प्राप्त होकर फिर मनुष्य होते हैं। ७४ हे द्विजो ! जो दाख की चोरी करते हैं और रेशमी वस्त्र की चोरी करते हैं वे शोभनसंज्ञक योनि में प्राप्त होते हैं ७५ और वहाँ पुरुष का वर्ण करके मृत्यु को प्राप्त हो मयूर की योनि को प्राप्त होते हैं। ७६ जो रक्त वस्त्र से जीव जीव के प्रति माँगते हैं और सुवर्ण से आदि ले गंधादि की चोरी करते हैं ७७ वे पापों से युक्त हुये चकचूंधर की योनि को प्राप्त होते हैं। और वहाँ पन्द्रह वर्ष रहकर ७८ अधर्म के क्षय होने पर मनुष्य होते हैं। जो दूध की चोरी करते हैं वे बगुला की योनि को प्राप्त होते हैं। ७९ जो नर मोह से युक्त होकर तैल की चोरी करता है वह मर के तैल पान करनेवाला जीव होता

है। ८० जो नीच नर वैरभाव करके शस्त्रों से पुरुष को तथा अन्नार्थी नर को मारता है वह मर के गधा होता है ८१ और उस योनि में एक वर्ष तक शस्त्रों से भेदन किया जाता है फिर मर करके मृग की योनि को प्राप्त होता है और विघ्नों से संयुक्त रहता है। ८२ एक वर्ष के बाद मृगयोनि में भी शस्त्रों से भेदन किया जाता है और मच्छ होके जल में रहता है। ८३ जब वहाँ चार महीने हो लेते हैं तब मर के कुत्ता होता है, और वहाँ दश वर्ष जी कर फिर हस्ती का रूप धारण कर पाँच वर्ष जीवता है। ८४ हे द्विजो ! फिर वह मृत्यु को प्राप्त होकर अधर्म को दूर कर मनुष्य होता है ८५ और लोभों तथा रोगों से युक्त हो पापों के दुःख को भोगता है। ८६ फिर वह घोरतम तथा दारुण मूसे की योनि को प्राप्त होता है और पापों से दुःख से नरकों को प्राप्त होता है। ८७ खोटी बुद्धि से जो नर घृत का होम करते हैं वे काकमद्दु रोग से युक्त रहते हैं और मत्स्य को हनन कर जो मांस को खाते हैं वे काक योनि में जाते हैं। ८८ जो कान के भूषणों को चुराते हैं वे जल के काक होते हैं और जो विश्वास देके मनुष्य को मारते हैं ८९ वे उसी के सदृश प्राणों से रहित हो जाते हैं, और मच्छ की योनि में प्राप्त हो फिर मनुष्य शरीर को प्राप्त होते हैं। ९० हे विप्रो ! फिर वह क्षीण होके जल में पड़ता है। ९१ जो आत्मा के प्रमाद से धर्म को नहीं जानते वे सदा पापों ही में युक्त रहते हैं। ९२ फिर वे सुख तथा दुःख से युक्त होके अनेक व्याधियों को प्राप्त होते हैं और खोटे म्लेच्छों के वास को प्राप्त हो वे भी म्लेच्छ हो जाते हैं इसमें संशय नहीं। ९३ जो लोभ और मोह से युक्त हो पापों का आचरण करते हैं वे सब पाप युक्त योनि में प्राप्त होते हैं। ९४ जन्म से लेकर जो पाप नहीं करते वे रोगरहित

रूपवान् तथा बलवान् होते हैं। ९५ स्त्रियाँ भी ऐसे कर्म करें तो पापों के प्रभाव से ऐसी ही योनियों को प्राप्त होती हैं ९६ और इन्हीं उपजातियों के मनुष्यों की स्त्रियाँ होती हैं। जो जो यहाँ पर चोरी करने में दोष हैं वे सब मैंने अपनी बुद्धि से और वेदों और स्मृतियों और ब्रह्माजी के कहे अनुसार को वर्णन किया है, और पाप से युक्त जीवों का वर्णन यथावत् ब्रह्माजी के कहे हुये मैंने हे शिवे ! तुमसे वर्णन किया है। जो मनुष्य अपने चारों वर्णों के मनुष्य वर्णधर्म से चलेंगे वे उत्तम सुख को ही भोगेंगे। हे पार्वति ! ब्रह्माजी के कहे हुये वाक्य अन्यथा नहीं होंगे।

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे पितृकल्पोत्तरे सनत्कुमारमार्कण्डेयप्रश्ने नारदाम्बरीषप्रत्युत्तरकर्मविपाकसंहितायां प्रायश्चित्तकथनं समाप्तम्।

इति शिवम्।

——:o:——

तेजकुमार भार्गव द्वारा तेजकुमार प्रेस (प्रा०) लिमिटेड, लखनऊ में मुद्रित।